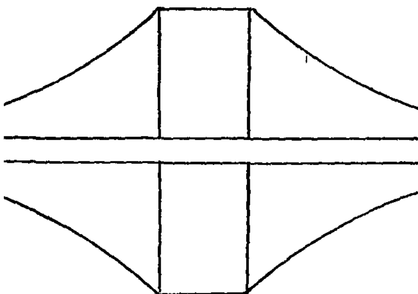
# वन्देमातरम्



सम्पादन

विवेकी राय

# आमुख

राजस्थान के शिक्षक सहि[illegible] का-
कार प्रकाशित कर आज के [illegible] मत
खुशी है।

[illegible] अध्यापक-वर्ग स्वाध्याय और
[illegible] एवं संवर्धन में साधक की भांति
[illegible] तशील धारा के साथ नित नये
[illegible] —वस्तु, शिल्प एवं अभिव्यक्ति
के स्तरों पर।

जिस तरह से अतीत में शिक्षक साहित्यकारों ने साहित्य की श्रीवृद्धि में योगदान दिया था, चाहे काव्य-शास्त्र के सिद्धांतों की रचना का कर्म हो या साहित्यालोचन के मानदण्ड निर्धारण की [illegible] काल के आचार्यों व [illegible] ी छाप अंकित की थी [illegible] नयी कृतियाँ दी थी, [illegible] सकता है कि राज्य के हमारे ये शिक्षक साहित्यकार एक संकल्प के साथ साहित्य सृजन से संपृक्त [illegible] मूल्यांकन करने वाले [illegible]

[illegible] योजना प्रचारित [illegible] आग्रह किया था, वह विगत पन्द्रह वर्षों से अनवरत-अबाध चल रहा है। विभाग की इस योजना की न सिर्फ स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रशंसा हुई है अपितु अन्य राज्यों ने भी [illegible] अपने वहां भी ऐसे प्रयास प्रारंभ किये हैं।

[illegible] हैं:—

(1) [illegible] (कविता) सं. : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना
(2) [illegible] (कहानी) सं. : मन्नू भंडारी
(3) [illegible] (निबंध) सं. : विवेकीराय

## अपनी बात

शिक्षकों में अनुरंजनकारी प्रवृत्ति की प्रधानता है। [illegible]
[illegible] परिवर्तित हो जाता
[illegible] और अन्तर
विरोधों पर करारी चोट करता है। क्या ऐतिहासिक परिवर्तन
[illegible] में तलवार की चोट कलम की चोट के रूप में परि-
[illegible] हो गयी है?

[illegible] इतने विशाल पैमाने पर [illegible] [illegible]

के लिए साहित्य को माध्यम बनाया तो भगवती प्रसाद गौतम ने समाज को। डॉ॰ अजय [illegible] भ्रष्टाचार, अत्याचार की प्रवृत्ति का [illegible] भी नए शिल्प में नेताओं की [illegible] में आहत नहीं होने दिया गया है। रामदेव शर्मा की व्यंग्य-रचना पढ़कर नागेन्द्र की याद आ जाती है। मालचीर [illegible] हाथों से 'सड़क के गड्ढे' भी [illegible] बन गये। अर्जुन 'अरविंद' की रचना 'दुर्घटना' में व्यंग्य से अधिक हास्य है। बहुत-सुखद है इन रचनाओं के बीच से गुजरना।

दुःख यह है कि संकलित उक्त रचनाओं से निकली अच्छी—स्तरीय व्यंग्य रचनाओं को अस्वीकृत के खाते में डालना पड़ा। मेरे मन में इन अस्वीकृतों के लिए बेहद उलझन का भाव है। अखिलेश्वर, अर्जुन कावड़िया, कजोड़ीमल सैनी, नेनाराम ठाक, अजीज अंसारी, रमेश चन्द्र भट्ट चन्द्रेश, सागरमल शाह और माणकचन्द्र कमल आदि की रचनाओं में मार्मिक व्यंग्य मिला। संकलन की पृष्ठ संख्या सम्बन्धी सीमा के दबाव से जिन रचनाकारों को स्थान नहीं मिला है उनकी रचनाएं हीन हैं, ऐसी बात नहीं है। अधिकांश ने पूर्ण मनोयोग से इस सर्जनात्मक समारोह में आत्मदान किया है और वह सब पर्याप्त ध्यानाकर्षक है। मुझे तो चन्द्रमा की हर कला सुखकारी लगती है। किसे सुन्दर कहूँ और किसे असुन्दर? कुछ ऐसी ही स्थिति विचार, भाव, कल्पना, शिल्प और सौन्दर्य समन्वित गद्य-विधा की विविध रचनाओं की है। कौन रचना श्रेष्ठ है, यह मैं कहना कठिन है। को बड़ छोट कहत अपराधू। फिर भी अपराध करना ही पड़ा। सबसे बड़ा अस्वीकृति अपराध एकांकीकारों की भारी भीड़ के साथ हुआ।

इनमें [illegible] की एकांकी रचना 'इज्जत का सवाल' में मंचीय गुण पर्याप्त मात्रा में है। नन्दलाल शर्मा और सुरेन्द्र अंचल में रचना धर्मी उत्साह प्रशंसनीय है। भगवती लाल शर्मा, दिलीप सिंह चौहान, बैन राम शर्मा, गुलाब चन्द्र निर्वाण, अमोलक चन्द्र जांगिड़, सत्यपाल सिंह, प्रकाश नारायण तनिक, कुंदन सिंह सजल, जवाहर लाल रावत प्रेम भट-

तागर, त्रिलोक गोयल, रतनकुमार, मलानिया, ओम

अपनी विनोद-वृत्ति के प्रकाशन के लिए अन्य रचनात्मक माध्यमों की तलाश करनी चाहिए। मोहे हास्य-व्यंग्य के

विधाओं में भी शक्ति

सिंह की फन्तासी

और स्पष्टता का

साथ ही मजे

नी

उनमें रचना-धर्मिता

वत, आर. एस. नागदा

म सुदामा की रचनायें

ती। इनके अतिरिक्त

मिला, उनमें

धनंजय वर्मा, कैलाश साधक, वेनवीर सिंह करुण, रुद्र लाल अमेटा, ओम जैवलिया, गौरी शंकर आर्य, कन्हैया लाल

लाल

आलर का रचनाधर्मी साहित्यकार अभी इतना जीवन्त है।

सम्पादन करते समय पाण्डुलिपि को विशाल

जिसे राजनीतिक जीवन की अविश्वसनीयता को उभार कर रख देता है और पाठकीय चित्त को दूर तक आन्दोलित करता है। यही स्थिति [illegible] दिखाई देती है। इस काल्पनिक रचना में मुनीम बाबू ने 'चुनावशील रगों' का [illegible] प्रयोग किया गया है। दूसरा 'ऐतिहासिक' निबन्ध मास्टर [illegible] का है। इनकी व्यंग्यशील छन्द रेखाओं से जो [illegible] चित्र बनते हैं वह पूरा नहीं, मुस्कुरा कर [illegible] कर देता है। चतुर्वेदी जी स्वयं कवि भी हैं और वे जो कुछ कहना चाहते हैं बहुत सहज ढंग से कहते चले जाते हैं। कुछ ऐसे ही कलम के धनी [illegible] हैं। इनमें 'अपने अन्दर' और हर देखने की साहसिकता है। ऐसे साहस के लिए ललित निबन्ध-जैसी विधा बहुत उपयुक्त होती है। जब भी निबन्ध [illegible] कहानीपन से हटते हैं तो आगत होकर [illegible] चिन्तन की ओर मुड़ जाता है। संकलन में सीधे विषयनिष्ठ निबन्धों की, जिनमें सीधे-सीधे विचार और चिन्तन के आदान-प्रदान की प्रक्रिया चलती है, कमी नहीं है।

'राष्ट्रीय चेतना : हमारा दायित्व' में सम-सामयिक राष्ट्रीय समस्याओं, विशेषकर साम्प्रदायिकता की समस्या को दायित्व-बोध के संदर्भ में ईमानदारी से विश्लेषित किया गया है। विषयनिष्ठ निबन्धों में यह लेखकीय ईमानदारी ही वह मूल्य होता है जो पाठकीय चित्त को छूता है। इसी मूल्य के चलते 'श्रम देवी की पूजा' शीर्षक निबन्ध में गहरी प्रेरणा और छटपटाहट आ गयी है, और 'नर नारी में भेद क्यों?' का सतर्क विश्लेषण, हमें प्रभावित करता है। 'स्कूलों को समाज से बचाइये' शीर्षक व्यावहारिक रचना में कुछ मौलिक प्रश्न उठा कर शिक्षा शास्त्रीय स्थापनाएँ प्रस्तुत की गयी हैं। सीताराम स्वामी ने जो प्रश्न यहाँ उठाया है वह एक चुनौती है तथा जिन मुद्दों को सामने रखा है वे हमारी अस्तित्व की लड़ाई से सम्बन्धित हैं। क्या सचमुच हम आँखें बन्द कर देखते रहेंगे और हमारी भावी पीढ़ी विद्यालयों से ऐसे ही शत-प्रतिशत खोखली होकर निकलती रहेगी? राजस्थान के निबन्ध साहित्यकार अपनी सम्पूर्ण परम्पराओं और अपने सांस्कृतिक परिवेश के बीच चुनौतियों को स्वीकार करें, यही न्याय है।

है। उनमे किसी आस्थावादी अतीत मे फेंक कर लेखक जैसे वर्तमान के लिए कोई निर्णय लेने के मौके दे रहे है। वास्तव मे ऐसे मौके बहुत काम के सिद्ध होते हैं।...इस मौके पर यह मौके की बात सक्षेप मे उठाकर मैं अपनी बात समाप्त करना चाहता हूँ। स्वय भी शिक्षक होने के नाते एक इच्छा अपने बन्धुओं को रचना के अन्तर्गत भाषा और शिल्प सम्बन्धी कुछ सावधानियों के सम्बन्ध में 'शिक्षा' देने की जोर मार रही है परन्तु मैं सावधान हूँ। मात्र शिक्षा से होता क्या है? सामने रचनात्मक आदर्श होना चाहिए।

धन्यवाद है उस राजस्थान सरकार को जिसने विगत डेढ़ दशक से रचनात्मक आदर्श का एक अद्वितीय, मानक, निष्ठावान और सार्थक शुभारंभ किया है। प्रतिवर्ष शिक्षक दिवस पर सृजनशील शिक्षक साहित्यकारों की कृतियों के पांच-पांच सकलनों का प्रकाशन और आज के माहौल मे सरकारी स्तर पर इस प्रकार साहित्यिक प्रवृत्तियो को प्रोत्साहन प्रदान करने का आदर्श वास्तव मे चमत्कारी है। इस प्रयास की सफलता का ही यह परिणाम है कि सामान्य शिक्षक वर्ग के भीतर से इतनी भारी सख्या में इतने अच्छे रचनाकारो की कतारें उग आयी। निस्सन्देह पूरे देश के साहित्य प्रेमियों के लिए यह बहुत उत्साहवर्धक सदर्भ है।

— विवेकी राय

बड़ी बाग, गाजीपुर, उ० प्र०,
(233009)

# अनुक्रम

## हास्य-व्यंग्य



## वैचारिक



## सांस्कृतिक



## शोध-समीक्षा

## रेखाचित्र



## एकांकी



## विविध

# एक जन-नेता से अंतरंग बातचीत

□ भगवती लाल व्यास

आजकल नेता लोग बड़ी मुश्किल से पकड मे आते है। और अगर नेता के आगे 'जन' विशेषण लग गया तो समझिए उसकी कीमत बिहारी की नायिका की तरह अनगिनत गुना बढ़ जाती है। 'तियलिलार की वेंदी' की तरह इस 'जन' शब्द की महिमा अपरम्पार है। 'तत्र' अपने आपमे बहुत सामान्य शब्द है किन्तु इसके आगे 'जन' जुड़ते ही इसकी सत्ता सार्वभौमिक और सार्वकालिक हो जाती है। इसी प्रकार 'संख्या', 'आदेश', 'आक्रोश', 'सहयोग', 'भावना', 'क्राति' जैसे शब्दों के साथ 'जन' जोड़ते चलिए और चमत्कार भुगतिए। 'जन-गणना' का महत्त्व पिछले दिनों नजर आया था। ठीक इसी तरह 'नेता' की तुलना मे 'जन-नेता' अधिक चमत्कारमय है सो हमने एक शुभ घड़ी मे संकल्प किया कि किसी जन-नेता से बातचीत कर ही ली जाय।

जब हम जन-नेता के निवास पर पहुचे तो फाटक के सामने ही सार्वजनिक नल पर दातौन करते मिल गए। हमने बातचीत बाकायदा 'इन्टरव्यू स्टाइल' मे शुरू की।

'आपका शुभ नाम ?'

'नाम में क्या रखा है ? कोई भी नाम सोच लीजिए जो आप को पावरफुल लगे। असल चीज तो काम है। जिस नाम से काम निकले, वही सच्चा। बाकी सब कच्चा।'

'अच्छा 'काम' सही। आप क्या करते हैं ?'

'हम कोई एक काम तो करते नही कि झट बता दें, फलां काम करते हैं। आप देख ही रहे है अभी हम दातौन कर रहे थे अब आपसे बातचीत कर रहे हैं। सुविधा के लिए यही मान लीजिए हम आप जैसे लोगों को इन्टरव्यू देने का काम करते है।'

'आपने पिछला इन्टरव्यू कब दिया था ?'

'दातोन करने से पहले—यू कहिए यही कोई आठ मिनट चौवन सैकण्ड हले।'

'यह किस पत्र के लिए था ?'

'कोई विदेशी पत्र था। नाम जान कर क्या करेंगे ? यहा तो वह पत्र आता भी नही।'

'आप देश के भविष्य के बारे मे क्या सोचते है ?'

'मैं देश के भविष्य के बारे मे 1947 से पहले सोचा करता था क्योंकि उस समय सोचने वाले पराये थे। न जाने क्या उलटा-सीधा सोच लें। जब से सोचने वाले अपने ही लोग हो गए है तो हर आदमी सोचने की गुलामी मे क्यो बधा रहे ?'

'मैं आपका मतलब नही समझा। थोड़ा स्पष्ट करेंगे ?'

'अरे भाई, इसमे समझने-समझाने की बात ही नही है। अगर सोच का स्तर राष्ट्रीय है तो हमारी लोकसभा सोचेगी, अगर प्रादेशिक सोच है तो विधान सभा है ही। अगर ग्रामीण सोच है तो ग्राम पचायत और नगरीय सोच तो नगर पालिका सोच लिया करेगी। हाँ, व्यक्तिगत सोच के मैं खिलाफ हूं। मेरी मान्यता है कि व्यक्तिगत सोच होता ही नहीं, 'चिन्ता' होती है और आप तो जानते ही है चिन्ता चिता के समान होती है।'

'नही, मेरा मतलब था…'

नेता जी ने मेरे वाक्य को बीच मे ही काट कर कहा—'हा-हा मैं आपका मतलब समझ गया। आपका मतलब है जिन लोगों पर सोच की जिम्मेदारी है, वे ठीक से नही सोच रहे हैं। मैं आपसे पूर्ण सहमत नही होते हुए भी मुख्य मत्री जी को फोन कर दूगा कि मोहल्ला और सड़क स्तर पर कुछ सोच समितियां बना दें।'

'वर्तमान राजनीति के बारे मे आपके क्या विचार है ?'

'देखिए, राजनीति बड़ी गदी चीज है। अच्छे नागरिकों को इसमे नहीं पड़ना चाहिए। मैं बहुत जल्दी सार्वजनिक स्थानों पर तख्तियां लगवा दूगा—राजनीति स्वास्थ्य के लिए घातक है।'

'फिर भी लोग राजनीति की चर्चा तो करेंगे।'

'वे रोक करें। मेरा उत्तरदायित्व तख्ती लगवाने भर का है।'

'फिर तो कानून और व्यवस्था जैसी चीज की कोई जरूरत नहीं रह जाएगी ?'

'मुझे आपके सामान्य ज्ञान पर आपत्ति है। क्षमा करें, आपने ये शब्द शायद कहीं पढ़-सुन लिए हैं। वस्तुतः इनका सही अर्थ नहीं जानते। भाई, कानून और व्यवस्था समय, स्थान और व्यक्ति सापेक्ष चीजें हैं। समय, स्थान और व्यक्ति स्वय अपने कानून और व्यवस्था का निर्माण करते है। मेरा मतलब है एक ही व्यवस्था और एक ही कानून सब स्थानों, सब कालों और सब व्यक्तियों पर लागू नहीं किए जा सकते। इन चीजो को सार्वकालिक बनाने से व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर आंच आती है जो प्रजातन्त्र के बुनियादी सिद्धान्तों के खिलाफ है।'

'क्या आपका प्रजातन्त्र मे विश्वास है?'

'आपका सवाल बड़ा बोदा है। कोई अगर पूछे, क्या आपका अपनी पत्नी मे विश्वास है? इस सवाल के जवाब में कौन मर्द होगा जो यह कहेगा कि मुझे अपनी पत्नी मे विश्वास नही है। मगर विश्वास कितना है, यह हर मर्द जानता है। दरअसल विश्वास-अविश्वास व्यक्ति का निजी मामला है। मैं इसमे दूसरों की दखलंदाजी बर्दाश्त नही करता। फिर भी आपने पूछ लिया है तो कहूंगा कि मेरा हर तन्त्र-मंत्र-यंत्र, गण्डा-तावीज, ज्योतिष-वोतिस सबमें विश्वास है। विश्वास बडी चीज है। बाकी सब तो माध्यम हैं। विश्वास से देश तरक्की करता है।'

'अब तक विश्वास से देश की क्या तरक्की हुई है?'

'यही तो रोना है। देश अगर तरक्की नही कर रहा है तो आप जैसे शकालु लोगों के कारण। हमारे हर अच्छे काम मे आपको गोलमाल दिखाई देता है। हम देश की तरक्की के लिए नेतृत्व को योग्य हाथो मे सौंपना चाहते है। आपको वह कुर्सी की लडाई लगती है। जब-जब जनता हममे विश्वास प्रकट करने लगती है आप पत्रकार लोग उसे बरगलाते है। मैं कहता हू भाई, कुछ रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाओ।'

'रचनात्मक दृष्टिकोण से आपका क्या आशय है?'

'लगता है पत्रकारिता के पेशे मे नये-नये आए हो। रचनात्मक कार्यक्रमो तक की जानकारी नही है। उद्घाटन, अभिनन्दन, भाषण, नेता को सिक्को से तौलना, फूलो से लादना, फोटो खीचना, फोटो खिचवाना, उन्हे छापना और छपवाना ये सब रचनात्मक कार्यक्रम हैं। इससे जनमानस मे अपने नेता के प्रति सम्मान-भाव बढ़ता है। सम्मान से आत्म-सम्मान का विकास होता है। आत्म-सम्मान के लिए हमारे देश का नागरिक प्राणों की बाजी लगा देता है। हम

इस महान् देश की महान् परम्परा है। कृपया इसे विकृत न होने दें। आत्म-सम्मान के अभाव में देश खोखला हो जाता है।'

'मगर आज आदमी की मूल समस्या रोटी है, आत्म-सम्मान नहीं।'

'रोटी आदमी की मूल समस्या कभी नहीं रही और न आज है। आदमी ही रोटी के लिए हमेशा एक समस्या रहा है। अगर थोड़ी-बहुत समस्या रही भी होगी तो दूर हो जाएगी। इस वर्ष शीतकालीन वर्षा से फसल बहुत अच्छी होगी।'

'और अन्त में चलते-चलते एक प्रश्न और करलूं—जनता के लिए आपका क्या सन्देश है?'

'जनता को अजन्ता की मूर्तियों से प्रेरणा लेनी चाहिए। मूर्तिवत् सब देख कर भी नहीं देखना चाहिए, सुनकर भी नहीं सुनना चाहिए, बोल कर भी नहीं बोलना चाहिए।'

□

# कहाँ ढूँढ़ें रस को ?

❑ जगदीश प्रसाद सैनी

आजकल साहित्य और जीवन से रस उसी प्रकार गायब हो गया है जिस प्रकार गंजे के सिर से बाल गायब हो जाते है। साहित्य तो जीवन का ही प्रतिबिम्ब है, अतः जब जीवन मे ही रस-स्रोत सूख गया तो फिर साहित्य मे वह क्या खाक दिखायी पड़ेगा ? क्या कोई सूर्पनखा-मार्का स्त्री दर्पण में उर्वशी दिखायी दे सकती है ? रस का स्रोत तो हमारे मन के स्थाई भाव है। बाह्य परिस्थितियां इन भावों को जागृत कर रस रूप मे परिणत करती है। लेकिन जब हमारा मन इतना पत्थर हो जाये कि बाह्य परिस्थितियां उसमे कोई भाव उपजा ही नही सकें तो फिर रस के लिए जगह ही कहा रह जाती है ? आपने 'पिटोकड़ा' घोड़ा देखा होगा। तांगे वाला उसकी पीठ को सपासप धुनता रहता है और घोड़ा है कि अपनी चाल तेज करने का नाम ही नही लेता। बस, कोड़े की मार के साथ थोड़ी-सी चमड़ी को कपा भर लेता है और उसी तरह घिसटता रहता है। कोड़ों की मार उसके लिए बेअसर हो जाती है। वह मार उसकी आदत में शुमार-हो जाती है। मुझे लगता है कि आजकल आदमी का दिल भी उस पिटोकड़े घोड़े की तरह ही हो गया है। परिस्थिति की मार उसे प्रभावित ही नही करती। गहरे से गहरा हादसा भी उसे रंच मात्र उद्वेलित नही कर पाता। सब कुछ निरावेग रूप से सह जाने की उसकी आदत पड़ गयी है। अतः न उसे अत्याचार होते देख क्रोध आता है, न किसी को पीड़ित देख करुणा आती है और न ही कुत्सिततम कृत्य को होता देख कर उसके मन मे घृणा उत्पन्न होती है। वास्तविक जीवन की परिस्थितियों से निरुद्वेलित रहने का मानव मन इतना आदी हो गया है कि अब उन्ही या उन जैसी परिस्थितियो का चित्रण वह साहित्य मे पढ़ता है तो वहा भी वह तटस्थ बना रह जाता है। परिस्थितियों का चित्रण उसमें कोई भाव जागृत कर उसे रस मग्न

कर पाने में असमर्थ हो जाता है। इसी विवेचन के संदर्भ में हम आज की परिस्थितियों में विभिन्न रसों की स्थिति का जायजा लेना चाहेंगे।

पहले रस राज शृंगार की ही तलाश करें। स्कूल-कालिजों की मद-निशा, फिल्मी ग्लैमर के जादू, फैशन-परस्ती के फलस्वरूप नित्य-प्रति बढ़ती हुई नटक-मटक तथा क्लब और कैबरे की आयातित संस्कृति के कारण कहने को जीवन शृंगारमय हो गया है लेकिन उसकी 'उत्तम प्रकृति' कहीं उद्दाम वासना की आंधी में उड़कर, कहीं झूठे प्यार के छलावे की भूलभुलैया में भटक कर, कहीं दहेज की यज्ञाग्नि की लपटों में झुलस कर और कहीं अपहरण-बलात्कार की गन्दी नालियों में डूब कर नष्ट हो गयी है। ऐसी परिस्थितियों के बीच शृंगार रस को ढूंढ़ना चील के घोंसले में मांस ढूंढ़ना होगा।

हास्य रस की सरसता को बढ़ती हुई गरीबी, भुखमरी, बेकारी और महंगाई चाट गयी है। बढ़ती हुई आवश्यकता और घटती हुई पूर्ति की वास्तविकता ने मनुष्य को परिवार नियोजन के फंदे से वात्सल्य रस का निर्ममता से गला घोंट डालने के लिए मजबूर कर दिया है। विज्ञान के बढ़ते प्रभाव के साथ ही साथ ब्रह्मचारी की खोल में दुबके हुए व्यभिचारियों ने, धर्म के नाम पर इंसान को इंसान के खून की होली खेलने के लिए उकसाने वाले मठाधीशों ने तथा ईश्वर के नाम पर अपने घृणित स्वार्थों की पूर्ति करने वाले धर्म-ध्वजी पोंगे पुरोहितों ने लोगों की ईश्वर के प्रति आस्था खत्म करके शांत रस की हत्या कर दी है।

जहां एक ओर सभी प्रकार के मोह-बन्धनों को निर्दयता से काट कर, सिर पर कफन बांध राष्ट्र निर्माण के यज्ञ की धू-धू जलती आग में कूद पड़ने के 'उत्साह' का स्थान येन-केन प्रकारेण कुर्सी हथियाने की घिनौनी व्यावसायिक राजनीति ने ले लिया है, वहां दूसरी ओर अव्यवस्था, और कुव्यवस्था, अनाचार और भ्रष्टाचार, अन्याय और अत्याचार को अपनी अग्नि में भस्म कर देने वाले सात्विक 'क्रोध' का स्थान स्वार्थ प्रेरित व कायरतापूर्ण कमीनी चाटुकारिता ने ले लिया है। ऐसी अवस्था में वीर और रौद्र रस को कहां ढूंढा जा सकता है? जहां हर प्रकार के चोर, लुटेरे, हत्यारे, बलात्कारी, भ्रष्टाचारी, रिश्वतखोर, जमाखोर आदि असामाजिक तत्त्व निर्भय होकर अपनी-अपनी कारगुजारियाँ दिखाने के लिए स्वतन्त्र हो वहां भयानक रस खोजने का प्रयास मरुस्थल में जल ढूंढने के समान ही होगा।

सबसे ज्यादा मिट्टीपलीद तो अद्भुत रस की हुई है। नित्य नये वैज्ञानिक आविष्कारों ने 'आश्चर्य' के लिए कोई जगह ही नहीं छोड़ी। पुराने

कवि जिन अलौकिक घटनाओं के माध्यम से आश्चर्य का सृजन करते थे, वे आज के वैज्ञानिकयुगीन मानव के लिए बेअसर हो गयी। वैज्ञानिक आविष्कारों की बात छोड़ भी दी जाये तो भी नित्य-प्रति के जीवन में भी आदमी-इतना 'आश्चर्य-प्रूफ' हो गया है कि चाहे कुछ भी अघटित घट जाए, उसे कोई आश्चर्य नही होगा। कुर्सी के लिए घिनौने समझौते किए जा सकते है, एक ही व्यक्ति हमेशा मत्री रह सकता है चाहे सरकार किसी भी दल की हो, गुण्डे सरेआम पति को चाकू दिखाकर उसके सामने ही पत्नी के साथ बलात्कार कर फरार हो सकते है और पुलिस मक्खी मारती रह सकती है, दहेज के लिए दुल्हे के विवाह की वेदी से उठ कर लापता हो जाने पर दुल्हन तिमजले से छलाग लगा सकती है, पुलिस द्वारा डाके डाले जा सकते है, हरिजनो को जिन्दा जलाया जा सकता है, स्त्रियों को सड़को पर नगा घुमाया जा सकता है, चीनी अठारह रुपये किलो बिक सकती है, विचाराधीन कैदियो की आँखे फोड़ी जा सकती है, मतलब यह है कि कुछ भी हो सकता है लेकिन ये या ऐसी ही अन्य घटनायें किसी को चौकाती नही। बड़ी आसानी से आज का आदमी इन घटनाओं को जान कर बिना कोई प्रतिक्रिया जाहिर किए, अपने धधे मे व्यस्त हो जाता है। कुछ भी ऐसा नही रहा जो उसे हक्का-बक्का रह जाने के लिए विवश कर दे। सभी कुछ सहज स्वीकार्य हो गया है। ऐसी स्थिति मे अद्भुत रस के लिए जगह कहा रह जाती है ?

यही बात वीभत्स रस के बारे मे कही जा सकती है। हमारे नाक गन्दगी को सूघने के, हमारी आँखें गन्दगी को देखने की और हमारे कान गन्दगी को सुनने के इतने आदी हो गये है कि अब हमे कुछ भी गदा नही लगता, कुछ भी घृणित प्रतीत नहीं होता। इतना ही नहीं, स्थिति यहाँ तक पहुँच गयी है कि हम गन्दगी से घृणा करना छोड़ उसमे रस लेने लग गये है। चोरी, डकैती, हत्या, बलात्कार जैसी सामाजिक गदगी की खबरो को शहद की तरह चाव से चाटते है। कहीं फसाद हो जाता है तो दर्शकों की उत्सुक भीड़ आंखो मे चमक लिए आ जुटती है। आज का आदमी सैक्स और अपराध से सम्बन्धित कुत्सित साहित्य, कामुक फिल्मो, अश्लील कैबरे एवं भौडे व बेतुके फिल्मी गीतो पर किस कदर दीवाना हो रहा है, यह किसी से छिपा नही है। इस जुगुप्सा-प्रेम के वातावरण मे वीभत्स रस की कल्पना ही नही की जा सकती।

रही बात करुण रस की, सो उसके बारे मे इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि आजकल लोगो के कलेजे पत्थर के हो गये हैं जो किसी के भी दु.ख-दर्द से पिघलना नही जानते। कही कोई दु खद घटना या दुर्घटना होने पर लोगों की

भीड उमडती जरूर है पर उनकी आँखो मे सवेदना के आँसू न होकर तमाश-बीनी कुतूहल की चमक ही रहती है। ऐसे मौकों पर लोगों की क्रूर मनोवृत्ति दूसरे के दुःख-दर्द को मनोरजन का साधन बना कर ही तृप्त नही हो जाती बल्कि उनकी स्वार्थ प्रेरित गिद्ध-दृष्टि किसी लहूलुहान लाश की फटी जेब में अटके पर्स पर, किसी कट कर छितर गयी कलाई मे बंधी घड़ी पर या किसी कुचली गर्दन मे अटकी चैन पर टिकी मौके की तलाश भी करती रहती है। स्थिति के यहाँ तक पहुच जाने के बावजूद भी यदि कोई किसी से दूसरे के दुःख-दर्द मे आँसू बहाने की आशा करता है, तो उसे मेरा यह विनम्र सुझाव है कि मानवता की इस दर्दनाक मौत पर वह स्वयं ही जी भर कर रो ले।

अत. यह मान लेने मे कोई असगति नही होगी कि आज का जीवन रसोद्रेक की परम्परागत स्थितियों के अनुकूल नही रहा है। आचार्यों ने रस का सम्बन्ध औचित्य और उत्तम प्रकृति के साथ जोडा है, लेकिन हमारे आज के जीवन में औचित्य-विचार बिलकुल गायब हो गया है। प्रकृति की उत्तमता को घास नही डालता। लोग औचित्य के स्थान पर अनौचित्य मे उत्तमता के स्थान पर निकृष्टता से और सगति के स्थान पर विसगतियों से रस ग्रहण करने लगे है। इसके एक नहीं, अनेक उदाहरण नित्य प्रति के जीवन मे देखे जा सकते है, जैसे बाबा लोगों को भक्ति के स्थान पर भाग, गाजा और चरस मे रस मिलता है तो भक्तों को मदिर मे भगवान के स्थान पर पूजा के लिए आने वाली नयी नवेलियो के दरस-परस मे रस आता है। कबाड़ी को नये माल की जगह रद्दी मे रस मिलता है तो नेताजी को देश की सेवा की जगह कुर्सी की गुलगुली गद्दी से रस मिलता है। इसी प्रकार आमदनी वाले को करो की चोरी मे, अफसर को घूंसखोरी मे, नशेबाज को दारूखोरी मे, निठल्ले को जूआखोरी मे, शहरी मजनू को गाँव की गोरी मे और ब्लेक मार्केटियर को चीनी की बोरी मे रस मिलता है। इतना ही नही, वकीलों को मुकदमेबाजी मे, दलालों को सौदेबाजी मे, बाबुओं को अड़ंगेबाजी मे, अध्यापको को ट्यूशनबाजी मे, विद्यार्थियों को नकलबाजी मे, चमचों को मक्खनबाजी मे, पत्नियों को नाराजी मे, और दोस्तो को जालसाजी मे रस आता है। जिस प्रकार कुत्तो को भौकने और गधो को रेंकने मे रस मिलता है उसी प्रकार छात्रो को विद्यालयो और मोटर-रेलो के शीशे-खिडकियो पर पत्थर फैंकने मे ही रस मिलता है। जैसे कलियों को चटकने और रूपकलियो को मटकने मे रस मिलता है वैसे ही हराम की खाने वालों को पराया माल गटकने मे रस मिलता है। आजाद देश के नवयुवको को पढ़-लिख कर बेकार भटकने मे रस मिलता है तो आजाद देश की रेलो और बसों को ही नहीं, ऋण,

राहत और राशन के साथ-साथ ही समाजवाद को भी रास्ते मे अटकने मे रस मिलता है। दलाल चोरी का माल बिका कर रस लेते है तो ब्रह्मचारी हमी-नाओं को योग सिखा कर रस लेते है। लडकियो के बाप अपनी बिटियाओ के लिए नामी घराना ढूंढ़ने में रस लेते है जबकि नामी घरानों के बाप अपने शाह-जादों की सरेआम नीलामी करने मे रस लेते है। खैर, तो कहने का आशय यह कि रस का और औचित्य का नाता टूट गया है। अब तो स्थिति जितनी अनौचित्यपूर्ण होती है, लोगों को उतना ही रस आता है।

आचार्यों का मानना है कि जहाँ अनौचित्य आ जाता है वहाँ रस भग होने लगता है। किन्तु आज के जीवन मे स्थिति इसके विपरीत दिखायी देती है। अनौचित्य और विसगतियो की बजाय औचित्य और सगति रस-भग का कारण बन जाती है। उदाहरणार्थ, उपभोक्ता वस्तुओ की उपलब्धि ठीक होते ही ब्लेक मार्केटियरों का रस भंग होने लगता है, बीमारों की सख्या कम होते ही डाक्टरों के चेहरे की चमक कम होने लगती है, लडाई-झगडे और सिरफुटौवल मे कमी आते ही वकीलो मे नीरसता व्यापने लगती है, चोरी-जुवारी की वारदातो मे कमी आते ही पुलिस वालों का दम घुटने लगता है, भावों मे गिरावट आने के साथ ही व्यापारी का रक्तचाप ऊचा होने लगता है। जिस वर्ष रिश्वत का बाजार नर्म पड़ जाता है, उस वर्ष की सर्दियों में कईयों के घर गर्म कपड़े नही बन पाते, जिस वर्ष अकाल नही पड़ता, जिस वर्ष बाढ नही आती उस वर्ष कइयों के बीवी बच्चों को हवाई जहाज से चित्ताकर्षक दृश्य न देख पाने के कारण मन मसोस कर रह जाना पड़ता है, देश की स्थिति मे सुधार आते ही विरोधी दलों की स्थिति मे बिगाड़ आने लगता है। मतलब यह कि आज जैसे रस का सम्बन्ध अनौचित्य से जुड़ गया है वैसे ही औचित्य के साथ रस भग का सम्बन्ध जुड़ गया है।

आप कह सकते है कि मै काव्य के रस के फार्मूले को वास्तविक जिन्दगी मे घसीट लाया हूँ, इसी कारण ये विसगतियाँ नजर आती है। ठीक है, आप ऐसा कह कर मेरी तुच्छ बुद्धि पर तरस खाकर रस लेने के लिए स्वतन्त्र है, लेकिन मेरा निवेदन है कि काव्य या साहित्य से रस ग्रहण करने की मानसिकता वास्तविक जिन्दगी के अनुभवो से ही तो उपजती होगी। शरीर जब अपनी चेतना ही खो दे तब चाहे उसमें सुई चुभोवो या तलवार घुसेड़ो, दर्द तो होने से रहा। आज के मानव के हृदय ने जब अपना उद्वेलन ही खो दिया है तब न उसे वास्तविक जीवन की घटनायें प्रभावित कर सकती है और न हीकाव्य-साहित्य में चित्रित जीवन स्थितियाँ ही। ऐसी स्थिति से रस को कहाँ ढूढ़ें? □

# मौत एक बकरे की

☐ भगवती प्रसाद गौतम

पैसेंजर ट्रेन के भीड भरे कपार्टमेंट से नीचे उतरते ही मैंने जी भरकर सास ली और गेट की तरफ बढ़ गया। ड्यूटी पर खड़े टिकट बटोरते सज्जन से आखो ही आखो मे दुआ-सलाम की रस्म अदाई के बाद अपनी जेब से एक अदद तुडा-मुडा टिकट निकालकर बढाया तो उन्होने बड़ी उदासी के साथ उसे अपनी गड्डी मे मिला लिया।

मन ही मन बीवी-बच्चों के बारे मे सोचता हुआ मै प्लेट-फार्म के बाहर निकला तो वातावरण मे अजीब-सी खामोशी का अहसास हुआ। मार्केट से गुजरते हुए लगा जैसे बहुत कुछ बदल गया है। दरअसल यहाँ से गया था तो बात कुछ और थी, जब लौटा तो कुछ और······

लोग बेझिझक इधर से उधर आ-जा रहे थे। भक्त महिलाएं सहज ढग से मदिर की ओर प्रस्थान कर रही थी। नन्हे बच्चों के हाथों मे फल-फूल सुरक्षित थे। रामजी बा दूकान के बाहर बैठे चैन से अखबार बाच रहे थे। गेहूँ वाले सेठ जी ने अपनी छडी हमेशा-हमेशा के लिए खूटी पर लटका दी थी। रमकू बुआ ने आगन मे मूग-उड़द की दालें सुखा रखी थी। कुल मिलाकर कही कोई गडबड़ी का समाचार नही था।

अचानक गोपाल भाई दिखे। न जाने किन खयालो मे खोये वे पास से गुजर ही रहे थे कि मैने उनके कधे पर हाथ दे मारा—"किधर ?"

"इधर ही जा रहा हूँ, प्रताप सर्कल तक।" उन्होंने बेमन से जबाव दिया।

"मगर यह कैसा चेहरा बना रखा है आज ?"

"कुछ मत पूछो, भैया। कभी नही सोचा था कि वह इतनी जल्दी मौत की गिरफ्त मे आ जाएगा।"

"मौत ?···किसकी ?"

"अरे, कल्लू बकरे की।"

"कल्लू बकरे की ?" मेरे हाथ से सूटकेस छूट गया।

"हां भैया, ऐसी हस्ती के गुजरने से बस्ती क्या, सारा इलाका ही सूना हो गया है।"

"इसमें कोई शक नहीं, गोपाल भाई। क्या प्यारी चीज थी। भगवान ऐसे बकरे सभी को दे। मगर समय से पहले किसी को न उठाये।"

मेरे लिए संवेदना प्रकट करना जरूरी था। आखिर मैं भी तो बस्ती का एक जागरूक नागरिक था।

वैसे तो दुनिया में हजारों बकरे रोज-रोज मरते हैं और अच्छी से अच्छी नस्ल के बकरे मरते हैं। मगर यह बकरा कुछ और ही किस्म का था। सारी बस्ती का नूर था वह। आखिर वह था भी तो खान नूर मोहम्मद का।

ऊपर वाले की असीम अनुकम्पा से खान साहब के दिन ठीक चल रहे थे। इसलिए बकरे का दबदबा होना स्वाभाविक था। माथे पर उगे हुए तीखे-खड़े सींगों को फ्री-स्टाइल में हिलाता-डुलाता जब वह बाजार से गुजरता था तो लोग अगल-बगल हो जाते थे। उसका रास्ता रोकने का मतलब था एक अनचाही आफत मोल ले लेना।

खैर साहब, बकरा मर गया। (हमेशा-हमेशा के लिए कौन जिंदा रहता है!) पर मरते ही वह भी रातों-रात महान् हो गया। इस धरती पर महान् होना भी जरूरी है। और महान् होने के लिए ढेर सारे प्रशंसकों की भीड़ और भी ज्यादा जरूरी है। हां, तो बकरा महान् हो गया क्योंकि उसके प्रशंसकों की कोई कमी नहीं थी। जनाब, आज के प्रशंसक भी तो तिलों में तेल देखना सीख गये हैं। कल्लू का तेल वैसे भी कम असरदार नहीं हो सकता था क्योंकि उसने खान साहब के आंगन में अवतार लिया था।

जब यह नहीं रहा तो कई तरह की रस्मों का निर्वाह भी जरूरी हो गया। खान साहब की आवाज में दम था, इसलिए यह मौत भी एक महान् दुर्घटना ही मानी जानी चाहिए थी। और ऐसी स्थिति में नगर के बड़े-बड़े धुरंधर अपनी संवेदनाएं प्रकट करने को उतावले हो गये। छोटी-बड़ी सभी संस्थाओं-कार्यालयों की चौखटों पर उद्गार प्रकट करने वालों का तांता-सा लग गया। किसी ने भी उसे 'महान्' से नीचे की श्रेणी प्रदान करने की भूल नहीं की। वास्तव में कितना महान् था वह।

घर पहुंचते ही श्रीमती जी ने रोटी पर फिरते बेलन को रोककर सबसे

पहले यही खबर प्रसारित की—"अभी हाल 'टाउन-हॉल' पहुँचिए। नगर-पालिका के दो-तीन व्यक्ति आये थे। कह रहे थे—कल्लू दुनिया से चल बसा सो······। क्यों जी, कौन था यह कल्लू ?"

मैं तुरत बोल उठा—"तुम नहीं जानती उसे और अगर जानती होती तो नींद में चौंक-चौंक उठती। खैर, नगर पालिका वाले पीछे थोड़े ही रहेंगे। वहां भी धुआंधार आयोजन होगा। कितने ही नेता-अभिनेता इकट्ठे होंगे। इसलिए चेहरे पर उगी इस घास को साफ करके जाना ही ठीक रहेगा।"

मैंने जल्दी-जल्दी अपना व्यक्तित्व सवारा और बाहर निकलकर 'टाउन-हॉल' की तरफ रुख मोड़ दिया।

चौराहे पर नागपाल हायर सेकंडरी स्कूल का जमादार मिल गया। कहने लगा—"सा'ब, बेचारा कल्लू चल बसा। अब गम इस बात का है कि वह मर गया सो मर गया, पर हमारे एक साथी को भी मार गया।"

"क्या मतलब ?" मैंने उत्सुकता जाहिर की।

"मतलब यह कि···" उसने अपनी बात आगे बढ़ाई—"एक चपरासी तो इसी काम पर तैनात किया गया था कि वह कल्लू पर नजर रखे। यदि वह स्कूल में घुस जाये तो उसे टोके नहीं। आजकल बिगड़ैलों से मुंहजोरी करना ठीकनहीं है सो जैसे-तैसे प्यार से पुचकार कर उसे गेट से बाहर कर दे।" आपने तो देखा होगा सा'ब, कैसे आता था वह—एकदम नामी गुंडे की तरह। इधर-उधर ताका-झाकी करते हुए इस बरामदे से उस बरामदे तक मस्तानी चाल से चक्कर काटता था और फिर अपने आप बाहर निकल जाता था। उसके न रहने से एक चपरासी की पोस्ट कम हो गई है। मैनेजमेंट वाले कहते हैं—अब क्या जरूरत है इतने आदमियों की।"

मैंने कहा—"भाई देखो, महान् चीज ऐसी ही होती है। यह तुम्हारे एक साथी को ही नहीं, पूरी की पूरी बस्ती को भी मार दे तो कोई आश्चर्य नहीं।"

मैं फिर आगे बढ़ लिया। सब्जी मंडी भी उदास थी। थड़ों पर बैठे लोग या तो रेजगारी गिन रहे थे या चाय के गिलास सुडक रहे थे। नीचे बैठी मालनियाँ घर-गृहस्थी की बातों में उलझी हुई थी। इक्का-दुक्का आदमी ही कहीं कुछ तुलवा रहा था। फत्ता दा से पूछ लिया—"कैसा चल रहा है ?"

"चल क्या रिया है मालिक, बस समझो कि दिन कटना मुश्किल होइ रिया है। वो था तो मंडी में जान थी। दिखते ही लोग चिल्लाते थे—आ गया, आ गया। सब अपनी-अपनी कामड़ियाँ उठा लेते थे। फिर उसका रुख समझकर

कुछ चीजें सड़क पर फेंक देते थे। यह समझो कि उसे अपना कमीसन मिल जाता था। हमारे यहां की रौनक ही खतम हो गई अब तो।"

"सब कुछ वक्त के हाथ है, फत्ता दा।"

इतना कहकर मैं टाउन-हॉल की सड़क पकड़ना चाहता था कि पशु चिकित्सालय वाले शर्मा जी ने आ पकड़ा। इधर-उधर की बातचीत के बाद यही एक धुन—'बड़ी गजब की नस्ल पायी थी उसने। देखते ही बकरियाँ में-में कर उठती थी। अब स्साली पब्लिक हमें टटोलेगी। खैर, हम भी कह देंगे—कल्लू गया तो क्या हुआ, लल्लू तैयार करो।"

वे हंस पड़े। मैंने भी साथ दिया और हम बिछुड गये।

काफी देर हो गई थी। समय पर यथास्थान पहुंचना चाह रहा था। लेकिन बसंत जलपान गृह में बैठे चकोर भाई ने आवाज लगादी। हम ठहरे एक ही बिरादरी के। वे हैं पत्रकार और मैं हूँ कवि—यानी कि दोनों बुद्धिजीवी। बुद्धिजीवी नाम के व्यक्तियों की पकड़ बड़ी गहरी होती है और उनका हरेक मसला चाय की टेबल पर हल होता है।

उन्होंने चाय का आर्डर मार दिया। मुझे उनका सम्मान रखना पड़ा। फिर ले-दे कर बात आ पहुची उसी मुकाम पर। वे आत्मविश्वास से बोल उठे—"कविराज, अब हमें चुप नही बैठना चाहिए।"

"हां, बिल्कुल नही बैठना चाहिए।" मैंने सहारा लगाया।

"कबीर की तरह नंगे होकर चौराहे पर खड़े हो जाना चाहिए।"

"नही, यह बात तो बहुत पुरानी हो गई। निराला जैसी खोपड़ियों की बात करो।"

"निराला भी वैसे तो आउट-डेटेड ही है। हम इसी दशक की बात क्यों न करें।"

"हा, तो यह हुई न बात! लोगों ने उस समय मेहनतकश लोगों को अपनी रचनाओं मे उठाया। औरतों से पत्थर तुड़वाये (वह तोडती पत्थर!)। हमे अपने ही ढग से औरों को पकडना होगा।"

"तो फिर हम कल्लू बकरे जैसी हस्तियों पर लिखें?"

"हां हां, क्यो नही।...और ऐसा लिखें कि पुराना बिलकुल साफ हो जाये।"

"फिर तो गुरु, हम-तुम धड़ल्ले से चल निकलेंगे।"

"सच? तो फिर हो जाये एक-एक चाय और। फिर हम चलें 'टाउन-हॉल'। आज ही लो—उन सब हाथियों की खाट खड़ी कर देनी है और साबित

कर देना है कि मौत···मौत तो बकरे की भी खूबसूरत हो सकती है बशर्ते···।"

"बशर्ते उसके सच्चे पारखी भी पैदा हों दुनिया में।"

हम दोनो ने एक साथ ठहाका लगा दिया। वहाँ बैठे चाय के प्यालों से जूझते लोगो की निगाहें हमारे चेहरों पर गड़ गईं। अंतरात्मा ने कहा—अब यहाँ से उठ जाना चाहिए।

काउन्टर पर हिसाब चुकता हो जाने के बाद हम चलने को हुए कि जलपान गृह का बूढा बैरा नीचे उतर आया और हमें घूरते हुए बोला—'माफ करना बाबूजी, एक बकरे की मौत पर लोग भाषण झाड़ रहे है। पर ऐसी जबान क्यों चला रहे है वे? महज इसलिए कि वह खान नूर मोहम्मद का बकरा था और खान अभी जिंदा है। उसकी डुगडुगी बज रही है इलाके में। इसलिए यह सब कुछ हो रहा है। जब वह खुद मरेगा न, तब ये ही लोग उसके नाम की धज्जियाँ उड़ाएगे, धज्जियाँ।...समझे?"

मुझे लगा जैसे अभी-अभी एक बटन दबा है और मेरे मन का अंधेरा गायब हो गया है। मुझसे रहा न गया—"चकोर भाई, हमारा लेखन तो इन जैसे फकीरों की सपाट बयानी से ओत-प्रोत होना चाहिए। बंधु 'टाउन-हॉल' को मारो गोली। हम तो घर चलें और कुछ ऐसा करें कि लोग याद रखें।"

उन्होंने मेरी बात पर स्वीकृति की मुहर लगादी और हम आगे बढ गये।



# ढाई अक्षर ब्लेक का

□ भंवरलाल नागदा

ढाई अक्षरों के शब्द की महिमा बडी अपरपार है। जिसका वर्णन आदि काल से वेद, पुराण, उपनिषद् आदि करते आ रहे है। इन शब्दों की आयु बड़ी लम्बी, भाव बडे ऊँचे एव गहरे प्रतीत होते है। इनके प्रादुर्भाव के बारे मे शायद ही किसी को मालूम हो। किन्तु इतना अवश्य है कि आदिकाल मे अर्थात् सृष्टि की रचना से लेकर आज तक जन्म, मृत्यु, रक्त, अस्थि, चर्म, स्वाद, खट्टा, मिट्ठा, भक्ति, शक्ति, धैर्य, शान्ति, हल्का, सख्त, सत्यं, शिवम् व श्रेष्ठं आदि ढाई अक्षरों वाले शब्द मानव जीवन से सांकल की कड़ी की भांति जुडे हुए है। ढाई अक्षरों के शब्द पर कबीर जी ने स्वयं कहा है :

पोथी पढि-पढ़ि जुग मुआ, पडित भया न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पडित होय॥

आप भी सोचेगे कि वह ढाई अक्षरो वाला शब्द कौन-सा है—प्रेम ! जी नही, मगर आपने कह दिया तो इस पर कुछ दृष्टि डाल ही दें। वास्तव में प्रेम के बिना दुनिया मे कुछ भी नही है, और है तो सब कुछ है। आप कहेगे कैसे ?

प्रत्येक की सीमा होती है और सीमा से बाहर हर एक'''। इस पर "बिहारी" ने व्यंग्यात्मक रूप से राजा जयसिंह को चेतावनी दी है

नहिं पराग, नहि मधुर मधु, नहिं विकास इहि काल।
अली कली ही सौं बिंध्यो, आगै कौन हवाल॥

*तो आप कहेगे प्रेम नही तो वह शब्द कौन-सा है ? सट्टा या जूआ ? जी* नही, फिर भी आपने कह दिया तो कुछ दृष्टि इस पर भी डाल दें। आपकी तो तारीफ बडी ऊँची है, आप हजारों घरो को वर्बाद कर देते हैं। यानी हजारों को मिटाकर आप एक घर आबाद करते है, वो भी भाग्य दुरस्त हो तब ? ढाई अक्षरो की बदौलत शायद ही कोई घर बसा हो। विपरीत, कई बार इस शब्द से बरबादियों की ज्वाला में झुलसते देखा है मैंने इसान को। उदाहरणार्थ

आदिकाल में युधिष्ठिर दुर्योधन से सट्टे (जुआ) में राज-पाट, धन-दौलत आदि सब कुछ हार गया तो अन्ततोगत्वा उसने अपनी भार्या द्रौपदी को भी दाँव में लगा दिया। यह प्राचीन का प्रत्यक्ष प्रमाण है। आधुनिक कलयुग ही द्रौपदी को दाँव पर लगाने की खबरें आजकल अखबारी सुर्खियों को आम बात हो गई है?

अब मैं आपके सामने ढाई अक्षरों के ऐसे शब्द का वर्णन करने जा रहा हूँ जो सर्वत्र व्याप्त है। इसके बिना खास तौर से इस युग में तो आपका काम ही नहीं चल सकता। ये साहब हर व्यक्ति, वस्तु और स्थान पर कार्य करते हैं। आप कहेंगे; ये श्रीमान् हैं कौन?

श्रीमान् आप हैं "ब्लेक" सर्व गुण सम्पन्न, यथा नाम तथा गुण कह दें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं! आपका सिद्धान्त है—"करना तो लार्ज स्केल पर और वह भी बडों की छाया में रहकर।"

आपके कारनामों से आप परिचित होंगे। आधुनिक युग में जितना विज्ञान ने कमाल कर दिखाया उतना ही इस मँहगाई के स्वर्ण युग में "ब्लेक" साहब ने। जीवनोपयोगी वस्तुएँ उपलब्ध कराने में आपके बिना काम नहीं चल सकता! जीवन का कोई पक्ष ले लीजिए। उदरपूर्ति के लिए अनाज, तेल, घी, चीनी आदि खरीदना है तो आपको "ब्लेक" साहब के चरणों में शीश नवाकर उनसे आशीर्वाद प्राप्त करना होगा। इसी तरह मनोरंजन हेतु सिनेमा या कवि सम्मेलन में जाना है तो "आप" साहब से सम्पर्क स्थापित करना होगा तभी आपको टिकिट मिल सकेगा, अन्यथा असंभव है। इसी तरह जिन्दगी सुविधाजनक व्यतीत कराने हेतु मकान का निर्माण करना है तो आपको सिमेन्ट आदि मेटेरियल उपलब्ध कराने के लिए "आप" साहब की विधिवत् परिक्रमा करनी होगी। अन्यथा आप कुंवारे रह सकते हैं। "आप" तो इतने शरीफ हैं कि लाठी चार्ज करवा कर या घोड़े द्वारा कुचलवा कर मरवा सकते हैं और दाह-संस्कार हेतु खाइयों में डलवा सकते हैं। यदि आप अपने बालक-बालिकाओं को विद्याध्ययन कराने के इच्छुक हैं तो उनके लिए स्टेशनरी, पुस्तकें, कापियां खरीदने के लिए आपको गलियों, मोहल्लों और शहरों में भटकना पड़ेगा। सौभाग्य से आपके दर्शन हो भी गये तो अनजान की तरह मुंह छिपाकर निकल भागने की कोशिश करेंगे। यदि आपने जबरदस्ती रोक लिया तो आसमान से छूती बातें करेंगे।

जी हां, इस कलियुग में प्रेमी-प्रेमिकाओं के फोटू का ब्लेक, उनके प्रेम-पत्रों का ब्लेक और यहां तक कि आजकल युवकों और युवतियों के ब्लेक की खबरें आये दिन आप सुनते हैं। आजकल जिधर देखो उधर ब्लेक ही ब्लेक।

दिन मे ब्लेक तो रात मे ब्लेक। घर में ब्लेक तो घाट पर ब्लेक। होटलों में ब्लेक, सिनेमा व सोसायटी मे ब्लेक। पृथ्वी पर ब्लेक तो चन्द्रमा पर ब्लेक। शायद स्वर्ग में भी ब्लेक चलता होगा। नरक के लिए तो "आप' साहब प्रतीक्षा कर ही रहे होंगे।

गलत न समझियेगा। दीन-हीन, निर्बलो को 'आप' से घृणा होती है तो धनिकों, रईसों एव पूंजीपतियों के मुंह से लार टपकती है। आप कहेंगे, लार तो पागल कुत्तो के मुंह से टपकती है। तो मै कहूगा कि ये क्या उनसे कम है? 'आप' भी तो स्वार्थ मे पागल हो तेज रफ्तार से दौडते है और शोषित वर्ग को आज यहाँ काटा तो कल वहाँ काटा!

'आपका' कहना है लार्ज स्केल पर ब्लेक वह भी बडे लोगो की छत्र-छाया मे रहकर। सीमेंट की जगह राख का ब्लेक, मावे मे सोपस्टोन का ब्लेक, सोना-चांदी मे सफेद तांबे का ब्लेक, धनिये मे लीद का ब्लेक, अफीम मे काली मिट्टी का ब्लेक, शक्कर मे रेत का ब्लेक, शहद मे गुड का ब्लेक, काली मिर्च मे पपीते के बीजो का ब्लेक, कैरोसीन, कोयला, पैट्रोल में पानी का ब्लेक, वाटर-वर्क्स मे पानी के नाम हवा का ब्लेक, कल-कारखानो मे समय का ब्लेक, नियुक्तियो मे नोटो का ब्लेक, ट्रान्सफर मे जी० ओ० का ब्लेक, राजनीति मे नेताओं का ब्लेक। बुरा न माने आजकल ब्लेक के पीछे सारी दुनिया दीवानी हो गई है। इसी ब्लेक ने सत्यवक्ता को सफेद झूठ बोलना सिखलाया। यहाँ तक कि व्यवहार व रिश्ते तुड़वाने में भी कसर न रखी है।

फिर भी 'आपकी' आदर्शवादिता तो देखिये। वैसे मैं नेहरू जी से ज्यादा शास्त्री जी के मार्ग पर चलता हूँ। जिस रास्ते से होकर मैं दूकान पर गुजरता हूँ वह शास्त्री मार्ग है। मैंने हर चीज का शीलभग होने दिया है किन्तु ब्लेक जैसे महामहिम की शील की सदैव रक्षा की है। बुद्धिजीवी सभी शेर है किन्तु आप इनके बीच रगे सियार का स्वांग कर बैठे हैं। जी हाँ, आपका कहना है मैं कितना ईमानदार, सच्चा, दयालु और त्यागी हूँ कि सबों की आवश्यकताओं की पूर्ति करता हूँ फिर भी लोग मुझसे ईर्ष्या क्यों करते हैं?

□

# सड़क के गड्ढे

□ रामदत्त शर्मा

हम सडक के गड्ढे है। इसीलिए शायद आप हमसे बचकर निकल रहे हैं। आप सोच रहे होंगे कि यदि बचकर नही निकले तो ये गड्ढे हमे गिरा देंगे। इनमे भरी कीचड में हमारे पैर सन जायेंगे और हम गन्दे हो जायेंगे। आपकी सावधानी की दाद देनी पड़ेगी। परन्तु कब तक आप हमसे बचकर निकलते रहेगे। क्या हमको भरने की भी बात कभी सोचेंगे या अपना ही बचाव करते रहेगे।

आप अच्छी तरह जानते हैं कि हमे जन्म देने वाले भी आप नही तो आपके भाई ही है। हमारी मां को आपने बेदर्दी से रौंदा है तो हमारा जन्म हुआ है। बिना इस बात की परवाह किए कि सड़क में आप और आपके वाहनों के सरपट दौड़ने से उत्पन्न घर्षण को सहने की क्षमता किस सीमा तक उसमें है, आप दिन रात उसकी छाती पर मूग दल रहे है। फिर भी आप सोचते हैं कि वह बेचारी अपने स्वरूप एव स्वास्थ्य को यथावत् बनाए रखे। भला यह कैसे सभव है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आपने हमारी जननी का विस्तार तो बहुत किया है। अनेक राष्ट्रीय मार्ग बने हैं। शहरो को कस्बों से जोड़ा गया है। इतना ही नही गाँवों तक भी सड़क तेजी से पहुँचती जा रही है। वह विकास का प्रतीक हो चुकी है। पचवर्षीय योजनाओं में निरन्तर उसका विस्तार हुआ है। परन्तु संख्यात्मक विकास के चक्कर में उसकी गुणात्मकता की उपेक्षा हो रही है। निर्धारित मापदण्ड के अनुसार न तो उसमे मसाला लगाया जाता है और न मजबूती के साथ उसका निर्माण होता है और प्रयोग शुरू हो जाता है। इतना सब्र भला किसे है जो सड़क को मजबूत बनने दे और इसके बाद उसका प्रयोग करे। उसका निर्माण मजबूती के साथ हो। इसकी चिन्ता भी आज बहुत कम की जाती है, क्योंकि यदि ऐसा हो गया तो सड़क के नाम पर

धंधे कम हो जायेंगे। इसलिए इस 'धंधे' के युग मे ऐसी ही सड़कें बनती रहेंगी, उनकी मरम्मत होती रहेगी और हमारा जन्म भी होता रहेगा।

हां, तो यह ध्यान रखें कि आप हमारे जन्मदाता है, फिर भी हमसे बचकर क्यों चलना चाहते है? आपको भय है कि हम कहीं चोट न कर दें। ठीक है जमाना नियोजन का है परन्तु अपनी धुन मे अंधाधुंध चलने की प्रवृत्ति को छोड़िए और जिसका प्रयोग कर रहे हो उसके स्वास्थ्य का भी ध्यान रखिए। यदि आप सड़क पर चलते हुए निर्धारित नियमों का पालन करेंगे तो निश्चित ही हमारे जन्म पर कुछ नियन्त्रण होगा।

क्या आप नही जानते कि आज के इस बेतहाशा दौड़ के युग मे ये सब बातें आदर्श बघारने जैसी है। किसे फुरसत है कि जो सड़क के नियमों की परवाह करके चले। ये बातें तो किताबो मे लिखने की हैं। इसीलिए तो हम कहते है कि हमारा जन्म और हमारी बढ़ोतरी आज कोई नही रोक सकता है। आप जैसे सावधानी बरतने वाले और हमसे बचकर चलने वाले हैं कितने? बहुलता तो आँख मीच कर चलने वालों की है। अंधाधुंध चलने की धुन मे हम उन्हें दीखते ही नही। जब वे मुंह के बल गिरते हैं तो नाहक मे हमे दोष देते है। गलती खुद करते हैं और उसे हमारे मत्थे मढ़ते हैं। हम न तो किसी को चोट पहुँचाना चाहते है और न गिराना। हम स्वयं अभागे हैं जो बिना चाहे पैदा हुए हैं। उपेक्षित होने के कारण बढ़ते भी जा रहे हैं और गहरे भी हो रहे हैं। हमारी दशा सुधारने की ओर हमे भरने की कितनी चिन्ता की जाती है? यह बात अलग है कि हमे भरने के नाम पर लोग अपनी जेब भर लेते है। नाम हमारा होता है, काम उनका। कभी तो यह भराई कागज पर ही हो जाती है और कभी चेपा-चेपी करके हमारा मुँह बन्द कर दिया जाता है। हम भी सब समझते है। यह बात दूसरी है कि चुप हैं और मुंह से कुछ कहते नही, क्योंकि हमारी सुनने वाला है कौन। ये चेपा-चेपी टिकाऊ तो होती नही क्योंकि हमे ठीक तरह भरा ही कब जाता है? अतः थोडे दिनों में ही वह माल-मसाला उखड़ जाता है और हम पुनः नंगे हो जाते हैं। हमें भरने के नाम पर पुनः ठेके होते है और इस प्रकार यह क्रम चलता ही रहता है। हमारे नाम पर ब्लेक-करने वाले जब तक बढ़ते जाएगे हमे पैदा होने से और बढ़ने से कोई नही रोक सकेगा। हमारे नाम पर धन्धे होते रहेगे और हम उभरते और अधिक कुरूप होते रहेगे। सरकार की योजनाए चलती रहेंगी और हमें भरने के नाटक भी होते रहेंगे।

यदि आप वास्तव में हमें भरना चाहते हैं और हमारे दुःख-दर्द या दुरवस्था से आपको सही रूप में सहानुभूति है तो पहले अपने इस नेक इरादे का कोई सबूत प्रस्तुत कीजिए। हमें आपकी कथनी और करनी में स्पष्ट अंतर दिखाई दे रहा है। इसी से खरी बात करनी पड़ रही है। यदि हमें भरने के नाम पर ब्लैक होना रहा तो हमें मुंह खोलकर और अधिक चौड़ा एवं गहरा होना पड़ेगा। अपनी संख्या भी बढ़ानी पड़ेगी और अपना एक संगठन भी बनाना होगा। हम ऊधम मचायेंगे और अपनी माँ की छाती पर भारी-भारी वाहनों को बेदर्दी से दौड़ाने वालों की नाक में दम कर देंगे। उन्हें मजबूर कर देंगे कि वह हमारे दचकों के भय से आँख खोलकर धीरे-धीरे चलें। हमारा यह सोचना कहाँ तक प्रभावी है, इस पर हमें भरोसा कम ही है, क्योंकि हड़ताल और धरनों की इतनी भरमार हो गई है कि इनकी परवाह कम हो होने लगी है। ये अहिंसक तरीके उन लोगों पर ही असर डालते हैं जिनका अहिंसा में विश्वास है। आज तो अहिंसा के ढोल पीटे जाते हैं परन्तु हिंसा के तौर तरीके अपनाने को बाध्य किया जाता है। यदि ऐसा न किया जाए तो फिर अहिंसक आन्दोलन को हिंसा भड़काने वाला सिद्ध करके उसका दमन कैसे किया जाए। इसलिए हमें अपनी शक्ति के प्रदर्शन का कोई और ठोस और कारगर तरीका खोजना पड़ेगा। अब हमें अधिक उपेक्षित होना कतई बरदाश्त नहीं होगा।

□

# घुसपैठ

□ अर्जुन 'अरविंद'

शौक पालना मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्ति है। लगभग हर आदमी अपनी रुचि के अनुसार कोई न कोई शौक पाल ही लेता है। शौक कई प्रकार के होते है—गप्प मारना, पतंगबाजी, बटेरबाजी, अपनी हर बात के साथ एक शेर जोड देना, चीता मारना, चिडिया मारना या मक्खी मारना आदि शौक तो अब पुराने हो चले है। जिस प्रकार जमाने की हवा के साथ फैशन बदलता है ठीक उसी प्रकार इसान के शौक भी बदलते जाते है। आजकल चमचे पालना, दूसरे की लिखी पुस्तके अपने नाम से छपवाना, फोटोग्राफी करना, मुकदमेबाजी करना और क्रिकेट कमिन्ट्री सुनना जैसे हजारो शौक लोग पालते है। आजकल के ये अधिकतर शौक इतने खर्चीले और दुस्साहसपूर्ण है कि उनको पालते हुए आदमी की कमर टूट जाती है। फिर भी आदमी बाज नही आता और हर समय अपने शौक की दुम थामे रहने मे ही गर्व महसूस करता है।

अपना सिद्धान्त आम लोगों से कुछ भिन्न है। कुछ खोकर या हाथ-पैर तुड़वाकर किसी शौक को अपने सिर बैठाया जाना-तो महज मूर्खता या अदूरदर्शिता ही है। किसी जमाने मे आम के आम और गुठली के दाम वाली बात कहकर लोगों ने अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया है। इस कहावत के अनुसार शौक भी ऐसा होना चाहिए कि एक भी पैसा खर्च न हो और जहा हाथ डालो वहा लाभ ही लाभ प्राप्त हो। जैसे सेहत के लिए, मनोरजन के लिए तो हों ही, इसके अतिरिक्त जेब गर्म करने वाले लाभ भी हों।

बचपन मे जब स्कूल मे मै खुराफात किया करता था तब से ही न जाने क्यो लिखने का शौक हम पर सवार हो गया था और कालेज की हसीन चारदीवारी से रुखसत होने तक हमने सैकड़ो रचनाओ को जन्म दिया था। लेकिन हर सम्पादक को जैसे हमारी रचनाओ से एलर्जी थी। हमने रचना पोस्ट की नही कि अगले सप्ताह ही सपादक के अभिवादन व खेद की स्लिप

अपने पल्लू में घोल कर हमारे दरवाजे पर इस तरह ओंधे-मुह पड़ी मिलतीं जैसे उन्हें बहुत ही हिकारत की दृष्टि से देखकर लौटा दिया गया हो।

लेकिन अनेक वर्ष पहले लिखी वे रचनाएं जो अनेक बार अस्वीकृत होकर लौट चुकी थीं, अब चोटी की पत्रिकाओं में धड़ल्ले से छप रही हैं। वे ही संपादक अब सम्मान सहित चैक या मोटा-सा धनादेश भी बदले में भेजने लगे है। मेरी इस बात पर आपको आश्चर्य होगा, पहले मैं स्वयं भी आश्चर्य करता था। लेकिन सच मानिये, यह करामात है हम पर सवार हुए नये शौक के घुसपैठ की।

हुआ यों कि एक बार हमारा दिल्ली जाना हो गया। उस समय हमारे नए शौक ने एक नई योजना ईजाद कर डाली। जिस होटल में हम ठहरे हुए थे, उसी के कमरे में एक साहित्यिक गोष्ठी आमन्त्रित कर डाली। बड़े-बड़े संपादकों को आमन्त्रित किया हमने। गोष्ठी का मुख्य आकर्षण यह था कि हमने दुस्साहसपूर्वक घोषणा कर दी कि गोष्ठी की अध्यक्षता स्वयं शिक्षा मन्त्री करेंगे। उस निमन्त्रण-पत्र का जादू ऐसा सिर चढ़ा कि केवल कुछ को छोड़कर अनेक संपादक, समालोचक और लेखक हमारे कमरे में मौजूद थे।

जब उपस्थिति अच्छी खासी हो गयी तो हमने लोगों से सखेद निवेदन किया कि शिक्षा मंत्री जी आने से मजबूर हो गए, लेकिन उनका सन्देश आया है कि एक खास काम से उन्हें दिल्ली से बाहर जाना पड़ रहा है। इसलिए वे गोष्ठी में न आ सकेंगे। यदि उनके साथ विवशता न होती तो वे अवश्य आते।

फिर हमने सहर्ष घोषणा की कि प्रसिद्ध पत्रिका 'सुरंग' के संपादक श्री किताबी लाल जी हमारे देश के गौरव है। इसलिए आप ही आज की साहित्यिक गोष्ठी की अध्यक्षता का भार संभालेंगे। शिक्षा मंत्रीजी के लिए आयी मसनद पर अपने आपको सभालते हुए किताबी लाल जी का दिल बाग-बाग हो उठा था। फिर गोष्ठी ऐसी जमी कि हर समालोचक, लेखक, संपादक ने हमारी साहित्यिक सेवाओं की तारीफ के पुल बाध दिए। और उस पुल पर चलते हुए हम एक ही रात में देश के चर्चित साहित्यकार बन गए। संपादक स्वयं हमसे रचना की माग करने लगे। फिर हम उनके पत्रों को ठीक उसी तरह हिकारत की दृष्टि से देखते जैसे कभी वे हमारी रचनाओ को देखा करते थे। हम उन्हें अपनी पुरानी-सी कोई रचना भेज दिया करते जो प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में बड़े इत्मीनान के साथ छप जाती।

घर में जब भी रेडियो खोला जाता तो हमारी श्रीमती बड़े ही अपमान-

जनक शब्दों में हमें ताना सुनाने लगती—'बड़े साहित्यकार बने फिरते हैं आप। ऐरों-गैरों के प्रोग्राम रेडियो पर प्रसारित होते रहते हैं। लेकिन आपका नाम कभी रेडियो पर सुनने में आया है ?'

श्रीमती का वह ताना सीधा हमारे दिल पर कटार की नोक-सा उतर जाता। रेडियो स्टेशन वालों को वैसे तो हम अनेक रचनाएं भेज चुके थे। लेकिन वे लोग हमारी रचनाओं का प्रसारण करना तो दूर रहा, उन्हें लौटाते तक भी न थे। श्रीमती के ताने की चुभन इस तरह खटकने लगी कि हमें मजबूर होकर अपने उसी शौक का सहारा लेना पड़ा।

एक दिन हम टहलते हुए खुद ही रेडियो स्टेशन जा पहुंचे। दरबान द्वारा जब कार्यक्रम अधिकारी से कहलाया कि अमुक सासद के छोटे भाई आपसे मिलने आए है तब कार्यक्रम अधिकारी ने हमे आदर सहित बैठाया ही नही बल्कि वही जलपान की व्यवस्था भी करा दी।

औपचारिक वार्तो के बाद जब हम असली मुद्दे पर आये और उनसे शिकायत की कि अनेक नाटक लिखकर भेजने के बावजूद हमारा एक भी नाटक प्रसारित नही हुआ है तब वे बड़े लज्जित और विनम्र स्वर मे बोले—'हमारे स्टाफ में कुछ लोग ऐसे है जो समझते नही कि किन लोगो को प्रसारण की सुविधा प्राप्त होनी चाहिए। खैर, जो कुछ हुआ उसे भूल जाइए। अब आप हर तीन महीने पश्चात् एक नाटक भेज दिया करे। उसे प्रसारित करने मे हमे प्रसन्नता होगी।'

जब हम कमरे से निकलने लगे तो कार्यक्रम अधिकारी स्वयं कमरे के दरवाजे तक हमे छोडने आए। तब से हम श्रीमती के तानों की मार से मुक्त हो गए और रेडियो पर नियमित रूप से हमारे नाटक प्रसारित होने लगे है।

जिस तरह मेहमान बिना सूचना दिए चले आते है, ठीक उसी तरह बीमारी का भी कोई भरोसा नही रहता। बिना अल्टीमेटम दिए शरीर पर हमला कर बैठती है। एक दिन अचानक ही मलेरिया ने हमे धर दबोचा। इस तरह आकस्मिक अटैक किया कि हम कुनैन आदि मामूली दवाएं भी न जुटा सके। विवश होकर हॉस्पिटल की शरण लेनी पडी। डॉक्टर के कमरे के बाहर दरवाजे पर मरीजों की जो कतार देखी तो होश हवा हो गए। तोबा ! ऐसी लम्बी कतार तो कभी फिल्म-हॉल या राशन की दूकान पर भी न देखी थी। लेकिन मजबूर होकर कतार मे खड़े हो जाना पड़ा। जब कि हाथ-पैर हमारा साथ देने से कतरा रहे थे। लेकिन उस कतार का हाल ब्रेक-डाउन गाड़ी के

जैसा था। लोग डाक्टर के कमरे में से बाहर निकलते हुए तो दिखते थे, लेकिन कतार का आदमी जहां था वहीं खड़ा था। आधा घंटा ऐसे ही बीत गया। बुखार में तपता शरीर खड़े रहने से साफ मुकर रहा था। तब हम मजबूर होकर कतार से निकल पड़े और फाइल लेकर जा रहे एक चपरासी से पूछ बैठे—'भाई, ये लोग जो कमरे में से बाहर निकल रहे हैं, किधर से आ रहे हैं?'

चपरासी तनिक होशियार था। मुस्कराकर बोला—'भीतर के दरवाजे से।'

'ऐं!' हम चौंक पड़े। लेकिन भीतर से जाने का दरवाजा तो केवल कुछ खास लोगों के लिए ही होता है। यह सोचकर हम निराश होकर लौटना ही चाहते थे कि उसी वक्त हमें वही अपना जिन्दादिल हथियार याद आ गया।

डॉक्टर के कमरे के बाहर बैठे दरबान से हमने कहा—'डाक्टर साहब से जाकर कहो कि अमुक दैनिक पत्र के संवाददाता आपसे मिलने आए हैं।'

आधी फुंक चुकी बीड़ी को अपनी चप्पल से निर्दयता के साथ कुचलता हुआ दरबान भीतर गया और कुछ पल बाद लौटा तो हमें ससम्मान डॉक्टर के कमरे में ले गया। डॉक्टर हमारे पहुंचते ही अपनी कुर्सी से खड़े हो गए और बड़ी गर्मजोशी के साथ हमसे हाथ मिलाकर सामने रखी कुर्सी पर बैठने के लिए संकेत किया। हमारे बैठने के बाद ही वे अपनी कुर्सी पर बैठे। भीतरी दरवाजे से प्रवेश करने वाले लोग हमारी ओर ईर्ष्या की दृष्टि से देख रहे थे।

डॉक्टर निहायत ही पोलाइट स्वर में हास्पिटल की व्यवस्था, प्रगति और परिवार कल्याण के अन्तर्गत चलाए जा रहे अभियान का विस्तार से वर्णन करने लगे। लेकिन हमारी देह तो बुखार में बुरी तरह झुलसी जा रही थी। इसलिए हमने एक उबासी लेकर डॉक्टर साहब से कहा—'अभी तो मैं तेज बुखार से जल रहा हूं, फिर कभी आऊंगा तो आपके हॉस्पिटल की प्रगति के पूरे आंकड़े लेकर जाऊंगा और अपने दैनिक-पत्र में प्रकाशित करा दूंगा।'

डॉक्टर फौरन अपना स्टेथिस्कोप संभालकर उठ खड़े हुए। हमारे बुखार की जांच की और स्लिप लिखकर पकड़ाते हुए बोले—'ये सब दवाइयां और इंजेक्शन आपको यहीं से मिलेंगे।' और स्लिप के साथ ही हमें कुछ टॉनिक के सैंम्पल फॉर फिजिशियन भी दे दिये। इस अचूक युक्ति को सफल देखकर हम खुश होते हुए लौट आए। सच मानिए, हमारा आधा बुखार तो रिक्शा से उतर कर घर की सीढ़ियां लांघते-लांघते ही उड़न छू हो गया था।

कुछ ही दिन बीते होंगे कि एक मामला हमारे सिर पर आ गया। हमारे

छोटे भाई इसी शहर मे सरकारी नौकरी कर रहे थे और सुकून से अपनी जिंदगी बिता रहे थे कि अचानक उन्हें स्थानातरण-आदेश मिल गया। कम्बख्त स्थानातरण हुआ भी तो सैंकड़ो किलोमीटर दूर ऐसे कस्बे मे कि इन्सान तो इन्सान, कोई जानवर भी वहा जाकर शिफ्ट होना पसन्द न करे। यानी पानी की किल्लत, रोटी की किल्लत, मकान का मिलना दूभर और ऊपर से नीरस जिंदगी। भला यह भी कोई बात हुई ? हमारे भाई परेशानी मे पड गए। उनकी परेशानी देखते न बनती थी हमसे।

इसलिए अपने उसी सौ फीसदी लाभकारी फार्मूले का सहारा लेकर हम एक दिन राजधानी पहुच गए। छोटे भाई के विभाग के मन्त्री जी के पास पहुच गए। मन्त्रीजी के बंगले के अहाते मे खडी विशाल भीड के होते हुए मत्रीजी तक पहुचना कोई आसान काम न था। लेकिन वहा हमारा अमुक समाज का प्रातीय महामत्री बनना काम आया। क्योकि हम देख चुके थे कि आजकल पूरी राज-नीति केवल जातीय और वर्गवाद के आधार पर ही चल रही है। एक बहु-सख्यक समाज के महामत्री के रूप मे हमे अपने सामने खड़े देखकर मत्रीजी बोले—'अरे ! आप अब तक खडे क्यो है ? बैठिए न ?'

हम बैठ गए तो मन्त्रीजी बोले—'कहिए, आपके समाज की क्या गतिविधि चल रही है आजकल ?'

हमने तत्काल उत्तर दिया—'जी ! इन दिनो अनेक कार्यक्रम निश्चित किए हैं हम लोगो ने। शीघ्र ही एक प्रातीय अधिवेशन बुलाने की तैयारी करने जा रहे है। अध्यक्षता के लिए आप ही से निवेदन करेंगे।'

मत्रीजी की जैसे बाछे खिल गयी। वे मुस्कराते हुए बोले—'भई मै तो आप लोग जब भी बुलायेंगे तब ही आ जाऊगा।'

उपयुक्त अवसर देखकर खास मुद्दे की बात भी अनायास ही हमारे मुह मे निकल पडी—'जी, छोटे भाई का स्थानातरण हो गया था आपके विभाग मे। मैं उसी के लिए···।'

'लाइए, उनकी एप्लीकेशन तो लाए होगे ?' मत्रीजी बोले।

हमने झट से एप्लीकेशन निकाल कर उनके आगे बढा दी। मत्रीजी ने तत्काल स्थानातरण निरस्त करने के लिए एक छोटा-सा वाक्य लिखकर पी. ए. को दे दिया। हम उन्हे धन्यवाद अर्पित कर उठने लगे तो मत्रीजी ने फरमाया—'आते रहा करिए, मुझे आपके सामाजिक कार्यों को देखकर बडी प्रसन्नता होती है। हां, अपने भाई का स्थानातरण-निरस्त आदेश आप थोडी

देर पश्चात् अपने साथ ही लेते जाना।' कहकर वे हंस पड़े और ठीक उसी दिन हमारे छोटे भाई पर अकस्मात ही आने वाली वह मुसीबत टल गयी।

हमारे एक मित्र को पी एच. डी. की डिग्री प्राप्त करने की धुन सवार हो गयी। वे अनेक वर्षों से थीसिस लिख रहे थे और वह नामंजूर होकर हर साल रद्दी की टोकरी में डाल दी जाती थी। लेकिन हमारे मित्र भी नम्बर एक के सनकी थे। जिद पर अड़े थे कि पी एच. डी. की डिग्री लेकर ही दम लेंगे चाहे कितनी ही वर्ष खप जाएं।

एक दिन मिले तो अपनी असफलताओं का बयान करने लगे। हमें उनकी दयनीय दशा पर तरस आ गया। हमने कहा—'भाई जान, इस तरह तो आपकी थीसिस जिंदगी भर रद्दी की टोकरी के हवाले होती रहेगी।'

'फिर ?' वे निराश होकर बोले।

हमने उन्हे घुसपैठ करने का अचूक नुस्खा बता दिया। वे चले गए। फिर बहुत दिनो तक इस तरह गायब रहे जैसे बरसात निकलने के बाद मेढक।

फिर वे हमें दिखाई दिए तो ठीक एक वर्ष बाद। हमने देखा, उनके चेहरे पर एक नई चमक थी और हाथ मे एक मिठाई का पैकेट भी। आते ही वे हमारे गले से लिपट गए और बोले—'यार तुम भी आदमी गजब के हो। इतने साल मै नाहक ही झक मारता रहा। तुम्हारे फार्मूले से मुझे डॉक्टरेट मिल गई है, लो मुह मीठा करो।' कहकर उन्होंने मिठाई का पैकेट हमारी ओर बढा दिया।

इस प्रकार हमने जिंदगी मे अनेक अनुभव करने के बाद पाया है कि सफलता प्राप्त करने के लिए घुसपैठ से बढ़कर कोई सस्ता और सरल तरीका नही है। शौक का शौक, कहीं रोक न टोक।

घुसपैठ करने का चलन अब तो आम होने लगा है। हर क्षेत्र मे लोग धड़ल्ले से घुसपैठ कर अपना काम सहज निकाल लेते है। चाहे आपको किसी ठेके का टेण्डर लेना हो, राजनीति मे प्रवेश करना हो या नौकरी प्राप्त करनी हो, आप भी घुसपैठ का सहारा लीजिए और अपनी हर मुश्किल को आसान कीजिए। घुसपैठ का दूसरा रूप है पिछले दरवाजे से प्रवेश करना। आपने स्वय अपनी आंखों से देखा होगा कि आप ईमानदारी के साथ अपनी बारी की प्रतीक्षा करते रहते है और पिछले दरवाजे से प्रवेश करने वाले बिना कठिनाई के अपना काम कराकर ले जाते है। आपको बदले मे खीझ या परेशानी ही मिलती है। इसलिए याद रखिए, जहां भी आपको जाना हो, पिछले दरवाजे से ही जाए। ऐसा न कर यदि आपको अपना समय नष्ट करने या कतार में खड़े रहकर धक्के खाने का शौक है तो वह बात अलग है।

□

# राष्ट्रीय एकता : हमारा दायित्व

□ ओंकार मेहता

भारत अनेक सस्कृतियों का देश है। वह विभिन्न संस्कृतियों के मेलजोल और आपसी लेन-देन मे विश्वास करता है। समय-समय पर भारत मे बाहर से अनेक जातियाँ आती गयीं और राष्ट्र की मुख्यधारा में घुलती चली गयी। भारत मे जिस प्रकार विभिन्न धर्म फले-फूले है वह भारतीय सस्कृति की सहिष्णुता, सहअस्तित्व और सद्भाव के विलक्षण उदाहरण है। भारत विभिन्न धर्म, जाति और भाषा वाले लोगों का निवासस्थान है। उनके रहन-सहन, खान-पान और बोली आदि अलग-अलग है। इतनी विभिन्नताएँ होते हुए भी देश मे भावात्मक एकता बराबर बनी रही। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई आदि मिलजुल कर रहते आये है।

लेकिन विदेशी शासकों ने सुनियोजित ढंग से भारत मे साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीयता और भाषावाद के विषैले जहर को फैलाकर तथा देशवासियों को परस्पर लड़ाई-झगड़ों, विवादों और आपसी फूट मे उलझाकर अपनी राजसत्ता को बनाये रखने के लिये उक्त तत्वों का खुलकर उपयोग किया जिसके दुष्परिणाम स्वरुप हमे स्वतंत्रता के सुख के साथ-साथ देश के बटवारे का दुख भी झलना पड़ा। आजादी के बाद के वर्षो मे भी फूट और वैमनस्य के महारोगों से भारत सर्वथा मुक्त नही हुआ है। साम्प्रदायिकता और प्रान्तीयता देश की अखण्डता और एकता के सामने आज भी प्रश्न चिन्ह बनी है।

आपस मे लडने-झगड़ने की शिक्षा कोई भी धर्म नही देता। जो लोग धर्म के नाम पर लड़ते-झगड़ते है वे अज्ञान, अशिक्षा एव धर्मान्धता जैसी मानसिक विकृतियों के शिकार हैं। साम्प्रदायिक एकता आज सारे देश के लिये अत्यन्त आवश्यक है। धर्म तो आदमी का बनाया हुआ है। आदमी की अच्छाईयों के लिए है। सच्चे और अच्छे हिन्दू और मुसलमान न आपस में लड़ते है

और न किसी को नुकसान पहुंचाते है। प्रत्येक धर्म अच्छा आदमी बनने, सत्य अहिंसा और भ्रातृ प्रेम की शिक्षा देता है।

अगर संसार में अपने देश को गौरवान्वित करना है, उसे शक्तिशाली और सम्पन्न राष्ट्र बनाना है तो सारी पुरानी बातों को छोड़कर बिल्कुल नये सिरे से सोचना है। हिन्दुस्तानी लोग अनेक धर्मों, जातियों, संस्कृतियों और भाषाओं का समूह है। किसी एक कौम का हिन्दुस्तान नहीं है। हिन्दुस्तान तो उन सबका है जो उसे प्यार करते है। धर्म, जाति और भाषा आदि से राष्ट्र सर्वोपरि है। राष्ट्रीय एकता को बनाये रखना प्रत्येक भारतीय का परम कर्तव्य है। कर्तव्य की भावना को भारतीय परिभाषा में धर्म कहा जाता है। राष्ट्र के प्रति राष्ट्र पुत्रों का कर्तव्य ही उनका राष्ट्रधर्म है। यही सब देशवासियों का एक सर्वधर्म है। शेष हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि धर्म पैतृक धर्म है, व्यक्तिगत धर्म है। एक घर में दो या दो से अधिक धर्म भी हो सकते है। किन्तु एक राष्ट्र में सबका एक ही राष्ट्रधर्म होता है और वह है "राष्ट्रीय एकता"।

व्यक्ति का धर्म आत्मोन्नति और आत्म कल्याण का साधन है। राष्ट्रधर्म राष्ट्रोन्नति द्वारा राष्ट्र को गौरव प्रदान करने वाला धर्म है। राष्ट्र के उत्थान से समाज और व्यक्ति का उत्थान जुड़ा है। सम्पन्न राष्ट्र का नागरिक अपना व्यक्तिगत धर्म निभाते हुए आत्मकल्याण कर सकता है। अतः राष्ट्रधर्म अर्थात् राष्ट्रीय एकता ही हमारा प्राथमिक धर्म है।

राष्ट्र की अखण्डता और एकता सर्वोपरि है। इसको बनाये रखने के लिए हमें त्याग और बलिदान के लिए तत्पर रहना है। स्वतन्त्रता के बाद देश में यदा-कदा साम्प्रदायिक झगड़े मुल्ला-मौलवियों, पण्डितों व राजनीतिज्ञों अथवा चंद स्वार्थी लोगों द्वारा भड़काये जाते रहे है। अविश्वास और पूर्वाग्रह के वातावरण के कारण अथवा जाति, धर्म या भाषा के प्रति संकीर्ण लगाव के कारण ये व्यक्तिगत झगड़े सामूहिक संघर्ष में परिवर्तित हो जाते हैं। तथा स्वार्थी तत्त्व इन झगड़ों से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लाभ उठाते है। बेकसूर लोग कानून के फन्दे में जकड़े जाते है और कसूरवार बेखटके घूमते रहते है।

संसार के समस्त धर्म और धर्मग्रन्थों की नींव सच्चाई पर रखी हुई है। सब में एक ही ईश्वर का सन्देश है। धर्म और धर्मग्रन्थ मानव-मानव में वैर-विरोध के लिये नहीं अपितु मनुष्यों में एकता पैदा करने के लिये ही है। इनके मूल में जो एकता छिपी हुई है उसका ईमानदारी के साथ पालन किया जाय तो सहज में ही राष्ट्रीय एकता स्थापित हो सकती है। हिन्दुत्व और इस्लाम में

कोई दोष नहीं है। उनके सहारे जीते लोग आत्म संस्कार और आत्मशुद्धि की स्थितियाँ प्राप्त करते है।

प्रत्येक भारतीय को धर्म निरपेक्षता की परम्परा का निर्वाह करना चाहिये। साम्प्रदायिकता से देश कमजोर होता है। देशवासियों को अपने मस्तिष्क से इस बात को तो निकाल ही देना चाहिये कि उनका अपना कोई अलग अस्तित्व है। एक धर्म, एक भाषा और एक प्रान्त के लोगों को अलगाव की मनोवृति से हटकर आपसी सद्भाव कायम करना चाहिए।

संकुचित और संकीर्ण विचारो ने भारतीय को भारतीय का शत्रु बनाकर रख दिया है। देश मे हर प्रान्त की अपनी भाषा है। बहुभाषी होने पर भी भारत एक राष्ट्र है। हमारी संस्कृति की जडे इन विभिन्न भाषाओ मे दिखाई पड़ती है। अत. प्रत्येक भारतीय चाहे वह हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख आदि मे से कोई भी क्यो न हो उन्हे दूसरों की भाषा सीखनी ही चाहिये। अपनी भाषा को छोड़कर किसी विदेशी भाषा का राग अलापना अलगाव की वृत्ति है।

भारत मे भारत के सिवाय कुछ भी एक नही है। धर्म एक नही, जाति एक नहीं, भाषा व प्रदेश कोई भी एक नहीं, इसलिये भारत मे एकता का आधार देशवासियों के भारतीय स्वरूप के सिवाय दूसरा और क्या हो सकता है।

भारतीय संस्कृति की विशेषता यही विविधता मे एकता है। समन्वयता ही भारतीयता की आत्मा है। मुस्लिम समाज जब तक पृथकतावाद को नही छोडेगा, अन्य इस्लामी देशों मे रहने वाले अपने सह धर्मावलम्बियो की तरह आधुनिकता से नाता नही जोड़ेगा तब तक वह वृहत्तर समाज का विश्वास अर्जित नही कर सकेगा, साथ ही साथ उसका सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक विकास भी अवरुद्ध रहेगा।

साम्प्रदायिक भेदभाव राष्ट्रीय एकता का सबसे बडा शत्रु है। इसे मिटाना प्रत्येक समझदार भारतीय का कर्त्तव्य है। देश में कबीर, रहीम व रसखान की रसधारा, सम्राट अकबर का हिन्दू-मुस्लिम संस्कृतियों मे एकता के स्नेहपूर्ण आदर्श तथा महाराजा शिवाजी का सब धर्मों के साथ सद्व्यवहार देश मे साम्प्रदायिक सद्भाव एवं एकता बनाये रखने मे हमारे लिये प्रकाशपुंज का कार्य करते है।

धर्म के संकुचित दृष्टिकोण ने मानव-मानव मे भेद भर दिया क्योकि एक ही गाव व शहर मे रहने वाले मनुष्य आपस मे एक दूसरे से घृणा करने

लगें । देश की अखण्डता एव कौमी एकता के लिये देशवासियों को सब धर्मों के प्रति उदारता का भाव रखना पड़ेगा तभी साम्प्रदायिकता का जहर देश से समाप्त हो सकेगा । राष्ट्रवाद जातिवाद से श्रेष्ठ है और इस रूप में हम सब से पहले भारतीय है और बाद में हिन्दू-मुस्लिम या ईसाई । राष्ट्रीय एकता भारतीयो मे अपने आर्थिक विकास और सास्कृतिक उन्नति के लिये एवं दूसरे पर निर्भर होने की आवश्यकता को पहचानने और उसके अनुरूप कदम उठाने से ही मजबूत हो सकेगी ।

समाज का कमजोर वर्ग यह अनुभव करता है कि राष्ट्रीय जीवन की मुख्यधारा मे आर्थिक और शैक्षणिक क्षेत्रों मे पिछड़ने के कारण वह अपने आप को इसमे पूर्णतया आत्मसात नही कर सका है । उनके लिये अधिक विकास, अधिक शिक्षा और अधिक रोजगार के अवसर जुटाने और उनकी सांस्कृतिक परम्पराओ की सुरक्षा की स्थितियाँ बननी चाहिए ।

समय रहते यदि साम्प्रदायिकता के विष पर काबू नही पा लिया गया तो भारत की अखण्डता दाँव पर लग सकती है और भारतीयो को पुनः दासता के दिन देखने पड़ सकते हैं । अतः आज प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है कि वह सकीर्णता का परित्याग कर जातिवाद से ऊपर उठकर देशहित में अपने को उत्सर्ग करे और देश तथा राष्ट्र की रक्षा करे ।

□

# श्रम देवी की पूजा

☐ जितेन्द्र

हम लोग देश की गरीवी तथा पिछड़ेपन के लिए स्वय ही जिम्मेदार है। पहले तो हम वहाना वना सकते थे कि हमारा देश विदेशी शासकों के अधीन था। लेकिन अव तो वह वहाना भी नही है। जो थोड़ी वहुत उन्नति हुई भी है वह इतनी अधिक नही है कि जिस पर सतोप किया जा सके। अन्य कई पश्चिमी और पूर्वी देशों के उदाहरण हमारे सामने हैं। महायुद्ध की विभीपिका ने उन देशों को वर्वाद कर दिया लेकिन मेहनत और श्रम के वल पर वे फिर उन्नति के शिखर पर जा वैठे। उन्होंने किसी वहानेवाजी का सहारा नही लिया। आज जव संसार के समस्त देश प्रगति की दौड़ मे एक दूसरे से होड़ कर रहे है, हमें भी उनके साथ कदम से कदम मिलाकर चलना होगा। देश की उन्नति का दायित्व केवल सरकार अथवा मुट्ठी भर समाज सेवियों पर ही नही है। यदि हमने अपने कर्त्तव्य मे कोताही की तो आने वाली पीढ़ियाँ हमे क्षमा नही करेंगी और आलसी तथा कामचोरों की सूची में हमारा नाम सवसे ऊपर लिखा जाएगा।

आज जो व्यक्ति उच्च पदो पर आसीन है तथा उद्योग आदि के क्षेत्र मे धन एवं प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके है, उनके जीवन पर दृष्टि पात करें। कितनी कठिनाइयों एवं प्रतिकूल परिस्थितियों से संघर्ष करके आज वे उस स्थान तक पहुच सके हैं। जव उनके अन्य साथी मस्ती एवं वेफिक्री की नीद सो रहे थे तो वे रातों मे जाग-जाग कर कठिन परिश्रम मे व्यस्त थे। उनकी सफलता के पीछे एक लम्वे संघर्प का इतिहास जुड़ा हुआ है। उसमें चमत्कार जैसी कोई वात नहीं है। उनकी सुख-समृद्धि को देखकर ईर्ष्या करने से कुछ नही वनेगा। सुविधाओं की कमी की दुहाई देकर हम वचने के रास्ते न ढूंढें, वल्कि उन साहसी एवं कर्मठ लोगों के जीवन क्रम को देखें जिनके पास हमसे आधी सुवि-

धाएं भी नहीं थी फिर भी वे अबाध गति से परिश्रम के मार्ग पर बढ़ते ही चले गये। छोटी-मोटी अड़चनें उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकीं।

यदि कोई व्यक्ति कठोर परिश्रम करता है तो उसे पसीना आना स्वाभाविक है। यह पसीना तो शीघ्र ही सूख जाएगा लेकिन श्रम उस व्यक्ति के जीवन का एक अनिवार्य अंग बन जाएगा। कार्य की अधिकता से नहीं बल्कि कार्य की चिन्ता से थकान आती है। कार्य का अभाव बोरियत पैदा करता है। उसमें भी थकावट का जन्म होता है। ऐसा सोचना तो एकदम गलत होगा कि श्रम करने से हमारी शक्ति घटती है। वास्तविकता इसके बिल्कुल विपरीत है। श्रम करने से हम अपनी संचित शक्ति को गँवाते नहीं, उसमें वृद्धि करते हैं। हमारे शरीर के सेल काम में आने से सुदृढ़ होते हैं। मानव द्वारा निर्मित सभी मशीनें काम में आने से घिसती हैं। हमारे शरीर की मशीन यदि कम काम में आती है तो इसमें जंग लगने की आशंका बहुत रहती है। डॉक्टरों ने यह सिद्ध कर दिया है कि परिश्रमी व्यक्ति दीर्घजीवी होते हैं तथा आरामतलब व्यक्तियों को विभिन्न व्याधियाँ घेर लेती हैं। माइकल एंजिलो, वाल्टेयर, गोथे, नेहरू आदि अनेक दीर्घजीवी व्यक्ति जीवन की अंतिम श्वास तक कार्यरत रहे। टामस एल्वा एडीसन अपनी प्रयोगशाला में निरंतर 18 घंटे तक प्रयोगों में जुटे रहते थे और थकते नहीं थे। आलस्य या अकर्मण्यता टी. बी. या कैंसर रोग के सदृश है। 'मैं इस कार्य को नहीं कर सकता' अथवा 'फिर कभी कर लूँगा'—यह सोचना बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है।

बच्चों में बचपन से ही ऐसे संस्कार डालने चाहिए कि वे श्रम की महिमा को समझें तथा उनकी यह भावना जीवन पर्यन्त बनी रहे। युवावस्था में तो वैसे भी बहुत कुछ कर गुजरने की चाह होती है। नवीन शक्ति का संचार और उत्साह श्रम के लिए बहुत अनुकूल सिद्ध होता है। जो व्यक्ति सदा से परिश्रम करता चला आया है वह वृद्धावस्था में भी नहीं त्याग सकता। चिकित्सकों के मतानुसार हर व्यक्ति को सेवा निवृत्त होने के बाद अपनी शक्ति के अनुसार कार्य में व्यस्त रहना चाहिए नहीं तो उसके स्वास्थ्य पर इसका बुरा असर पड़ने लगेगा। रुग्णताएँ उसे शीघ्र ही अपना शिकार बना लेंगी। हमारा जीवन लयपूर्ण होता है। जब लय में रुकावट या परिवर्तन होता है तो नयी-नयी परेशानियाँ पैदा हो जाती है। अतः परिश्रम को एक दम तिलांजलि देना सभी दृष्टियों से हानिकारक होगा। कुछ लोगों का ऐसा भी ख्याल होता है कि कमजोर आर्थिक स्थिति वाले व्यक्ति को ही परिश्रम की आवश्यकता है। सुदृढ़ आर्थिक

स्थिति वाले व्यक्ति को परिश्रम से दूर ही रहना चाहिए। यह भावना अपने आप में पूर्णतया गलत है। सुख का मतलब पूर्ण विश्राम या घोर विलासिता नही है। अधिक विश्राम एवं विलास भी दु:ख के उपादान बन जाते है।

अब आवश्यकता है पुराने देवी-देवताओं को भुलाने की और युग आ गया है श्रम की देवी की वंदना करने का। इसमे अन्य यज्ञो मे काम मे आने वाले घी और समिधा नही चाहिए। इसमे तो चाहिए परिश्रम का घी तथा लगन व निष्ठा की समिधा। इस पूजन को समय की सीमाओ मे नही बाधा जा सकता। ये तो समस्त जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। जो व्यक्ति बिना श्रम किए खाता है उसकी तुलना चोर से की जा सकती है। किसी देश की स्वस्थ्य सभ्यता एवं सस्कृति का सृजन मेहनत और पसीने से ही होता है। भारतीय का नाम आते ही एक आलसी आदमी का चित्र नही उभरना चाहिए। परिश्रम और भारतीय एक दूसरे के पर्याय बन जाने चाहिए। बहुत से व्यक्ति यह सोचते है कि अकेले उनके परिश्रम करने से क्या होगा। यदि सभी ऐसा सोचने लगें तो बेड़ा गर्क हो जाएगा। हर व्यक्ति अपने-अपने स्थान पर महत्त्वपूर्ण होता है। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किए गए श्रम से राष्ट्र का विकास होता है। परिश्रमी नागरिकों के बल पर ही राष्ट्र ऊँचा उठता है।



# नर-नारी में भेद क्यों ?

☐ सत्या भार्गव

प्राचीन काल की गाथाओं के अनुसार चण्ड-मुण्ड महिषासुर का संहार करने वाली, उन्हें सतीत्व के तेज से भस्म करने वाली, भक्तों को धन ऐश्वर्य से समृद्धिशाली बनाने वाली, ज्ञान का अतुलनीय भण्डार भरने वाली तथा देवताओ से अधिक आदर पाने वाली देवियाँ आज कहाँ गई ? क्या ये सिर्फ थोथी कल्पनाये हैं या सत्य भी ? अगर उनमें सत्य का लेशमात्र भी अंश है तो आज नारी हीन-भावना से क्यों ग्रसित होती जा रही है ?

नन्ही-सी कोमल कली को जन्म से ही घुट्टी मे पिलाया जाता है कि तेरा अस्तित्व नगण्य है। लड़के स्वच्छन्दता से कही भी घूमे-फिरें पर लडकी ने जवानी की ओर कदम बढ़ाये नही कि माता पिता कहने लगते हैं, क्यों उच्छृंखल हो रही है। घर के काम-काज मे भी हाथ बटाया कर। क्यों रात-दिन पढ़-पढ़ कर आँखे फोड़ रही है ? अन्त मे सरोकार तो चूल्हा-चक्की से ही पड़ेगा ? समय बदल रहा है, अब जाकर सभी स्वीकार करने लगे है कि लड़का हो या लड़की, दोनों जीविकोपार्जन करेंगे तभी घर की नैया पार लगेगी। फिर भेदभरा अलगाव कहाँ तक उचित है ?

लडकी विद्यालय में पढती हो तब तक तो कुछ नही पर यदि महाविद्यालय मे पढ़ने गई और सह-शिक्षा प्राप्त करने लगी तो बस बेचारी को क्या-क्या नही सुनना पडता है ? "अरे देखा नही कैसे लड़को से हँस-हँस कर बातें कर रही है ? जरा भी शर्म नही। कपडे पहनने का ढग देखो। बस अपनी आँखें नीची करलो। इन्हें तो पता नही कैसी हवा लगी है ?" अगर आलोचक उस लडकी के माता-पिता को जानते है तो किसी न किसी बहाने बातें वहाँ भी पहुँच जायेगी और असली बात को मक्खन मे लपेट कर ऐसा कहेगे कि समझने वाला शर्म से गड़ भी जाय और कुछ कह भी नही सके। अपनी बच्ची की उन्नति चाहते हुए भी उसे इन सब दकियानूसी बातों का एक लम्बा चौड़ा

उकता देने वाला भाषण भी दे देंगे जो उसकी उन्नति में बाधक ही सिद्ध होगा।

चलो किसी तरह पढ़-लिख भी गयी और शादी अभी हुई नहीं। खाली बैठे क्या करें? यह सोच कर नौकरी कर ली तो मानो कहर ढा दिया। "अरे, क्या बेटी की कमाई खाओगे या दहेज का रुपया बेटी से ही वसूल कर लोगे?" "अरे देखा? नौकरी करते ही इसके घर के रंग-ढंग ही बदल गये?" माना बेटी-धन पराया है पर वह स्वावलम्बी बन कर जिये तो क्या बुराई है? आज भी समाज मे सत्तर प्रतिशत व्यक्ति ऐसे हैं जो लड़की को नौकरी करवाना पसन्द नही करते। कुछ लड़के वाले भी यही चाहेंगे कि हमारी बहू पढ़ी-लिखी नौकरी करने वाली हो। पर उस बहू की दशा पर विचार कीजिए जो भोर में चार बजे उठती है। सारे परिवार का खाना बनाती है, सफाई करती है। पति देव के ऑफिस जाने की सभी तैयारियाँ करके बच्चों को तैयार करती है। प्रातः ७ बजे नौकरी करने निकल जाती है। दिन को दो-तीन बजे थकी मादी घर मे घुसी नही कि सासजी ने ताने देने शुरू कर दिये—"तुम्हारे बेटे ने तो थका डाला और तुम अब घर मे घुस रही हो? लो सम्भालो अपनी औलाद को।" अब सोचिए उस बहू का हाल। खाना भी जहर लगेगा या नही? दिन भर मशीन के समान चलने वाली उस नारी के बारे मे भी किसी ने सोचा है? अगर वह जवाब दे दे तो सभ्यता के विरुद्ध होगा। दो पाटों में पिसती नारी किसको दोष दे?

मैं उच्च वर्ग के समाज मे पलने वाली नारी की बात नही करती। मैं उस मध्यम वर्ग की बात कर रही हूं जिसके घर मे खाने वाले आठ और कमाने वाला एक होता है। नारी अपने कर्त्तव्य को निभाने के लिए नौकरी करे, सब का पेट पाले फिर भी ऐसा घुटन भरा जीवन जिये तो क्या उसे जीना कहेंगे?

समय परिवर्तनशील है। आज परिवार की तथा समाज की अवधारणायें बदल रही है। अगर परिवार मे सहकार भाव से कार्य करने की भावना जागृत हो जाय, सभी की आदतें स्वस्थ हों तो नारी का उत्थान हो सकता है। समाज कल्पना जगत से दूर रह कर यथार्थ के धरातल पर उतर कर देखे तो देखिए शिक्षित नारी समाज का उत्थान करके समग्र देश को उन्नत कर सकती है।



# स्कूल को समाज से बचाइये

☐ सीताराम स्वामी

आज प्रत्येक भारतीय की जबान पर एक ही बात है कि "आज की शिक्षा पद्धति को बदलो।" आम जनता ही नही वर्षों से स्वतन्त्र भारत के शिक्षा मंत्री, प्रधान मन्त्री एव राष्ट्रपति तक यह घोषणा करते रहे है कि वर्तमान शिक्षा निरर्थक है, इसे बदलना होगा। शिक्षा के स्वरूप के निर्धारण हेतु अनेक शिक्षा आयोगो का गठन किया गया। उनकी अनुशसाओ के क्रियान्वयन पर गरीब देश का पैसा पानी की तरह बहाया गया। शिक्षकों को विशेष प्रशिक्षण दिया गया। विदेशो से शिक्षा मे नवाचार आये। पर क्या शिक्षा मे बदलाव आया? क्या शिक्षार्थी का शारीरिक, नैतिक व बौद्धिक विकास अधिक हो पाया? स्पष्ट उत्तर है "नही"। मर्ज बढता ही गया ज्यो-ज्यों दवा की!

कोई भी योजना स्वय मे बुरी नही होती। योजना से सम्बन्धित घटक यदि उपयुक्त वातावरण मे योजना की क्रियान्विति करे तो सफलता मिल सकती है। कोई भी किसान ग्रीष्म ऋतु में सूखे रेगिस्तान मे हल जोत कर पौधे नही उगा सकता। यही हाल शिक्षा का है।

आज देश को न तो नई शिक्षा नीति की आवश्यकता है, न नई शिक्षण विधि की तथा न नवाचारों की। यदि आज के बालक को शिक्षा के माध्यम से एक सच्चरित्र उत्तरदायी नागरिक बनाना है तो स्कूल को समाज से बचाना होगा। होनहार बालकों को पतनोन्मुख समाज की छाया से दूर रखना होगा। यदि समय रहते समाज रूपी दैत्य से बालक को नही बचाया गया तो आगे आने वाली पीढी मे सच्चे अर्थों में इसान ढूढ़े नही मिलेगा।

यह निर्विवाद सत्य है कि जन्म के समय हर बालक पवित्र होता है, निर्दोष होता है। अपने चारों ओर के वातावरण से प्रभावित होकर वह तदनुकूल ढल जाता है। मनोवैज्ञानिको ने वश-परम्परा से अधिक प्रभावशाली वातावरण को माना है। फिर वंश परम्परा भी तो शनै: शनै: वातावरण से प्रभावित होती

रहती है। काश ! हम प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री रूसो के इस कथन पर ध्यान दे पाते : Everything that comes from the hands of the creater is good, but degenerates in the hands of society." जगन्नियन्ता के कर-कमलो से आने वाली हर वस्तु पवित्र होती है पर समाज मे आकर वह विकृत हो जाती है। रूसो ही क्यो, स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् यदि हम हमारे ऋषि-मुनियों के कथन व प्राचीन गुरुकुल शिक्षा पद्धति पर ध्यान देते तो आज हमें यह दुर्दिन न देखना पडता। आज हमारे राज-नेताओ की दशा उन मृगो के सदृश है जिनकी नाभि मे कस्तूरी है पर अज्ञानवश अन्यत्र कस्तूरी तलाशते दौड़ रहे है। क्यों न दौड़ें, आज यदि कोई शुभ फलदायक प्राचीन पद्धति का बखान करता है तो उसे परम्परावादी, रूढिवादी कह कर उसकी खिल्ली उडाई जाती है। पर कोई विदेशी नवीन विधि, जो चाहे विदेश मे असफल ही हो गई हो, की बात करता है तो वह प्रगतिवादी कहलाकर प्रशसित होता है।

स्कूल एव समाज से लुढक कर गाड़ी प्राचीनता एवं नवीनता की पटरी पर लुढ़क गई। हां, तो मै कह रहा था कि आज शिशु विद्यालय से लेकर विश्व-विद्यालय तक नगरों में स्थित है। बालक विद्यालय में पाँच घण्टे, तथा समाज मे उन्नीस घण्टे रहता है। पांच घण्टे मे बालक पर सप्रयत्न चढाया हुआ रग उन्नीस घण्टे मे केवल उतर ही नही जाता बल्कि उस पर विपरीत रंग भी चढ़ जाता है। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। बालक पर विपरीत रग अधिकाधिक गहरा होता जाता है। शिक्षा समाप्ति पर जब बालक जीवन-क्षेत्र में प्रवेश करता है, तब उसका रूप वैसा नही होता, जैसा शिक्षक बनाना चाहते थे; पर वैसा होता है, जैसा समाज ने उस पर रंग चढ़ाया है। यही कारण है कि स्वतत्र भारत के चौंतीस वर्षों मे हमारे विद्यालयों ने चौंतीस करोड़ दानव पैदा किये है ; सच्चे मानव सम्भवतः चौंतीस भी न बन पाये हों।

आज देश मे नीचे से ऊपर तक भ्रष्टाचार का बोलबाला है। आज समाचार पत्रों के पृष्ठ के पृष्ठ चोरी, डाके, ठगी, हत्या, अपहरण, बलात्कार आदि की घटनाओं से भरे रहते हैं। आज का बालक त्याग, ईमानदारी, शौर्य-वीर्य आदि की घटना महीनो न देखता है न सुनता है जबकि मारपीट, ठगी, भ्रष्टाचार, बलात्कार की घटनाएँ प्रतिदिन सुनता है और देखता है। चलचित्रों के अर्द्धनग्न कामुक चित्र, ध्वनि विस्तारक यंत्रो पर अहर्निश बजते हुए गन्दे गीत, प्रतिदिन घर के सामने फेंके हुए निरोध, क्लबों की रगरेलियाँ, कॉल-गर्ल्स के गुलछर्रे, रोमास युक्त सस्ते उपन्यास सब मिलकर विद्यालय मे

बालक को दिये गये ज्ञान से कहीं अधिक भारी बैठते हैं। फिर अच्छाई से बुराई का प्रभाव भी अधिक तथा शीघ्र होता है। नतीजा यह होता है कि बालक में शनैः शनैः सुधार के स्थान पर बिगाड़ आता जाता है एवं समाज की उच्छृंखलताओं में एक कड़ी और जुड़ जाती है। कर्णधार पुनः विचार करते हैं। पुनः वही भाषण दोहराया जाता है, शिक्षा मंत्री द्वारा, प्रधान मंत्री द्वारा, राष्ट्रपति द्वारा—"आज की शिक्षा बेकार है; शिक्षा पद्धति को बदलना होगा।" फिर पैसा पानी की तरह बहाया जाता है; फिर नये आयोग गठित होते हैं; नये प्रयोग होते हैं; नवीन प्रशिक्षण दिये जाते हैं; मगर ढाक के वही तीन पात। बुनियादी शिक्षा, हरबार्ट की पचपदी, उद्देश्यनिष्ठ शिक्षण, इकाई योजना, अविभक्त इकाई, मोंटेसरी, किंडर गार्टन, शाला संगम, आन्तरिक मूल्यांकन, नवीन वस्तुनिष्ठ परीक्षा पद्धति, सीखो-कमाओ योजना, कार्यानुभव योजना आदि पता नहीं गत ३०-३५ वर्षों में हमने कितनी पद्धतियाँ अपनाईं और कितनी का त्याग किया। पर कोई भी पद्धति बालक में सच्चे इंसान के गुणों को विकसित न कर सकी। करे भी कैसे? जब मूल ही में भूल हो तो सफलता कैसे मिल सकती है। बालक में नैतिक गुणों के विकास के सर्वाधिक शक्तिशाली अवरोधक समाज की तरफ हमारा ध्यान गया ही नहीं।

आज वाहनों का शोर-गुल, रेडियो का कर्ण-प्रिय संगीत, चल-चित्रों का आकर्षक प्रचार और चलते-फिरते लोगों द्वारा प्रयुक्त अपशब्द एक ओर विद्यार्थियों के ध्यान के एकाग्र होने में बाधक है तो दूसरी ओर घर में भाई-भावज का प्रेमालाप, डैडी-मम्मी का क्लबों में जाना, गन्दे साहित्य व चित्रों का प्रचार-प्रसार विद्यार्थी के कच्चे मस्तिष्क को सेक्स की ओर आकर्षित करता है। शिक्षित होकर भी बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है, जिससे नैराश्य की भावना का प्रादुर्भाव होता है, ऐसे में पूंजीपतियों के ठाठ-बाट व ऐश-आराम को देखता है तो उसमें अपराधवृत्ति का प्रादुर्भाव हो जाता है।

इन सबसे बालकों को बचाने का एकमेव उपाय है विद्यालयों को समाज से दूर, बहुत दूर, शैक्षिक संस्कारों की गोद में ले जाना, जहाँ समाज की कलुषित छाया बालक पर न पड़े। स्वस्थ एकान्त में बालभारती, माध्यमिक विद्यालय, महाविद्यालय आदि का निर्माण होना चाहिए जहाँ तीन या चार वर्ष से २५ वर्ष तक लगातार बालक समाज से दूर, पवित्र वातावरण में रहकर विद्याध्ययन करते हुए स्वयं में महामानव के सच्चे गुणों का विकास कर पच्चीस वर्षोपरान्त परिपक्व बुद्धि लेकर समाज में प्रवेश करे तथा समाज के अन्य घटकों

के समक्ष अपने आदर्श जीवन का ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करे जो अनुकरणीय हो। ऐसी स्थिति में समाज के कलुषित विचार उस पर हावी नही हो सकेंगे। इसी प्रकार जिस दिन पच्चीस वर्षों की कठिन साधना से अपने व्यक्तित्व का निर्माण करने वाले नवयुवकों का समाज मे बाहुल्य हो जायेगा, उस दिन समाज का, देश का काया-कल्प स्वयमेव हो जायेगा। उस दिन कोटि-कोटि सच्चे मानवों के इस देश के सम्मुख सम्पूर्ण विश्व नतमस्तक हो जायेगा।



# राजस्थानी गीतों में वर्षा

☐ चन्द्रदान चारण

आस लगाया मुरधरा देख रही दिन-रात ।
भागी आ तू, बादळी आयी रुत बरसात ॥

वर्षा राजस्थान का प्राण है। वह यहाँ के सुख और समृद्धि का प्रतीक है। काली-काली घटाएँ जब उमड-घुमड़ कर यहाँ जल बरसाती हैं तो चारों ओर आनन्द और उल्लास, हर्ष एवं खुशी का वातावरण बन जाता है। उस समय राजस्थान नाचता है, कूदता है, हँसता है और गाता है। स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े और पशु-पक्षी सभी पर वर्षा की मस्ती छा जाती है। लेकिन यह सिद्धि, हर्ष का यह ज्वार कड़ी साधना के उपरान्त आता है। ग्रीष्म के भयंकर उत्ताप के बाद जब तक बादलों के दर्शन नहीं होते, राजस्थान का हृदय आकुल रहता है। आषाढ़ के प्रथम दिवस 'मेघदूत' के यक्ष को बादल देखकर उतनी विकलता न हुई होगी जितनी एक राजस्थानी को आषाढ़ में सूना आसमान देख कर होती है। जल ही जीवन है। अतः उसके लिए सभी तरसते है। वर्षा की प्रतीक्षा करता हुआ मन अनुहार करता है—

जीवण नैं सह तरसिया बजड़ झंखड़ बाढ ।
बरसे भोळी बादळी आयो आज असाढ ॥

धरा वधू को तृषित देख मेघ दौड़ पड़ते है। शून्य मेघाच्छन्न हो जाता है। चन्द्रमा के चारों ओर 'जलेरी' तथा सूर्य के चारों ओर 'कुंड' देखकर अनुमान होता है कि वर्षा का अधिक जोर है, शीघ्र ही वर्षा आयेगी—

आभै जळ रो जोर है 'जळ भर चाद जलेर' ।
कुंडाळो करड़ो कस्यो, सूरज-रै चौ-फेर ॥

मोटी-मोटी बूंदों के बरसते ही जब इस सुन्दर ऋतु का आगमन होता है

तो राजस्थान के गावों में वर्षा का हार्दिक स्वागत करती हुई बहनें भाइयों के प्रति अपने स्वाभाविक प्रेम को व्यक्त करते हुए उल्लास भरे शब्दों में गाती हैं—

मोटी मोटी छाँटाँ ओसर्‌यो, ए बदळी
ओसर्‌यो ए बदळी
कोई जोड़ा ठेलम ठेल
सुरंगी रुत आयी म्हाँरे देस, भली रुत आयी म्हाँरे देस
ओ कुण बीजै बाजरो, ए बदळी
बाजरो ए बदळी
ओ कुण बीजै मोठ मेवा मिसरी
सुरगी रुत आयी म्हाँरे देस, भली रुत आयी म्हाँरे देस ।

काले-कजरारे बादलों और उनके बीच चमकती बिजली को देख राजस्थान का प्रेमी मन मूमल की प्रेम-कथा की स्मृति में तन्मय हो जाता है । प्रेमी के हृदय में अमृत की वर्षा होने लगती है और वह मूमल के अप्रतिम सौन्दर्य की कल्पना से भाव-विभोर होकर गाने लगता है—

काळी रे काळी काजळिये री रेखडी रे
हाँ जी रे, काळोड़ी काँठळ मे चमकै बीजळी
म्हाँरी बरसाळे री मूमल, हालै नी ए आलीजे रे देस

वर्षा ऋतु सुहावनी है, सुन्दर है, मनोरम है, आकर्षक है और हर्षोन्मत्त बनाने वाली है पर तभी जब सयोग-सुख हो । पावस की कलायण आये, प्रिय विदेश मे हो तो घनघोर घटा मे विद्युत का चमकना प्रिया की विरह-वेदना को द्विगुणित कर देता है । उसकी पीड़ा, उसकी कसक, उसका दर्द, उसका दु.ख बादल से अनुहार करता है कि वह बहुत धीरे-धीरे, मधुर-मधुर ध्वनि में बोले । यदि निर्लज्ज बिजली उसके विरह-अनुताप को देख चमकना बन्द न करे तो कम से कम वह तो शर्म करे । ढोला के वियोग मे दुःखी मारवणी कहती है—

बिज्जुळियाँ नीळज्जियाँ, जळहर तूँ ही लज्जि ।
सूनी सेज, विदेस प्रिय, मधुरइ मधुरइ गज्जि ।।

वियोगिनी के लिए वर्षा ऋतु बहुत ही कष्टदायक है । काली घटा उसे शत्रु सेना के समान प्रतीत होती है, दामिनी की दमक तलवार जैसी है और

वर्षा की बूंदें तीर की तरह लगती हैं। भला ऐसे समय बिना प्रिय के कोई कैसे जीवित रह सकती है—

फौज घटा, खग दांमणी, बूंद लगइ सर जेम।
पावस पिउ विण वल्लहा, कहि जीवीजइ केम॥

विरहिणी नायिका को वर्षा की बूंदें नही सुहाती पर कवि की कल्पना उसमे व्यापक सहानुभूति का भाव देखती है। उसे तो ऐसा प्रतीत होता है मानो मरुधरा को ग्रीष्म से जलता देख कर आकाश रोने लगा हो और फिर उसके बादल रूपी नेत्रो से जल रूपी अश्रु प्रवाहित होने लगे हो—

मुर-थळ जळतो देख कर, आभो रोवण लग्ग।
लोयण-बादळ वह चल्या, आंसू नीर अथग्ग॥

इधर वियोगिनी प्रिय को पाकर हर्षित होती है और उधर मेघ सौदामिनी को गले लगाये आगे बढ़ते है। धरती की प्यास और तपन अभी मिटी नही है अत. सावन के बादल कभी श्याम तथा कभी उज्ज्वल रूप धारण करके जोर से बरसते हैं एव निरन्तर बरसते ही जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो अजस्र अश्रु प्रवाहित करने वाले वियोगिनी के नेत्र हों—

काळी करि काठळि ऊजलि कोरण,
धारे स्रावण धरहरिया।
गळि चालिया दसो दिसि जळग्रभ,
थभि न, विरहणि-नइण थिया।

और यह वर्षा किस रूप मे होती है? बूंदें 'पड़ड़ पड़ड़' की आवाज करके गिर रही है, बादल 'गड़ड़ गड़ड़' का घोष करके गर्जना कर रहे है, विद्युत 'कड़ड़ कड़ड़' करके चमक रही है और इन सबकी समवेत ध्वनि से ऐसा लगता है मानो धरती फट जायेगी—

'पड़ड़ पड़ड़ बूंदा पड़ै गड़ड गड़ड़ घण गाज।
कड़ड़ कड़ड़ बीजळ करे, धड़ड धड़ड़ धर आज॥

अपने खेतों मे घनी वर्षा देख किसान हर्ष से हल चला रहा है और 'तेजा' की ऊची टेर से गगन-मडल को गुंजा रहा है—

सखरी बरसी सावळी खेता हरख हिलोर।
हळ बावतड़ा छेड़ता 'तेजै तणो झिलोर'।

किसान ने कितनी आकुलता से इस 'कलायण' की प्रतीक्षा की है। अज वह इसके दर्शन कर धन्य हुआ है और अनुरोधपूर्ण शब्दों में उससे विनय करता है कि वह मरुस्थल में नित्य बरसे क्योंकि वह जानता है कि मेघ और धरती ही समस्त चीजों के उत्पादक हैं—

नित बरसो, मेहा, बागड मे, नित बरसो,
मोठ-बाजरो बागड निपजै,
गेहूँड़ा निपजै खादर मे,
नित बरसो, मेहा, बागड मे, नित बरसो।

कृषक संगीत मुखर हो और कृषक-कुमारियाँ मौन रह जाएँ, यह असम्भव है। कृषक के सुखी जीवन को वाणी देकर वे गाती हैं—

आयो आयो सावण-भादवो,
कोई काली घटा घिर आय, आज म्हाँरी बदळी बरसैगी।
म्हाँरो बीरोजी बीजै बाजरो,
म्हाँरा भाभीजी काटै फोग, आज म्हाँरी बदळी बरसैगी

लेकिन यह वर्षा तभी सुखदायक है जब यह समय पर हो तथा आवश्यक मात्रा से अधिक न हो। कई बार वर्षा आरम्भ होने के बाद रुकने का नाम ही नहीं लेती। ठंडी वायु के झकोरों से त्रस्त लोग चूते हुए फूस के घरों में बैठे वर्षा रुकने की प्रार्थना करने लगते हैं—

माणस बैठा मांय, बा'र काढै मुख मोखी।
अरे! पून रुक जाव, लुवा थारै-सूँ चोखी।
चुवै टापरा रात-रा सै, टप-टप टपकै टाप है।
अबै कळायण! ठहरज्या तू घरा गयी सा धाप है॥

राजस्थान का वास्तविक सौन्दर्य वर्षा-ऋतु में ही दृष्टिगोचर होता है। राजस्थानी स्त्रियों का सबसे प्रिय त्यौहार—तीज—इसी ऋतु मे आता है। इस समय प्रायः सभी स्त्रियाँ, विशेषत. नवविवाहिता स्त्रियाँ अपने पीहर आ जाती हैं। कई भाई अपनी बहिनों को पीहर लाने के लिए उनकी ससुराल जाते हैं—

सावण तो लहर्‌यो भादवो रे
बरसै च्यारूँ कूँट
म्हारा मोरला, सावण लहर्‌यो रे

सावण बाई गवरां सासरे
कन्हैयो वीरो लेणिहार
म्हारा मोरला, सावण लहर्‌यो रे

वर्षा के माध्यम से राजस्थान के लोक-जीवन और लोक-संस्कृति की भी सरस झाकी प्रस्तुत हुई है। चारों ओर से उमड़-घुमड़ कर घटाएँ घिर आयी हैं। झिरमिर-झिरमिर मेह बरस रहा है। गड्ढे और तालाब पानी से भर गये हैं। पनिहारिनें पानी लाने जा रही है और अपने कोकिल-कठ के मधुर-स्वरो से मार्ग को रसमय बना रही हैं—

काळी ए कळायण ऊमटी ए पणिहारी ए लो
छोटोडी छांटां री बरसै मेह वाला जो
भर नाडा, भर नाडिया ए पणिहारी ए लो
भरियो भरियो समँद-तळाव वाला जो

आज विज्ञान के विकास के साथ साथ मानव जीवन अधिक जटिल हो गया है। यान्त्रिक सभ्यता ने मनुष्य को प्रकृति से दूर कर दिया है। गगन-चुम्बी उच्च अट्टालिकाओ के कारण तथा बड़ी-बड़ी मशीनों की भडाभड़ के कारण बड़े नगरो मे अब बादलो के आने, विद्युत के चमकने और मेघ की गर्जन-ध्वनि का पता भी नही चलता। फिर भला वर्षा के आगमन पर कौन खुशियाँ मनाये, कौन हर्षोन्मत्त होकर नाचे। अत: अब विशाल नगर मे रहने वाली राजस्थान के गाँव की गोरी, गाँव की ज्यादा 'हर' करती है और नगर के जड़-जीवन पर व्यग्य करते हुए प्रिय से अनुरोध करती है कि उसे सावन की वर्षा में उन्मुक्त होकर स्नान करने की सुविधा दी जाय—

कुण गावै कुण नाचै मन मे कुण मोद करै,
कुण जाणै चौक सिगरथ पावणी आई है,
कुण पूछै बात अठै देसा परदेसा री,
देवां री काई आ सदेसौ लाई है,
छोड़ मिनखावणी इण मोटी नगरी नै,
जूनी सी मेंडी रै डागळियै जावण दौ,
आडा तौ टेढ़ा म्हारै पड़दा बधाय राज,
सावण भर अलबेली बिरखा मे न्हावण दौ।

इस प्रकार राजस्थानी काव्य और लोक-गीतों मे वर्षा को विभिन्न रूपों मे

अंकित किया गया है। कही 'बरखा बीनणी' है तो कही देवो की सन्देश-वाहिका। कही उसका आलम्बन रूप मे चित्रण है तो कही उद्दीपन रूप मे। कहीं वर्षा के माध्यम से स्थानगत रूप-रंग दिखाया गया है तो कही उसे कथा की पृष्ठभूमि के रूप मे प्रयुक्त किया गया है। कही भाव-व्यजना के लिए उसको आधार बनाया गया है तो कही जीवन और प्रकृति मे समानता दिखाने के लिए उसका उपयोग किया गया है। राजस्थानी काव्य और लोक-गीतो मे जितना व्यापक, विस्तृत, सरस और सुन्दर वर्णन वर्षा का हुआ है उतना किसी अन्य ऋतु का नही।

काल का अविराम चक्र घूमता रहता है। काली घटाएँ उमड-घुमड कर बरसती है और मिट जाती हैं। उनका कोई इतिहास, कोई अस्तित्व नही रहता। पर मेघमाला का यह आख्यान एक ओर पर्वतीय चट्टान की भाँति शाश्वत है तो दूसरी ओर पानी के बुलबुले की तरह चिर नवीन। इसीलिए प्रकृति पर प्रति वर्ष नूतन भाग्य लिखने वाले बादल से राजस्थान का भावुक मन बार-बार यही विनय करता है—

उपराड़ै कर आवज्या ओळू मेटण-हार।<br>
मुरधर मन सू वीनवै तै-सू वारबार॥

□

# मन भावन गणगौर

□ श्यामनोहर व्यास

राजस्थान रंगीले एव मनभावन पर्वों का प्रदेश है। यहां हर मास लोक-गीतों से ओत-प्रोत अनेक पर्व उल्लासपूर्वक मनाये जाते हैं। आबाल-वृद्ध नर-नारी इन मोहक पर्वों पर उल्लसित हो उठते हैं।

इन्ही में से गणगौर गीतों भरा यह महिला-पर्व है। होली के दूसरे दिन से यह प्रारम्भ होता है और चैत्र शुक्ला तृतीया के दिन इसका धूम-धाम से समापन होता है। बालिकायें एवं नव-विवाहिता युवतियां बड़े ही उमंग, उत्साह एव उल्लास के साथ इसे सम्पन्न करती हैं।

जली हुई होली की भस्म से अठारह एव गोबर की आठ पिण्डिया बनाकर इनकी पूजा चैत्र शुक्ला तृतीया तक चलती है। शीतला सप्तमी को बालिकायें मिट्टी से गणगौर, ईसर, कान्हा आदि की सुन्दर प्रतिमायें बनाती हैं।

इन्हे फिर किसी सद्य विवाहिता महिला के घर रखा जाता है। गणगौर का अर्थ है—गण अर्थात् शिव और गौर का अर्थ पार्वती है।

शिव व पार्वती के रूप मे इन आकृतियों को पूजा जाता है। कहीं-कही काष्ठ की प्रतिमाओं की भी पूजा की जाती है। चैत्र शुक्ला तृतीया के दिन एक जुलूस के रूप मे इन प्रतिमाओं को बाजे-गाजे के साथ सन्ध्या के समय किसी जलाशय पर ले जाया जाता है। वहा इन प्रतिमाओं को नदी या जलाशय के पानी से स्नान कराकर पूजा-अर्चना की जाती है तथा राख व गोबर की पिण्डयों को पानी मे विसर्जित कर दिया जाता है। अठारह दिन तक कुंआरी कन्यायें मनभावन पति की प्राप्ति के लिये और सुहागिनें चिर-काल तक अपने सुहाग को बनाये रखने के लिये गणगौर पूजती है। गणगौर का पूजा-स्थल मॉडणों से सजाया जाता है। दीवार पर बने मॉडणे बड़े सुन्दर एवं चित्ताकर्षक होते हैं। मॉडणे मे कहीं पार्वती का महल होता है तो कहीं स्त्री-पुरुष का जोड़ा। भूमि पर निर्मित मॉडणों पर एक चौकी रखी जाती है।

चौकी पर मिट्टी से बनाई गई गौर, ईसर आदि की प्रतिमायें रखी जाती है। इस पूरे स्थान को जौ की बालियों से ढक दिया जाता है। "गणगौर' पूजने वाली महिलायें सूर्योदय से पूर्व नहा-धोकर बगीचे से फूल एव कच्ची दूब लेकर आती हैं और मनभावन कर्णप्रिय गीत गाकर वातावरण को मोहक बनाती हैं। तदनन्तर पूजा कर घर लौटती है। गणगौर की पूजा के पीछे पौराणिक आख्यान है। शिवपुराण के अनुसार पार्वती ने शिवजी को अपने पति के रूप मे पाने के लिये कठिन तपस्या की थी। उनकी कठिन तपस्या से प्रसन्न होकर शिवजी ने पार्वती का पति होना स्वीकार कर लिया। पति रूप मे शिवजी को पाने के बाद पार्वती जब अपने पीहर गई तो उनका अपूर्व स्वागत किया गया। तभी से गणगौर-पर्व मनाने की प्रथा चल पडी।

कूर्मपुराण में एक कथा इस प्रकार आती है—पार्वती के पिता हिमवान् ने पार्वती से स्वयवर के लिये ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, वरुण, सूर्य आदि कई देवताओ के नाम सुझाये। पर उमा ने उन देवताओ में कुछ न कुछ दोष निकालकर उन्हे अस्वीकार कर दिया। जब नीलकण्ठ शिव का नाम आया तो पार्वती ने उन्हे तुरन्त स्वीकार कर लिया। इस उपलक्ष्य मे गणगौर पर्व मनाया जाता है। वस्तुतः यह पर्व शिव-पार्वती के अटूट प्रेम का प्रतीक है।

महाकवि तुलसीदास रचित रामचरित मानस मे राम को वर के रूप मे पाने के लिये सीता ने भी पार्वती की पूजा की थी। श्रीमद् भागवत पुराण के अनुसार श्रीकृष्ण को वर के रूप मे पाने के लिये रुक्मिणी ने गौरी का पूजन किया था। पृथ्वीराज चौहान ने भी सयोगिता का अपहरण उस समय किया था, जब वह गौरी का पूजन करने मदिर मे गई थी। गणगौर के अवसर पर महिलायें मनमोहक गीत गाती है जिनकी सख्या लगभग ३५ हैं। इन गीतों में भारतीय नारी अपनी मनोदशा का सुन्दर चित्रण करती है। कुआरी कन्यायें इसी उद्देश्य से गणगौर पूजती हैं कि उन्हे सुयोग्य, स्वस्थ एवं सुन्दर वर मिले। वे गाती है :—

सोलह पोऊं सतरह खाय,<br>
हांडी रो हड़वाल।<br>
ओ वर टाळो माता गौरजा ए।<br>
मैं तनै पूजण आय।<br>
डोढी बाँधै पागड़ी ए,

सांवळियो सरदार।
ओ वर देई माता गोरजा ए,
मैं तनैं पूजण आय।

(अर्थात्—मैं सोलह रोटी बनाऊँ और वह (पति) सत्रह खाए, सम्पूर्ण हंडिया खाता-खाता खाली कर जाए और कुछ काम नहीं करे, ऐसा वर मुझे मत देना हे गौरी माता! मैं तेरी पूजा करने आई हूँ और मुझे तिरछी पगड़ी बांधने वाला सांवला सरदार वर के रूप में देना।) वर कैसा चाहिए, इस बारे में वह कहती है :—

प्रीतम तो पतळा भला,
मोटा जाट गँवार।
मंडी बैठ्या मद पीवैं,
ए लीली करो असवार।
खांगी बांधे पागड़ी,
मधुरी चालै चाल।
कण मोड, घोड़े चढ़े,
चाल निरखता जाय।
ओ वर दीज्यो माता गोरजा ए,
म्हां थनै पूजण आय।

तरुणियाँ रंग-बिरंगे परिधान पहने, नाना प्रकार से शृंगार किये हरी दूब को लेकर गणगौर पूजती है। वे गणगौर माता से मांग करती है कि जिस प्रकार हरी दूब जल्दी-जल्दी बढ़ती है उसी प्रकार मेरा और मेरे पति के बीच प्रेम बढ़े। सर्वाधिक लोकप्रिय एक गीत इस प्रकार है :—

भँवर म्हांने खेलण दो गणगौर,
म्हारी सहेल्यां जोवे बाट,
भँवर म्हांने पूजण दो गणगौर।

एक अन्य गीत के बोल इस प्रकार है—

गौर ए गणगौर माता,
खोल ए किवाड़ी।
बारे ऊबी थारे पूजण वारी।

इन गीतो मे आचलिक जीवन का सुन्दर चित्रण हुआ है। एक गीत इस प्रकार है—

म्हारी सोने सू उजळी गोरल
वाने ईसर सावलो।
जळ बादळ बिच चमके जी तारा,
साँझ पड़्या पिव लागोजी प्यारा।

यह शृंगार रस प्रधान लोकगीत है।

हाथों मे मेहदी रचाकर, सोलह शृंगार से सज-धज कर युवतियाँ गणगोर पूजती हुई गाती है—

गौर-गौर गोमती, ईसर पूजे पारवती।
वीरा म्हाने चूनर दो,
चूनर को म्हा बरत किया।
राणी पूजे राजा नैं,
म्हा पूजा म्हारा सुहाग नैं।

एक लोकगीत मे कुँआरी कन्या पति के अतिरिक्त अन्य माँग इस प्रकार रखती है—

कान कवर सो वीरो माँगा,
राई सी भोजाई।
चूड़ले वाळी बैनड़ माँगा,
ऊट चढ्यो बहनोई।

युवती कुंवर कन्हैया जैसा भाई, लावण्यमयी भोजाई, चुटीली ननद और सम्पन्न बहनोई चाहती है।

झूलो, घूमर, घुड़ला एव रुणझणियो आदि कई प्रकार के लोकगीत है जो नृत्य की ताल पर गाये जाते है। पूजन के समय गाया जाने वाला एक गीत यह है—

आज म्हारो दाड़ीजी नें गणगौर पामणा,
गाय दुवाडूं छालरी ने दूध पकाऊँ खीर।

'गणगौर की पूजा काजल, सिन्दूर, मेहदी तथा रोली आदि से की जाती है। गणगौर के पर्व पर राजस्थानी महिलायें 'घूमर' नृत्य करती है। इसमे

महिलायें सुन्दर साड़ी, घाघरे पहन कर वृत्ताकार नाचती हैं। यह नृत्य नयनाभिराम एवं आकर्षक होता है।

'घूमर' नृत्य के साथ जो गीत बोले जाते है, वे इस प्रकार है—

(१) म्हारी घूमर छँ नखराळी ए माँ······

(२) म्हारी नखराळी गणगौर, म्हारी प्यारी गणगौर......

(३) सागर पाणी लेणे जाऊँ सा, नजर लग जाय······

(४) काळे रंग री चूंदड़ी ले दे रे म्हारा वालम······

(५) काजळ भरियो कूपलो कोई पड्यो पलग अधवीच······

राजस्थान की देशी रियासतों मे गणगौर पर्व आजादी के पूर्व बहुत धूमधाम से मनाया जाता था। उदयपुर, कोटा, जयपुर, बीकानेर और जोधपुर में गणगौर की सवारी बडे राजसी ठाठ-बाट से निकाली जाती थी। मेवाड़ में उदयपुर, नाथद्वारा तथा गोगुन्दा मे यह पर्व बड़े उल्लास के साथ मनाया जाता है।

वल्लभ सम्प्रदाय के प्रधान तीर्थ-स्थल नाथद्वारा मे गणगौर का चार दिन तक मेला जुडता है। इस दौरान पहले दिन चूंदडी, दूसरे दिन हरी, तीसरे दिन गुलाबी और चौथे दिन केसरिया गणगौर होती है। सामान्यजन भी गणगौर के परिधान के अनुसार ही वस्त्राभूषण धारण करते हैं। कई पुरुष उसी रंग की पगड़ी बाँधते है।

मेला बनास नदी के तट पर स्थित गणगौर बाग मे लगता है। केसरिया गणगौर का अन्तिम दिन का मेला मोती महल मे आयोजित होता है। इन दिनों दूर-दूर गाँवों से आदिवासी स्त्री-पुरुष भी समूह के रूप में गाते-बजाते है। सायंकाल श्रीनाथ जी के मन्दिर से गणगौर की सवारी प्रारम्भ होती है। इसमें ईसर व गौरी की प्रतिमायें पालकी मे निकाली जाती है। यह शोभायात्रा गणगौर बाग मे जाकर समाप्त होती है। मार्ग मे आदिवासी महिलायें घूमर नृत्य करती है। उदयपुर मे महलों से पिछौला झील पर स्थित गणगौर घाट तक यह सवारी निकाली जाती है। पहले उदयपुर के भूतपूर्व नरेश भी इस शोभा यात्रा में भाग लेते थे। महाराणा गणगौर घाट पर एक विशेष नौका मे सवार होते। इस नौका मे विशिष्ट रूप से कलात्मक सजावट होती। महाराणा के साथ अन्य सरदार, सामन्त, उमराव भी अपने पद-प्रतिष्ठा के अनुसार स्थान पाते। एक नौका मे सौ के लगभग व्यक्ति बैठते। इसी नौका के साथ एक अन्य नौका होती

जसमें अन्य सामन्त सरदार होते और नृत्य करने वाली वारांगनायें भी होतीं। रे पिछोला झील का चक्कर लगाकर नौकायें पुनः गणगौर घाट पर लौटतीं। इसके पश्चात् महाराणा गणगौर माता की पूजा-आराधना करते। पुरोहित इस कार्य में उनकी मदद करते और उन्हें आशीर्वाद देते।

आज भी गणगौर की शोभा यात्रा निकलती है पर कचोट यह है कि अब वे ठाठ-बाट कहाँ? अब वह उल्लास कहाँ?



# साहित्यिक-सांस्कृतिक राजस्थान

❑ श्रीमती कमला अग्रवाल

सस्कृति एव साहित्य की दृष्टि से राजस्थान भारतवर्ष के समृद्धतम प्रदेशो मे से एक है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी राजस्थान भारत के उन विरल प्रदेशों मे से है, जिनका नाम अपनी गौरवमयी परम्पराओं के लिए बहु-विश्रुत रहा है। राजस्थान को 'भारत की वीर-भूमि' कहा गया है। यहाँ का इतिहास भारत की वीरता का इतिहास है। यही नही, राजस्थान की धरती प्राचीनता की दृष्टि से अपनी विलक्षण पहचान रखती है। पुरातत्त्व-शास्त्रियों के मतानुसार इस प्रदेश के बीकानेर, जैसलमेर और जोधपुर के सभागों मे कभी हड़प्पा-मोहन-जोदडो के समान ही प्रागैतिहासिक बस्तियाँ थी। प्रवाद के अनुसार महर्षि कपिल बीकानेर के कोलायत स्थान मे हुए, जिनका स्वतत्र दर्शन साख्य मत के रूप मे प्रसिद्ध है। अजमेर के सुप्रसिद्ध तीर्थस्थल पुष्कर के सम्बन्ध मे यह जन-धारणा है कि ब्रह्मा ने सृष्टि-रचना के पश्चात् इसी स्थल को यज्ञ करने के लिए चुना था।

चौरासी जातियो की नामावली मे बहुत-सी जातियो के नाम राजस्थान के किसी नगर विशेष से सम्बधिन्त हैं। श्री मालापुर से श्रीमाल जाति प्रसिद्ध हुई। इसी तरह ओसिया से ओसवाल, खडेला से खडेलवाल, पाली से पल्लीवाल, प्राग्वाट प्रदेश से पोरवाल, मेडता से मेड़तवाल, डीडवाना से डीडू, जालोर से सोनगरा, साचोर से साचोरा, हर्षपुर या हरसोर से हरसोला, चित्तौड से चित्तौडा, नागोर से नागोरी, मेवाड से मेवाडा आदि जातियाँ प्रसिद्ध हुई।

जिस स्थान की महिमा का पार चन्द्र (चन्दवरदाई) और सूरज (सूर्य्यमल मिश्रण) की लेखनी भी पूरी तरह पा नही सकी, वहाँ के क्षात्रधर्म का सम्पूर्ण चित्र कौन, कैसे खीच सकता है? जब सरस्वती नदी समुद्र तक बहती थी, उस पुण्य युग मे यह मरु-भूमि सलिलार्णव के नीचे छिपी हुई थी। विधाता के विशेष प्रसाद से वीर रस ने अपने निवास के लिए इस भू-भाग को सागर-गर्भ से प्राप्त

किया था। यहाँ के रण-बाँकुरे नर-पुंगवों और आर्य-देवियों के चरित्रों का गान करके कविगण अनन्त काल तक अपनी लेखनी को पवित्र करते रहेंगे। राजस्थान का प्रत्येक स्थान एक न एक वीर की कीर्तिगाथा से सम्बद्ध है। यहाँ पद-पद पर आर्यनारियों ने सहस्रों की सख्या मे सनातन सतीत्व की रक्षा के लिए हँसते-खेलते आत्म-बलि दी है। इसके अर्बुद पर्वत की दुर्गम घाटियों ने अनेक बार राजस्थान की आकुल मर्यादा को बचाया है। बापा रावल, समरसी, राणा कुम्भा तथा सागा जैसे वीर इसी राजस्थान मे हुए है। हिन्दू जाति को स्वातन्त्र्य का पाठ पढाने वाले अमर आचार्य महाराणा प्रताप सिंह ने यहीं सिसोदिया वश की मान-रक्षा के लिए ससार प्रसिद्ध हल्दीघाटी के युद्ध मे असंख्य यवन-सेना का वध किया था। जिस नीले चेतक के अश्वारोही का चरित्र राजस्थान के प्रत्येक घर मे आज भी गाया जाता है, उस वीर केशरी का यश जब तक भारत वसुन्धरा के युवकों में प्राण है, तब तक अक्षुण्ण बना रहेगा।

राजस्थान ने किसी समय यौधेय तथा मालवगणों को शरण दी थी। पजाब-हरियाणा के समान ही राजस्थान की भूमि भी अनेक गणराज्यों की जननी रही है, उनके अंको से चिह्नित मुद्राएँ आज भी मिलती हैं। यहाँ की मध्यमिका नगरी किसी समय शिवि जनपद की राजधानी थी, जिसमे वासुदेव का भी धाम था। बेड़च नदी के किनारे यह एक बड़ा आबाद नगर था। नगरी नाम से यहाँ आज भी एक छोटा-सा गाँव बसा हुआ है, जिसके आस-पास बिखरे पडे टूटे-फूटे कुछ खण्डहर आज भी पुरातत्त्व-वेत्ताओं को राजस्थान की प्रायः सबसे पुरातन राजधानी के अस्तित्व की गाथा सुना रहे है। एक पुराना शिलालेख भी यहाँ मिला है, जो प्राचीन ब्राह्मी लिपि में लिखा हुआ है और जिसकी भाषा सस्कृत है। भारतवर्ष मे अब तक जितने सस्कृत-लेख मिले है, उनमे यह प्राचीनतम है। लिपि-विज्ञान के आधार पर विद्वानो ने इसका समय कम से कम विक्रम पूर्व २५० से ३०० वर्ष तक का स्वीकार किया है। इस मध्यमिका का सबसे पहला उल्लेख आचार्य पतञ्जलि के 'व्याकरण महाभाष्य' में मिलता है। उनके समय से अर्थात् विक्रम सवत् के प्रारम्भ से प्रायः एक सौ वर्ष पूर्व किसी यवन राजा ने मध्यमिका पर आक्रमण किया था। यह यवन राजा पुराविदों के मतानुसार ग्रीक शासक मिनेंडर (१८०-१६० ई. पू.) तथा डिमिट्रियस माने जाते हैं। उस समय मध्यमिका के शासक कौन थे ? इसका कुछ पता नही लग पाया है। सभवतः मध्यमिका में शिवि जाति के लोगो का जनतन्त्रात्मक शासन था, जिनके कई सिक्के यहाँ मिले है। नगरी के आस-पास के पुराने खण्डहरो से ज्ञात होता

है कि अपने समय में यह स्थान बड़ा समृद्धिशाली और आबाद रहा होगा। यहाँ पर बौद्ध धर्म के ज्ञापक कुछ स्तूप भी मिले हैं। जैन-साहित्य के उद्धरणों से ज्ञात होता है कि जैन-सम्प्रदाय वालों का भी यहाँ एक प्रसिद्ध केन्द्र था। जैन-साधुओं की एक स्वतंत्र-परम्परा ही इस स्थान के नाम से अर्थात् 'माध्यमिक शाखा' के नाम से प्रसिद्ध हुई है। यहाँ क्षत्रपों के समय के भी अनेक सिक्के मिले हैं तथा गुप्तकालीन स्थापत्य के कुछ अवशेष भी उपलब्ध हुए हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि गुप्तकाल में भी इस स्थान का महत्त्व अक्षुण्ण रहा।

जैसलमेर में प्राप्त 'कुमारपाल चरित्र' नामक एक संस्कृत-ग्रंथ में चित्रकूट अर्थात् चित्तौड़गढ़ की उत्पत्ति का विश्वसनीय ऐतिह्य विवरण दिया हुआ है। इस विवरण के अनुसार मध्यमा (माध्यमिका या मध्यमिका) नामक प्राचीन नगरी में चित्रांगद नाम का कोई राजा राज्य करता था। उसने समीप के चित्र-गिरि पहाड़ पर एक सुविशाल एवं सुदृढ़ किला बनवाया, जिसका नाम चित्रकूट रखा और मध्यमा नगरी से राजधानी हटाकर इस चित्रकूट को ही अपनी नूतन राजधानी बनाया। थोड़े ही समय में चित्रकूट बहुत आबाद हो गया। हज़ारों-लाखों की संख्या में लोग यहाँ आकर बस गये। पहाड़ के ऊपर किले में जब लोगों को बसने की जगह नहीं मिली तो फिर तलहटी में बस्ती बसाई गई।

इसी राजस्थान में विराटनगर' था, जहाँ पाण्डु कुल के वंशतंतु को अवि-च्छिन्न रखने वाली देवी उत्तरा का जन्म हुआ था। यहीं दक्षिण में महाकवि माघ की जन्म भूमि श्री माल नगरी' है। राजस्थान के क्षत्रियों के छत्तीस कुलों का पृथक्-पृथक् विस्तृत वर्णन प्रायः असम्भव ही है। पद्मिनी और दुर्गावती को जन्मभूमि को आर्य संतान अब भी श्रद्धा के साथ प्रणाम करती है। भक्ति-स्रोत-स्विनी मीराबाई का स्मरण करके भारतीय महिलाओं के मुख-मंडल आज भी जगमगा उठते हैं।'

भक्ति-रस का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य में किसी न किसी कोटि का पाया ही जाता है। राधा-कृष्ण को लेकर प्रत्येक प्रांत ने साधारण या उच्च कोटि का साहित्य निर्मित किया है, लेकिन राजस्थान ने अपने रक्त से जो साहित्य निर्मित किया है उसकी जोड़ का साहित्य और कहीं नहीं पाया जाता और उसका कारण है—राजस्थानी कवियों ने कठिन सत्य के बीच में रहकर युद्ध के नगाड़ों के बीच अपनी कविताएँ बनाई थीं। प्रकृति का ताण्डव रूप उनके सामने था। क्या आज कोई कवि अपनी भावुकता के बल पर फिर वह काव्य-निर्माण कर सकता है? राजस्थानी भाषा के साहित्य में जो एक प्रकार का भाव है—

जो उद्वेग है, वह राजस्थान का खास अपना है। वह केवल राजस्थान के लिए ही नहीं, सारे भारतवर्ष के लिए गौरव की वस्तु है। राजस्थान का यह साहित्य कवियों के अन्तस्तल से निकला है।[¹]

केवल वीरता के क्षेत्र में ही नहीं, संगीत कला, चित्रकला और साहित्य के क्षेत्र में भी इस प्रदेश ने अत्यधिक प्रसिद्धि प्राप्त की है। यहाँ के रागों में 'मीराबाई का मलार' बहुत प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त राग माँड और राग सिन्धु राजस्थान के अपने हैं। शृंगार रस के लिए बहुत ही उपयुक्त राग मांड का उत्पत्ति-स्थल जैसलमेर माना गया है।[¹] राग सिन्धु[¹] वीर रस का राग है। रण के लिए प्रयाण करते समय ढोली और ढाढी लोग इसे सेना के आगे गाते हुए चलते थे। डिंगल के कवियों ने इसका वर्णन किया है। संगीत शास्त्र सम्बन्धी प्राचीन संस्कृत-ग्रंथों में इस राग का नामोल्लेख नहीं मिलता। संगीत-शास्त्र विषयक कई उत्कृष्ट ग्रंथ भी यहाँ लिखे गये है, जिनमे संगीत कला के विविध अंगों का सूक्ष्म एवं वैज्ञानिक विवेचन मिलता है। इनमें मेवाड़ के महाराणा कुंभा के रचे तीन ग्रंथ—'संगीत की मीमांसा', 'संगीत राज' और 'सूड-प्रबन्ध'—बहुत ख्याति प्राप्त है। जयपुर के कछवाहा राजा भगवत दास के पुत्र संगीत-प्रेमी माधव सिंह ने खान देश के पुंडरीक विट्ठल से 'राग मंजरी' ग्रंथ लिखवाया था।[²] महाराजा प्रतापसिंह (जयपुर) के समय में 'राधा गोविन्द-संगीत सार', 'राग-रत्नाकर' और 'स्वर-सागर' जैसे उत्कृष्ट कोटि के ग्रंथ लिखे गये।[¹] महाराजा अनूपसिंह (बीकानेर) ने भी अपने आश्रित प. भाव भट्ट से 'संगीत-अनूपांकुश', 'अनूप संगीत-विलास' और 'अनूप संगीत-रत्नाकर' ग्रंथ बनवाये थे।[¹] राजस्थान के राजकीय चित्रालयों तथा राजपूत सरदारों के घरों में पुराने चित्र बहुत बड़ी संख्या में मिल जाते है। इन राजस्थानी शैली के चित्रों में देवी-देवताओं, राग-रागिनियों, पौराणिक कथाओं, सामन्तों, युद्ध-घटनाओं आदि के चित्र अधिक देखने में आते है। इन चित्रों की मुख्य विशेषताएं हैं—रंगों की उज्ज्वलता, कल्पना की सुघड़ता और वातावरण की तीव्रता। इन चित्रों में कई ऐसे भी हैं, जिन पर मुगल-शैली का प्रभाव दिखलाई देता है।

संस्कृत, राजस्थानी, फ़ारसी आदि भाषाओं के चित्रित ग्रंथ भी राजस्थान में बहुत मिलते है। रामायण, महाभारत, पृथ्वीराज रासो आदि प्रसिद्ध ग्रंथों से सम्बन्धित प्रमुख-प्रमुख घटना-चक्रों के चित्र चित्रित किये गये हैं पर 'बिहारी-सतसई' जैसे शृंगारिक ग्रंथ के प्रत्येक दोहे का चित्रांकन किया गया है। जयपुर के पोथी खाने में रक्षित महाभारत का फ़ारसी में सारांश 'रज़मनामा' की सचित्र

प्रति में 169 चित्र हैं, जिन पर चार लाख रुपये व्यय हुए थे और अकबरी दरबार के चौदह चित्रकारों ने इस पर काम किया था।" यह ग्रंथ भारतीय चित्रकला भण्डार का अनमोल रत्न है। इसी प्रकार की चित्रित पोथियों का सब से बड़ा संग्रह उदयपुर के सरस्वती भण्डार में है।

राजस्थान के कई स्थानों में शिल्प-चातुर्य के भी उत्कृष्ट उदाहरण उपलब्ध होते हैं। उदयपुर से कोई 125 मील पूर्व दिशा में बाड़ोली गांव नवीं-दसवीं शताब्दियों में समृद्ध होकर भद्रावती के नाम से विद्यमान था। यहाँ शिव-विष्णु त्रिमूर्ति आदि के कई जीर्ण-शीर्ण मंदिर हैं, जिनकी कारीगरी की भारतीय शिल्प के विशेषज्ञ फर्ग्यूसन ने बहुत प्रशंसा की है और शेष-शायी नारायण की मूर्ति को अब तक देखी हुई हिन्दु-मूर्तियों में सर्वोत्तम कहा है।" कर्नल टॉड ने भी इन मंदिरों की शैली और सुन्दर खुदाई की बहुत प्रशंसा की है। 'बाड़ोली के मन्दिरों की विचित्र और भव्य बनावट का यथावत् वर्णन करना लेखनी की शक्ति के बाहर है। यहाँ मानो हुनर का खजाना खाली कर दिया गया है। उनके स्तंभ, छतें और शिखर का एक-एक-पत्थर छोटे से मंदिर का दृश्य बतलाता है। प्रत्येक स्तंभ पर खुदाई का काम इतना सुन्दर और बारीकी के साथ किया गया है कि उसका वर्णन नहीं हो सकता। ये मंदिर सैंकड़ों वर्षों के पुराने होने पर भी अब तक अच्छी स्थिति में खड़े हैं।"

ये मन्दिर कब बने, इसका ठीक-ठीक निर्णय अभी तक नहीं हो पाया, पर वहाँ पर उत्कीर्ण छोटे-छोटे लेखों में से एक विक्रम संवत् 983 (ई. सन् 926) का है। यद्यपि इस लेख से इनके बनने के सम्बन्ध में प्रकाश नहीं पड़ता पर यह तो निश्चित ही है कि उक्त संवत् से पहले ये मन्दिर बन चुके थे। ये आबू (देलवाडा) के मन्दिरों से भी प्राचीन है पर वहां जाना श्रम-साध्य है क्योंकि मार्ग दुर्गम पर्वत श्रेणियों में से होकर निकलता है। संभवतः इसीलिए भारत के इन सर्वश्रेष्ठ मन्दिरों को देखने का परम सौभाग्य अब तक अधिक पुरुषों को प्राप्त नहीं हो पाया है।

इसी प्रकार आबू, चित्तौड़गढ़, जगत (उदयपुर), नागदा, चंद्रावती, झालरा-पाटन आदि स्थानों के कुछ प्राचीन देवालयों में खुदाई का काम इतना सुन्दर और बारीकी के साथ किया गया है कि उसे देखकर चकित हो जाना पड़ता है। प्राचीन समय में राजस्थान के मेवाड संभाग में शिल्पकला बहुत ही उन्नत स्थिति में थी। बाड़ोली, नागदा और चित्तौड़ के अतिरिक्त मैंनाल, बीजोल्या, तिलस्मा, धौड़ आदि के कई मन्दिरों में तत्कालीन तक्षण कला के अपूर्व

आदर्श प्राप्त होते है। मैंनाल (भीलवाड़ा) एक छोटा-सा पुराना गाँव है जो अब करीब-करीब उजड़ा पड़ा है पर यहाँ पहले अच्छी बस्ती होने के आभास मिलते हैं। यहाँ कई पुराने मदिर हैं, जिनमे श्वेत पाषाण का बना महानाल देव का विशाल शिवालय प्रमुख है और इसी के नाम से इस गाँव का नाम महानाल (मैंनाल) पड़ा है। मदिर के द्वार पर लकुलीश[5] की मूर्ति बनी है। इसी मदिर के पीछे एक सुन्दर कुआ है, जहाँ से ऊँचे-ऊँचे स्तम्भो पर निर्मित पाषाण की नाली से मन्दिर मे जल पहुँचता था। मदिर के आगे सुन्दर खुदाई के काम वाले तोरण हैं। इस मंदिर के साथ पास ही दुमजिला मठ भी है जिसकी मजिल के एक स्तंभ पर अजमेर के चौहान राजा पृथ्वीराज (पृथ्वी भट्ट) द्वितीय के समय का वि. सं. १२२६ (ई. सन् ११६९) का लेख (जिसमें मास, पक्ष, तिथि नही दी हुई है) खुदा है जिससे ज्ञात होता है कि यह मठ उक्त राजा के राज्य-काल मे भाव ब्रह्म मुनि (साधु) ने बनवाया था।

महानाल के मन्दिर के आगे कई शिव-मन्दिर भग्नावस्था मे पडे है, जो वहाँ के महन्तों की समाधियों पर बने प्रतीत होते है। यहाँ से कुछ दूर चौहान पृथ्वीराज (द्वितीय) की रानी सुहव (सुहाव) देवी (रूठी रानी) के महल और उसी का बनवाया हुआ सुहवेश्वर नामक शिवालय है, जो वि. स. १२२४ मे बना था ऐसा वहाँ के लेख से ज्ञात होता है। मैंनाल मे एक सुन्दर विशाल कुण्ड भी इस समय गिरी दशा में है, जहाँ अब झरना गिरता है। कर्नल टॉड को यहाँ से एक शिला लेख वि. स. १४४६ का मिला था, जो हाडा शाखा के चौहानों के प्राचीन इतिहास के लिए बड़ा उपयोगी है पर अब वहाँ उसका पता नही लगता। संभव है टॉड अन्य शिलालेखों के साथ उसे भी इंगलैण्ड ले गये हों।

---

१. यही मत्स्य प्रदेश की राजधानी थी जहाँ पाण्डवो ने द्रौपदी के साथ अज्ञातवास का तेरहवाँ वर्ष व्यतीत किया था।
२. इसको 'लक्ष्मी देवी का निवास-स्थान' माना जाता रहा है। इस नगर के माहात्म्य के रूप मे 'श्रीमाल माहात्म्य या पुराण' प्राप्त है।
३. डा. वासुदेव शरण अग्रवाल। 'मातृ भूमि' शीर्षक निबन्ध।
४. १८ फरवरी १९३७ को राजस्थान रिसर्च सोसाइटी, कलकत्ता के प्रागण मे विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा सभापति पद से प्रदत्त भाषण का अश।
५. गौ. ही. ओझा : राजपूताने का इतिहास (पहली जिल्द) पृ. ३१
६. उदयपुर के सरस्वती भण्डार मे 'रागमाला' की एक चित्रित प्रति है। यह

प्रति में 169 चित्र हैं, जिन पर चार लाख रुपये व्यय हुए थे और अकबरी दरबार के चौदह चित्रकारों ने इस पर काम किया था।[10] यह ग्रंथ भारतीय चित्रकला भण्डार का अनमोल रत्न है। इसी प्रकार की चित्रित पोथियों का सब से बड़ा सग्रह उदयपुर के सरस्वती भण्डार मे है।

राजस्थान के कई स्थानों में शिल्प-चातुर्य के भी उत्कृष्ट उदाहरण उपलब्ध होते है। उदयपुर से कोई 125 मील पूर्व दिशा मे बाड़ोली गाव नवी-दसवी शताब्दियो मे समृद्ध होकर भद्रावती के नाम मे विख्यात था। यहाँ शिव-विष्णु त्रिमूर्ति आदि के कई जीर्ण-शीर्ण मदिर हैं, जिनकी कारीगरी की भारतीय शिल्प के विशेषज्ञ फर्ग्यूसन ने बहुत प्रशंसा की है और शेष-शायी नारायण की मूर्ति को अब तक देखी हुई हिन्दु-मूर्तियो मे सर्वोत्तम कहा है।[11] कर्नल टॉड ने भी इन मदिरों की शैली और सुन्दर खुदाई की बहुत प्रशसा की है। 'बाड़ोली के मन्दिरो की विचित्र और भव्य बनावट का यथावत् वर्णन करना लेखनी की शक्ति के बाहर है। यहाँ मानो हुनर का खजाना खाली कर दिया गया है। उनके स्तभ, छतें और शिखर का एक-एक-पत्थर छोटे से मदिर का दृश्य बतलाता है। प्रत्येक स्तभ पर खुदाई का काम इतना सुन्दर और बारीकी के साथ किया गया है कि उसका बर्णन नही हो मकता। ये मदिर सैकड़ों वर्षों के पुराने होने पर भी अब तक अच्छी स्थिति में खडे है।'[12]

ये मन्दिर कब बने, इसका ठीक-ठीक निर्णय अभी तक नही हो पाया, पर वहाँ पर उत्कीर्ण छोटे-छोटे लेखों में से एक विक्रम सवत् 983 (ई. सन् 926) का है। यद्यपि इस लेख से इनके बनने के सम्बन्ध मे प्रकाश नहीं पड़ता पर यह तो निश्चित ही है कि उक्त सवत् से पहले ये मन्दिर बन चुके थे। ये आबू (देलवाडा) के मन्दिरों से भी प्राचीन है पर वहा जाना श्रम-साध्य है क्योंकि मार्ग दुर्गम पर्वत श्रेणियो में से होकर निकलता है। संभवतः इसीलिए भारत के इन सर्वश्रेष्ठ मन्दिरों को देखने का परम सौभाग्य अब तक अधिक पुरुषों को प्राप्त नही हो पाया है।

इसी प्रकार आबू, चित्तौड़गढ, जगत (उदयपुर), नागदा, चद्रावती, झालरा-पाटन आदि स्थानो के कुछ प्राचीन देवालयो मे खुदाई का काम इतना सुन्दर और बारीकी के साथ किया गया है कि उसे देखकर चकित हो जाना पड़ता है। प्राचीन समय में राजस्थान के मेवाड़ सभाग मे शिल्पकला बहुत ही उन्नत स्थिति में थी। बाड़ोली, नागदा और चित्तौड़ के अतिरिक्त मैंनाल, बीजोल्या, तिलस्मा, घोड़ आदि के कई मन्दिरो मे तत्कालीन तक्षण कला के अपूर्व

आदर्श प्राप्त होते है। मैंनाल (भीलवाड़ा) एक छोटा-सा पुराना गाँव है जो अब करीब-करीब उजड़ा पड़ा है पर यहाँ पहले अच्छी वस्ती होने के आभास मिलते हैं। यहाँ कई पुराने मंदिर है, जिनमें श्वेत पाषाण का बना महानाल देव का विशाल शिवालय प्रमुख है और इसी के नाम से इस गाँव का नाम महानाल (मैंनाल) पड़ा है। मंदिर के द्वार पर लकुलीश" की मूर्ति बनी है। इसी मंदिर के पीछे एक सुन्दर कुआ है, जहाँ से ऊँचे-ऊँचे स्तम्भो पर निर्मित पाषाण की नाली से मन्दिर में जल पहुँचता था। मंदिर के आगे सुन्दर खुदाई के काम वाले तोरण हैं। इस मंदिर के साथ पास ही दुमंजिला मठ भी है जिसकी मंजिल के एक स्तंभ पर अजमेर के चौहान राजा पृथ्वीराज (पृथ्वी भट्ट) द्वितीय के समय का वि. सं. १२२६ (ई. सन् ११६६) का लेख (जिसमे मास, पक्ष, तिथि नही दी हुई है) खुदा है जिससे ज्ञात होता है कि यह मठ उक्त राजा के राज्य-काल मे भाव ब्रह्म मुनि (साधु) ने बनवाया था।

महानाल के मन्दिर के आगे कई शिव-मन्दिर भग्नावस्था मे पडे है, जो वहाँ के महन्तों की समाधियों पर बने प्रतीत होते है। यहाँ से कुछ दूर चौहान पृथ्वीराज (द्वितीय) की रानी सुहव (सुहाव) देवी (रूठी रानी) के महल और उसी का बनवाया हुआ सुहवेश्वर नामक शिवालय है, जो वि. स. १२२४ में बना था ऐसा वहाँ के लेख से ज्ञात होता है। मैंनाल मे एक सुन्दर विशाल कुण्ड भी इस समय गिरी दशा में है, जहाँ अब झरना गिरता है। कर्नल टॉड को यहाँ से एक शिला लेख वि. सं. १४४६ का मिला था, जो हाड़ा शाखा के चौहानों के प्राचीन इतिहास के लिए बड़ा उपयोगी है पर अब वहाँ उसका पता नही लगता। संभव है टॉड अन्य शिलालेखों के साथ उसे भी इगलैण्ड ले गये हो।

---

१. यही मत्स्य प्रदेश की राजधानी थी जहाँ पाण्डवों ने द्रौपदी के साथ अज्ञातवास का तेरहवाँ वर्ष व्यतीत किया था।
२. इसको 'लक्ष्मी देवी का निवास-स्थान' माना जाता रहा है। इस नगर के माहात्म्य के रूप में 'श्रीमाल माहात्म्य या पुराण' प्राप्त है।
३. डा. वासुदेव शरण अग्रवाल। 'मातृ भूमि' शीर्षक निबन्ध।
४. १८ फरवरी १९३७ को राजस्थान रिसर्च सोसाइटी, कलकत्ता के प्रागण मे विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा सभापति पद से प्रदत्त भाषण का अश।
५. गौ. ही. ओझा . राजपूताने का इतिहास (पहली जिल्द) पृ. ३१
६. उदयपुर के सरस्वती भण्डार में 'रागमाला' की एक चित्रित प्रति है। यह

सभवत: महाराणा जयसिंह के राजत्व काल (सं. १७३७-५५) में निर्मित की गई थी। इसमें राग सिन्धु को राग दीपक का पुत्र बतलाया है। इसमें राग सिन्धु का एक भव्य चित्र भी है।

७. गौ ही. ओझा : राजपूताने का इतिहास (पहली जिल्द) पृ. ३२।

८. व्रज निधि ग्रथावली (ना. प्र. सभा द्वारा प्रकाशित) भूमिका पृ ४८

९ गौ. ही. ओझा . बीकानेर राज्य का इतिहास पृ. २८६

१० टी. एच. हैडले : मैमोरियल्स ऑव् दि जयपुर इग्जिबिशन (भाग चतुर्थ) भूमिका पृ. २

११. दि हिस्ट्री ऑव् इण्डियन ईस्टर्न आर्किटेक्चर, पृ. १३४

१२. दि एनाल्स एण्ड एंटिक्विटीज ऑव् राजस्थान (कुक्स-संस्करण पृ. १७५२-१७६४।

१३. लकुलीश (लकुटीश) शिव के अठारह अवतारो मे से एक है। प्राचीन काल मे शैव-सम्प्रदायों मे लकुलीश सम्प्रदाय अति प्रसिद्ध था। एतदर्थ अब तक समस्त राजस्थान, मालवा, गुजरात, बंगाल व दक्षिण तक मे लकुलीश की मूर्तियाँ मिलती है। लकुलीश की मूर्ति के सिर पर जैन-मूर्तियों के समान केश होते है जिससे कोई-कोई उसे जैन मूर्ति मान लेते है। यह द्वि-भुज होती है, उसके बायें हाथ में लकुट (दंड) रहता है, जिससे लकुलीश (लकुटीश) नाम पडा और दाहिने हाथ मे बिजोरा फल होता है, जो शिव की त्रिमूर्तियों के मध्य के दो हाथो मे से एक हाथ मे पाया जाता है। यह मूर्ति पद्मासन पर बैठी होती है। लकुलीश की किसी-किसी मूर्ति के नीचे नदी और कही-कही दोनो तरफ एक-एक जटाधारी साधु भी होता है। इस समय इस सम्प्रदाय के अनुयायी नही रहे। यहाँ तक कि लोग बहुधा इस सम्प्रदाय का नाम तक भूल गये हैं पर प्राचीन काल मे इसके मानने वाले कई थे, जिनमे मुख्य कनफड़े (नाथ) साधु रहे होंगे, ऐसा अनुमान है। इस सम्प्रदाय के अनुयायी लकुलीश को शिव का अवतार मानते हुए उसका उत्पत्ति-स्थल कायावरोहण (कायारोहण, कार वान् -बड़ौदा राज्य में) बतलाते थे। लकुलीश उक्त सम्प्रदाय का प्रवर्तक होना चाहिए। उसके मुख्य चार शिष्यों के नाम कुशिक, गर्ग, मित्र व कौरुष्य मिलते है। श्री एकलिंग जी (उदयपुर-मेवाड़) के पुजारी कुशिक की शिष्य परम्परा से सम्बन्धित थे, जिनमे से हारीत राशि (ऋषि) बापा का गुरु माना जाता है।

□

# शकुन बत्तीसी

☐ श्रीमाली श्रीवल्लभ घोष

राजस्थान प्रान्त की एक लोकप्रिय रचना "शकुन बत्तीसी" है जो 32 दोहो मे पूर्ण होती है। यह रचना लोक साहित्य की धरोहर है। पूरी रचना शकुन शास्त्र के सिद्धान्तों पर आधारित है। जन मानस शकुन प्रिय होता है इसलिए यह रचना इतनी लोकप्रिय हो गई कि इसके दोहे लोक जीवन मे सर्वत्र प्रचलित हो गये। रचना मे शकुन के लक्षणों व फलो का वर्णन है। प्रत्येक दोहे के तृतीय चरण में "सुकन विचारो पथियो" का प्रयोग समान रूप से हुआ है। नौ दोहो में यह चरण नही है। दोहाकार का नाम और रचनाकाल मूल दोहों मे नही मिलता है। आरम्भ मे जो शीर्षक है उसमें "राव जोधाजी अनै हरभूजी रा कह्या" मिलता है। इस प्रकार इस रचना का सम्बन्ध दो महान् ऐतिहासिक व्यक्तियों से है।

इस रचना की पाँच प्रतियाँ मेरे देखने मे आई। चार प्रतियाँ हस्तलिखित है तथा पाँचवी प्रति एक मुद्रित प्रतिलेख रूप में है। इनका विवरण इस प्रकार है—

(1) सवत् १८७६ की लिखी, दस पत्रों में पूर्ण प्रति मेरे निजी सग्रहालय मे है। प्रति का आकार ६"×४" है। इसका कागज व स्याही लिपिकाल के अनुरूप है। रचना का शीर्षक व पुष्पिका इस प्रकार है—

आरम्भ—॥श्री गणेपायनमः॥ अथ सुकन वत्तीसी लिप्यते राव जोधाजी अनै हरभूजी रा कह्या ॥

पुष्पिका—इति सुकन वत्तीसी सम्पूर्णः॥ संवत् १८७६ चैत्र सुदि ६ गुरुवारे : लिखतु जोसी सवाईराम सोजत रा ॥ जोधपुर नगरे लिप्यत् ॥

(2) सवत् १८०४ की मेड़ता मे लिखी दूसरी प्रति है जो इस समय राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के सग्रह मे ग्रन्थ सख्या १७१७७ पर

संग्रहीत है। इसकी पुष्पिका मे हरभुजी कृत होने का उल्लेख है। "सांखला हरभम् जी कृत सम्पूर्ण।"

(३) यह प्रति १८६२ सवत् की कटालिया ग्राम मे लिखी गई। यह रा. प्रा. वि. प्र. के सग्रह में ग्रन्थ सख्या १२७७७ पर सग्रहीत है।

(४) यह प्रति संवत् १६४४ की लिखी है और राजस्थानी शोध सस्थान, चौपासनी मे ग्रन्थ सख्या ५४/८ पर सग्रहीत है। इस प्रति के आरम्भ मे राव जोधा और हरभूजी का उल्लेख है। इस प्रति मे लिपिकार की भूल से २६ सख्या वाला दोहा नही है और अन्त मे अतिम दोहे के बाद ॥ ३३ ॥ लिखा गया है।

(५) श्री सौभाग्यसिह शेखावत उप निदेशक रा. शो. स., चौपासनी (जोधपुर) की हस्तलिखित प्रति मेवाड मे मिली थी। उसकी प्रतिलिपि करके उन्होने सकुन बत्तीसी को एक लेख रूप मे जयपुर से प्रकाशित मासिक पत्र संघ-शक्ति (वर्ष ५ अक २ पृष्ठ ३४-३६) मे प्रकाशित कराई। इस मुद्रित दोहावली मे २८ दोहे है। जान पडता है श्री शेखावत जी को कोई खण्डित या अपूर्ण प्रति मिली होगी।

उपर्युक्त पाँचों प्रतियों में रा. प्रा. वि. प्र. की दोनो प्रतियाँ प्राचीन हैं पर ये गुटकों में कई अन्य कृतियों के साथ है तथा लिपि व भाषा भी सुपाठ्य और सहज नहीं है। चौपासनी की प्रति आधुनिक व प्रतिलिपि असावधानी से की जान पडती है। श्री शेखावत की प्रति अपूर्ण है अत मेरे निजी संग्रहालय की प्रति पूर्ण सुपाठ्य और विश्वसनीय जान पडती है।

रचनाकार के सम्बन्ध में प्रतियों के आरम्भ और पुष्पिकाओं को देखकर जानकारी मिलती है कि श्री हरभू जी ने राव जोधाजी को ये दोहे सुनाये थे। इस प्रकार हरभू जी साँखला इनके रचनाकार थे या उन्होने भी जन मानस से सुनकर उन्हे सुनाया था। राव जोधा जी व हरभू जी साँखला ऐतिहासिक पुरुष है। राव जोधा जी को १५ वर्षों तक दर-दर भटकना पड़ा था। इस संकट काल मे राव जोधा जी फलोदी परगने के गाँव बूंगटी मे सिद्धपुरुष हरभू जी की सेवा मे रहे। इनसे ज्ञान व विवेक मिला और अन्त में राव जोधा जी को सहायता भी मिली, उनका खोया अधिकार मण्डोर पर हुआ। सवत् १५१५-१६ मे नया किला बनवाकर जोधपुर नगर की स्थापना की। हरभूजी की अन्य कोई रचना नही मिलती है। रचना की भाषा १६ वी शताब्दी की नही जान पड़ती। इसलिए जब तक नई सामग्री उपलब्ध नही होती तब तक हरभूजी द्वारा श्री जोधाजी के कहे दोहे ही मानना होगा। हस्तलिखित प्रतियो मे पाठ

प्रकृतियाँ भी पाई गई है। शब्दों की लिखावट में अन्तर तो है ही पर अनुस्वार : मात्राओं की भूलें भी की गई है। इस स्थान मे ३२ दोहों का सकलन है पर क्रम एक-सा नही है। सवत् १८०४, १८६२ और १८७६ की प्रतियों का क्रम एक-सा है।

प्रत्येक दोहे के तीसरे चरण मे "सकुन विचारो पथिया" मे शकुन विचारने का जो प्रश्न है वह किसी पथिक को सम्बोधित है। विषय के अध्ययन से इतना ही ज्ञात होता है कि किसी भी यात्रा के समय आरम्भ मे पथिक को किन-किन लक्षणों के आधार पर शकुन मानने चाहिये।

इस रचना मे जिन प्राणियो या वस्तुओं के दाँये बाँए या आगे पीछे आने-जाने या दर्शन होने पर जो शकुन प्रभावित होते है वे इस प्रकार है :—राजा, भैरव, हल, मोर, मुर्गा, (कुर्कुट), माल्हाली, खर, विष, दही, नारी, कुम्हार बंदर, हरिण, साँड, सारस, कौआ, साधु, ब्राह्मण, गाय, वैश्य, आग, बैलगाड़ी, आटा, पत्थर, घी, घड़ा, लोमडी, आदि !

यह रचना लोक समुदाय मे बहुत अधिक प्रचलित होने के कारण सुभाषित के रूप में प्रयोग आती रही है। इसकी भाषा का स्वरूप बहुत कुछ आधुनिक राजस्थानी का-सा हो गया है। राजस्थानी भाषा की उच्चारण विशेषता के कारण हिन्दी के शब्दों मे रूप परिवर्तन हुआ है। व्याकरण की दृष्टि से मात्राएँ लघु-दीर्घ पाई जाती है और हिन्दी के शब्दों को इसमे परिवर्तित भी किया है।

इस रचना के कुछ लोक प्रसिद्ध दोहे इस प्रकार है :—

१. राजा डावो जीमणो, जो भैरव कुरलाय।
सुकन विचारो पथिया, पग-पग लाख लहाय ॥१॥

२. कूकड़ डावो सुर करै, बोले वारो वार।
सुकन विचारो पथिया मानै राज दवार ॥४॥

३. खर डावो विस जीमणो, डावा स्याली ऊत।
सुकन विचारो पथिया, अफला विरख फलत ॥७॥

४. कुंभ करेवो कोचरी, हणवत नै हिरणाह।
एता लीजै जीमणा, बीजा सब डावाह ॥६॥

५. अग धुणता मंडली, जो नर गमण करत।
ते धन धान्य विहूनड़ा, परदेसा भटकत ॥१२॥

६. नाई सामी आवतो, दरपण लीना हाथ ।
सुकन विचारो पथिया, संपत आवै साथ ॥१७॥

७. जल भरियो सिर वेहडो, सामी आवै नार ।
सुकन विचारो पथिया, पावै राज दवार ॥२०॥

८. गऊ सवछी आवती कवहु सामी होय ।
सुकन विचारो पथिया, लिछमी लाहा सोय ॥२१॥

९. वृपभ से जुति वाहिणी, कवहू सामी होय ।
सुकन विचारो पथिया, राज करेसी सोय ॥२७॥

१०. आटो भाटो घी घडो, तेली ने सोनार ।
इतरा सामा जो मिले, गांवत रो निवार ॥३०॥

११ कांटो झगडो सेवडो, खुलां केसा नारि ।
वामण टीका वाहडो, पांचू परा निवारि ॥३१॥

आधुनिक वैज्ञानिक वुद्धिवाद के युग मे इन शकुनो का महत्त्व कम अवश्य होता जा रहा है फिर भी जनमानस पर इनका परम्परागत प्रभाव शेष है ।

□

# आठवें दशक के राजस्थान के हिन्दी काव्य में मूल्य संक्रमण

☐ भगवतीलाल व्यास

मूल्य संक्रमण एक धीमी किन्तु दीर्घकाल तक चलने वाली ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है जिसे किसी दशक जैसे लघु काल खंड में बांटना समीचीन नही होगा। अतः जब हम आठवें दशक के राजस्थान के हिन्दी काव्य में *मूल्य संक्रमण की चर्चा* करें तो यह न समझा जाय कि मूल्य सक्रमण की यह प्रक्रिया इन दस वर्षों का ही उत्पाद है। फिर मूल्यों को किसी विशेष भूभाग पर घटित होने वाली घटनाएं ही प्रभावित करती हों यह भी आवश्यक नहीं है। युद्ध जैसी घटनाएं समग्र मानव समुदाय के मूल्यों को सक्रमित करती है। मानव का काव्य विषय बनना अपने आप में ऐसी महत्वपूर्ण घटना है जिसे मूल्य संक्रमण की दिशा मे श्रीगणेश कहा जा सकता है। सत्ता परिवर्तन के आयाम भी मूल्यों मे रेखाकनीय परिवर्तन उपस्थित करते हैं। कोई भी सत्ता मोटे रूप से जन को दो वर्गों में बांटती है—शासक और शासित। शासक और शासित वर्गों का आधार अवश्य बदलता रहता है पर वर्ग-चरित्र कठिनाई से ही बदलता है। शक्ति, बुद्धि और धन इन *वर्गों के आधार के रूप मे अतीत से वर्तमान तक देखे जा सकते* हैं। ये ही तीनों घटक विश्व की प्रमुख विचारधाराओ के नियामक भी हैं।

राजस्थान के काव्य से हमारा आशय यदि उस काव्य से है जो राजस्थान की भौगोलिक सीमाओ में लिखा जा रहा है तब तो स्थिति बिलकुल स्पष्ट है किन्तु यदि हमारा आशय ऐसे काव्य से हो जिसमें राजस्थान मौजूद हो तो शायद यह एक कठिन कर्म हो जाएगा। अलवर से प्रकाशित कविता—१० के एक आलेख में डॉ. हरदयाल के इस तर्क से असहमत होने का कोई कारण नजर नही आता कि राजस्थान के हिन्दी काव्य में राजस्थानीपन नगण्य है। कुछ

आचलिक शब्दों के प्रयोग को छोड़कर राजस्थान की हिन्दी कविता में ऐसा कुछ भी नही है जो उसे एक विशिष्ट भगिमा प्रदान करता हो। अत: आज की राजस्थान की हिन्दी कविता को सम्पूर्ण हिन्दी कविता के सदर्भ मे ही देखना चाहिये।[१] आज मनुष्य जिस क्रूरता का शिकार है वह उसे एक व्यापक स्तर पर सम्पूर्ण मानव समुदाय से जोड़ती है। यह क्रूरता सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, साम्प्रदायिक चाहे जिन कारणों से हो, एक सा ही परिणाम दिखाती है। उसका स्थान विशेष पर घटित होना कोई विशेष महत्त्व नही रखता। यही कारण है कि आज की समूची हिन्दी कविता मानव द्वारा मानव के प्रति बरती जा रही क्रूरताओं का एक प्रामाणिक दस्तावेज हुआ चाहती है। इससे कोई अन्तर नही पड़ता कि कवि राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल अथवा अन्य किसी प्रान्त का है। क्रूरता भोगना मनुष्य की नियति रही है किन्तु राजनैतिक चेतना के प्रसार के साथ साथ उसकी अनुभूति अधिक मुखर हुई है।

आठवे दशक का आरम्भ बगला देश की जनक्रान्ति से होता है। यह एक ऐसी घटना थी जिसने इस दशक का श्रीगणेश चिरपरिचित मानवीय मूल्यों पर एक भयानक प्रश्नचिह्न अकित करते हुए किया। इस घटना ने राजस्थान के कवि कर्म को भी उसी प्रकार प्रभावित किया जिस प्रकार चीन और पाकिस्तान के साथ हुए सघर्ष की घटनाओ ने किया था। इसके बाद दूसरी महत्त्वपूर्ण घटना देश में आपातकाल की घोषणा थी। आपातकाल की घोषणा देखने में भले ही एक राजनैतिक मतव्यपरक घटना दिखाई दे पर यह स्वतन्त्रता सग्राम के बाद की सबसे महत्वपूर्ण घटना थी जिसने जन चेतना को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप मे काफी व्यापक स्तर पर प्रभावित किया। आपातकाल की घोषणा जिन राजनैतिक मतव्यों से की गई वह एक इतर प्रसग है किन्तु इतना निश्चित है कि इस घटना ने व्यक्ति के 'स्व' को बहुत गहराई तक आन्दोलित किया और अभिव्यक्ति पर कठोर अकुश के बावजूद बहुत कुछ ऐसा अभिव्यक्त होता रहा जिसका अभिव्यक्त होना उन स्थितियो मे खतरनाक था। सत्तारूढ़ दल के विकल्प के रूप मे जनता पार्टी का उदय, श्री जयप्रकाश नारायण का लोकनायकत्व, जनता पार्टी का विघटन एवम् तद्जनित राजनैतिक उथल-पुथल तथा पुन सत्ता का हस्तातरण आपातकाल की घोषणा के उप-उत्पाद के रूप मे देखे जा सकते है।

आठवे दशक की इन महत्त्वपूर्ण घटनाओ के परिप्रेक्ष्य में यदि हम मानवीय

मूल्य संक्रमण की छानबीन करें तो कुछ उल्लेखनीय तथ्य प्रकट होते है :

(१) शासक वर्ग की तथाकथित शालीनता का मुखौटा उघड़ा है और उसकी *स्वाभाविक क्रूरता बर्बरता की सीमा तक अभिव्यक्त हुई है। यह मान*-सिक क्रूरता आचरण मे शायद ही कभी इतनी अधिक प्रकट हुई हो जितनी इस दशक में हुई।

(२) कानून और व्यवस्था के नाम पर चलने वाले अन्धा-धुन्ध दमन चक्र ने सविधान द्वारा प्रदत्त नागरिक मूल अधिकारो के प्रति अनास्था उत्पन्न की है जिसके परिणामस्वरूप व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का हनन हुआ है।

(३) प्राकृतिक विपदाओं की आड मे राजनैतिक सौदेवाजी के कारण जीवन की अनिवार्य आवश्यकताएँ महगी हुई हैं। परिणामस्वरूप वाजार मे चीजों के दाम जितने वढ़े है मानव मूल्यों मे उतना ही ह्रास उपस्थित हुआ है।

(४) मानवीय सम्वन्धों मे एक ऐसी जडता का उदय हुआ है जो उसे भीड मे एक कटखने अकेलेपन का अहसास दे जाता है। एक अजीव प्रकार की टूटन, घुटन और विखराव वायुमण्डल मे व्याप्त हो गये है और व्यक्ति स्वय को स्वयं से कटा हुआ महसूसता है।

(५) शहर होते हुए गाँव का आदमी आज एक अजीव कशमकश से घिर गया है। एक ओर उसकी अपनी परम्पराए है दूसरी ओर प्रगति का प्रलोभन। वह वड़ी दुविधाग्रस्त स्थिति में एक वेचैनी मात्र भोगने को मजवूर है।

जहा आठवें दशक ने ये उपहार अनुभूति और सवेदन को दिये है वहाँ शिल्प और कथ्य की दृष्टि से कुछ विशिष्टताएँ भी दी हैं—

(१) भाषा की चुस्ती।

(२) नवगीत की जगह गजल।

(३) भाषा तथा कथ्य दोनों स्तरो पर आचलिकता।

(४) व्यग्य का पैनापन।

(५) नये प्रतीक और बिम्व।

मध्यप्रदेश से प्रकाशित होने वाली पत्रिका "पूर्वग्रह" के जुलाई-अक्टूबर, १९८० अक के पूर्व लेख की यह मान्यता निरर्थ नही है कि 'हमारे समय मे महत्वपूर्ण और वयस्क कविकर्म हो रहा है जिसके माध्यम से न केवल हम अपने अनुभव और भाषा की संपदा समृद्ध कर सकते हैं वल्कि अपने समय के मनुष्य, उसके संकट, उसके सुख-दु:ख, उसकी समूची स्थिति को समझ सकने की ओर सार्थक रूप से वढ़ सकते हैं।'[१]

अपने समय में होने वाले इस व्यापक कवि कर्म के प्रति राजस्थान का कवि भी सजग है तथा अपने उत्तरदायित्व का परिचय दे रहा है। योगेन्द्र किसलय ने राजस्थान के कवि (हिन्दी) दूसरा भाग की भूमिका में ठीक ही कहा है— "राजस्थान की हिन्दी की नई कविता किसी भी प्रान्त में पीछे नहीं है सिवाय एक बात के कि हमारी कविता पर्याप्त चर्चित नहीं हुई है। कुछ हमारे समालोचकों की मेहरबानियाँ जिनकी नजर जब भी पडी बाहर पड़ी। प्रान्त से प्रकाशित होने वाली साहित्यिक पत्रिकाओं ने भी अपने कवियों का ध्यान कम रखा। कुछ पत्रिकाओं की नजरें तो दिल्ली, इलाहाबाद और बनारस में हटी ही नहीं। फिर भी हमारे कवियों की बाहर चर्चा है।

"मेरे कहने का आशय इतना ही है कि राजस्थान का कवि आत्मनिर्भर है। जो वह है अपनी रचना शक्ति के कारण है। उस पर कोई प्रतिष्ठानी अथवा इस या उस खेमे की कृपा नहीं है। और यह शुभ भी है।"[1]

आठवें दशक में राजस्थान के कवियों की चालीस पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। काव्य संकलनों और पत्रिकाओं के कविता विशेषांकों को भी इसमें सम्मिलित कर लें तो यह संख्या साठ तक पहुँचती है। अलवर से श्री भागीरथ भार्गव के संपादन में प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'कविता' तथा काकरोली से श्री कमर मेवाड़ी के संपादन में 'संबोधन' पत्रिका के विशेषांक इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त प्रान्त तथा प्रान्त से बाहर राजस्थान का कवि विवेच्य दशक में छपा भी है और गत दशक की तुलना में चर्चित भी हुआ है।

आठवें दशक की हिन्दी कविता का मूल स्तर मनुष्य की बेचारगी है। इस बेचारगी और छटपटाहट को रेखांकित करते हुए श्री विश्वेश्वर शर्मा अपने काव्य संकलन 'आश्विन के धूप बिम्ब' में कहते हैं—

'वर्जना और निषेध की लक्ष्मण रेखाओं को लाँघ कर मनुष्य ने अपनी आत्मीयता को दर्प रूपी रावण के हाथों में विवश छोड़ दिया है। अब अपने ही अहंकार के पाश में बँधे मनु पुत्र को सिवाय छटपटाहट, घुटन, आक्रोश और रुदन के कुछ हाथ नहीं लगता। इस कुंठा और त्रास से मुक्त हो लेने के लिए जैसे इस युग का मनुष्य जी रहा है। एक प्रकार से यह सांस्कृतिक क्रान्ति का काल है। संस्कारों के नवीनीकरण का समय है, मूल्यों के पुनर्स्थापन की वेला है। परिवर्तन इतनी तीव्रता से हो रहा है कि कोई भी क्षण की साक्षी नहीं देता। बस, घटित होता जाता है, एक अबाध धारा में सब कुछ बिगड़ता-बनता चला जाता है।"

युवा कवि एवम् गीतकार कृष्ण कल्पित की कविता 'दरद जुलाहे का' की ये पंक्तियां हमारा ध्यान उस मनुष्य की ओर खीचती है जो प्रतिदिन ईसा बनकर सूली पर चढ़ने के लिए बाध्य है—

> भिक्षा पात्र लिए सड़कों पर जीवन फिरता है।
> स्वाभिमान चौखट-चौखट पर सजदे करता है।
> भरी जवानी मे होते हैं
> सपने वैरागी
> आत्मसमर्पण करते जैसे
> चम्बल के बागी
> रोज नया ईसा अब तो सूली पर चढ़ता है।
>
> (भीड़ से गुजरते हुए)

आठवें दशक तक आते-आते मूल्य इतने सक्रमित हो गए है कि आदमी दोहरी जिन्दगी जीने के लिए मजबूर हो गया है। दुराव के लिये वह भांति-भांति के मुखौटों का प्रयोग करता है। उसकी कथनी और करनी मे कोसो का अन्तर है। काव्य में प्राय. इस दोगलेपन के लिए राजनेताओ को कोसा जाता है किन्तु विडम्बना यह है कि आज आम आदमी चालाक बनता जा रहा है। प्रो. नन्द चतुर्वेदी आदमी के इस चालाक मिजाज की ओर इगित करते हुए कहते हैं—

> समय आ गया है
> लोमड़ियों की तरह दुबक कर चलने
> और चालाक होने का नही
> किन्तु अपने रक्त की गर्मी
> और प्रवाह और अस्तित्व की सचाई के लिए
> निकल आने का
> और आदमी के दबे हुए वक्ष से
> ताप जलाने का,
> और उस सबके विरुद्ध
> हांक लगाने का
> जो आदमी को छोटी और चालाक
> लोमड़ी बनाता है।
>
> (राजस्थान के कवि—भाग-२)

वर्तमान सभ्यता ने मानव को मानसिक धरातल पर बहुत बौना बना दिया है। मनुष्य का उत्साह-उमग जैसे सब समाप्त हो गया है। एक मशीनी क्रम ढोना मानो मनुष्य के जीवन की एक अनिवार्यता बन गई है। मनुष्य की टूटन और विवशता जो पिछले दशको मे नगरीय एवं महानगरीय परिवेश मे ही अधिक व्यजित हुई थी, विवेच्य दशक में गाँवों, जगलो, ढाणियों और ठेठ आदिवासी इलाको तक पहुँच हुई है। मणि मधुकर, डॉ. सुधा गुप्ता, डा. जयसिंह नीरज आदि की कविताओं मे इसके पर्याप्त उदाहरण देखे जा सकते है। बानगी के तौर पर डॉ. नीरज की निम्नाकित पक्तियाँ दृष्टव्य है —

क्या करेंगे हम इत्ती जोत का ?
भैरू, खेतरपाल और माता के मड मे
जलाये हुए दीये अपनी अपनी सुविधा देख
अँधेरे से पगडडी और सड़क नापते
राजपथ पर पहुँच गये
वह ढाणी अधकार मे फिर
भाय भाय करती रही।

(राजस्थान के कवि—भाग:२)

वर्तमान दशक मे मानवीय मूल्यो के साथ सबसे बड़ा छल हमारे राजनेताओ ने किया है। ये राजनेता अपने छोटे-छोटे स्वार्थो के पीछे आम आदमी का कितना अहित कर रहे है इसे दोहराने की आवश्यकता नहीं। राजनेता आये दिन नया नारा उछालते है जिससे व्यक्ति की मूल आवश्यकताएँ उसे न कचोटे और एक सुनहरे भ्रम मे वह सारी उम्र गुजार दे। डॉ. मदन डागा ने अपनी कविता 'कुर्सी प्रधान देश' मे बहुत ठीक कहा है—

पहले लोग सठिया जाते थे
अब कुर्सिया जाते हैं
दोस्त मेरे !
भारत एक कृषि प्रधान नही
कुर्सी प्रधान देश है।

आठवें दशक ने आदमी की पहचान तीन भिन्न-भिन्न खेमो मे दी है। पहला खेमा उन लोगो का है जो कुर्सी पर है दूसरे खेमे मे वे लोग है जो पहले खेमे के लोगों को कुर्सी पर बिठाने और उनकी कुर्सी की सलामती के लिए नाना कौतुक

करते रहते है। तीसरे और आखिरी खेमे में वे लोग हैं जो इन दोनों खेमों में नही हैं। वस्तुतः वे कहीं नही हैं, कही के नही हैं। आश्चर्य यह है कि इस खेमे वालों की सख्या बहुत अधिक है लेकिन हर बार वे दूसरे खेमे वालो से छले जाते हैं। कमर मेवाड़ी की कविता 'वे लोग' इसी स्थिति का बेबाक चित्र खीचती है—

ये लोग
किस्तों मे अपनी जिन्दगी जी रहे थे
फिर भी
उनके गाल रुई के फाहों की तरह
फूले हुए थे
और हर बार
तालियों के लिए उनके हाथ
हवा मे उठ जाते थे
उनमे से कई लोग
अपनी आवाज शाही तिजोरी में
कैद कर दया के पात्र बन गए थे
और राजमहल के इर्द गिर्द
उमड़ आई भीड़ पर
हँसी के झाग बिखेर रहे थे।

(कविता, राजस्थान अक)

ये तीसरी किस्म के लोग जिन्दगी की हर लड़ाई हारे हैं। इनमें संघर्ष की सभावनाएँ अत्यन्त क्षीण हो गई हैं। श्री भगवतीलाल व्यास की कविता 'बस्ती के मुक्त लोगो के लिए' की ये पंक्तियाँ इसी पराजय बोध को अभिव्यक्ति देती हैं—

मैं गलत नही कह रहा हूँ भाई,
यकीन न हो तो कभी जाकर देख आना
ये लोग हर लड़ाई मे हारे हैं
अपने राजा से हारे हुए
अपनी प्रजा से हारे हुए
अपने पेट से हारे हुए
ठेठ से हारे हुए

ये लोग
अब शायद अपने आप से लड रहे है
मगर अफसोस
इनकी पकड इतनी ढीली है
जैसे इनके हाथ मे
गिरेबान न होकर गीता की पोथी हो
इनकी हर लडाई मुक्ति के लिए होती है
विजय के लिए नही ।

(सम्बोधन, कविता विशेषांक, १९८०)

मनुष्य की यह पराजय अकारण नही है । इसके लिए वे लोग जिम्मेदार है जिन्हे हम सृष्टा मानते है । रामदेव आचार्य ने अपनी कविता 'महाभियोग' मे ठीक ही कहा है—

हमारा सृष्टा हमारे मुखों से
शान्ति और विद्रोह के शख बजाता रहा
और अपने जीवन में
अपने मुख से
एक शर्मनाक समझौतापरस्त
भाषा का उच्चारण करता रहा ।
हमारे माध्यम से
वह व्यवस्था से युद्ध करने का
नाटक रचता रहा
और अपने जीवन मे
आत्म समर्पण के शर्तहीन सधि पत्रो पर
हस्ताक्षर करता रहा ।

मैने पूर्व मे निवेदन किया था, मूल्य सक्रमण एक व्यापक स्तर पर घटने वाली घटना है । युद्ध चाहे वियतनाम में हो या ईराक मे । मनुष्य का रक्त चाहे मुरादाबाद मे बहे या अलीगढ मे, मनुष्य की हँसी छीनता ही है ।

श्री जुगमदिर तायल की कविता 'हँसी' इसी व्यापक सदर्भ की ओर सकेत करती है जिसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है—

मैने लैला खालिद से कहा

सिर्फ जेरूशलम मे मत हँसो
मेरी प्यारी धरती को भी हँसाओ
मैंने वियतनाम के जगलो से कहा
थोड़ा जहरीला धुँआ
मेरी हरी भरी धरती को भी पिलाओ
तब वियतनाम के जगल और
लैला खालिद ने एक साथ कहा
हँसी कोई मुखौटा नही है
न कोई कौशल
हँसी भीतर से फूटती हुई कविता है
जिसे लिखते समय
अँगुलियों के पोर जलने लगते है।

*मूल्य सक्रमण* का यह सिलसिला वियतनाम से लेकर व्यक्ति के घर-आँगन तक मौजूद है। अत्यत कोमल और आत्मीय सम्बन्ध भी इसके प्रभाव से नही बच सके हैं। डॉ. रणजीत की कविता 'टूटन' पारिवारिक सम्बन्धों के विघटन का एक सशक्त चित्र उपस्थित करती है—

हुआ यह है कि
अपनी बीवी से मेरा सम्पर्क टूट गया है
जो कुछ था हमारे बीच बरसो से
न जाने कहाँ छूट गया है
ऊपर-ऊपर से सब ज्यो का त्यों दिखता है
पर भीतर ही भीतर कुछ है
जो पूरी तरह टूट-फूट गया है
वह टूटा हुआ बजता रहता है
हमारे सवादों के बीच।

मनुष्य की इस विसगतिपूर्ण जीवन यात्रा मे भी कम ही सही, कुछ पड़ाव ऐसे हैं जो इस बात के लिए आश्वस्त करते है कि मूल्य परम्परा मे अब भी कुछ शेष है जिसे सहेजा जा सकता है। श्री हरीश भादानी की इन पक्तियों में ऐसा ही विश्वास प्रकट हुआ है—

खामोशियों की छतें
आबनूसी किवाड़े घरों पर

आदमी आदमी बीच दीवार है
तुम्हें छैनिया लेकर बुलाया है
सीटियों से साम भर कर भागते
बाजार, मिलों, दफ्तरो को रात के मुर्दे
देखती ठण्डी पुतलियाँ
आदमी अजनबी आदमी के लिए
तुम्हें मन खोलकर मिलने बुलाया है।

(कविता, राजस्थान अक)

यह सही है कि मूल्य सक्रमण के जो कारक है वे हमारे नियत्रण मे नही हैं और इस अवश्यभावी प्रक्रिया को हम रोक नही सकते पर श्री हरीश भादानी के कवि के आह्वान पर दीवारो को काटने के लिए हम अपनी छैनी को पैनी तो कर ही सकते है। दिल खोलकर मिलते हुए आदमी-आदमी के बीच फैले अजनबीपन के जगल को किसी सीमा तक तो काट ही सकते है।

डॉ. प्रकाश आतुर की कविता 'कब तक ?' वर्तमान विसंगतियो और मूल्य-हीनता पर प्रश्न टागती हुई हमे सतत सघर्ष की चुनौती देती है—

कब तक बेजुबान बने रहेंगे
चौराहे, नुक्कड, गलियो के मुहाने
कब तक बहकाओगे
भूगोल की दिशाओ को
कब तक घृणा के बीज बो कर
काटते रहोगे साप्रदायिक फसलें
कब तक चौकसी करते रहोगे
भययुक्त लूट, कर्फ्यू, बलात्कार
बारूदी मौसम की
सुनते हो
छोटे छोटे घेरों मे अब नही टूटेंगी
आक्रोश की असयत लहरें।

यदि व्यवस्था के प्रति हमारा आक्रोश कायम रहा तो निस्संदेह व्यवस्था को बदलना होगा। व्यवस्था के इस बदलाव में 'कविता को हथियार' की भूमिका निभानी पड़ेगी जैसी कि उसने हमारे देश मे और अन्य देशों में भी समय-समय पर निभाई है।

हमारी शुभाकाक्षा है कि कविता का हथियार अधिक धारदार बने और आने वाले समय मे अपना चमत्कार दिखाये ।

## संदर्भ-सामग्री

(१) कविता—१० (राजस्थान के कवि—कविता अक)
संपादक : भागीरथ भार्गव, डॉ. जयसिह नीरज
कविता प्रकाशन, आर्य नगर, अलवर (राज.)

(२) पूर्वग्रह ३०-४० (जुलाई-अक्टूबर, १६८०)
संपादक : अशोक वाजपेयी, मध्यप्रदेश कला परिषद,
टैगोर मार्ग, भोपाल (म० प्र०)

(३) राजस्थान के कवि (हिन्दी) भाग दूसरा—सपादक : योगेन्द्र किसलय
राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर. प्रथम सस्करण १६७८ ।

(४) आश्विन के धूप बिम्ब · विश्वेश्वर शर्मा, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर (राज ), १६७७

(५) सम्बोधन (त्रैमासिक) संपादक . कमर मेवाडी, राजस्थान हिन्दी कविता विशेषाक स्वाधीनता दिवस, १६८०

(६) राजस्थान की हिन्दी कविता—डॉ. प्रकाश आतुर, सघी प्रकाशन, उदयपुर, १६७६

### आठवें दशक में प्रकाशित राजस्थान का हिन्दी काव्य

(१) मदनलाल डागा—अनजानी सलीबों पर, १६७१
(२) डॉ. जयसिह नीरज—दु.खान्त समारोह, १६७१
(३) सं० वसन्तकुमार व्यास—अन्तर्कपोत परिवेश के, १६७१
(४) अफ़जल खा अफ़जल—अजाने स्वर, १६७२
(५) कैलाश जोशी, रामनाथ परिकर - बगभारती, १६७२
(६) सं. प्रीतमसिंह वागरेचा—प्रश्न भरी दृष्टियां, १६७२
(७) कुमार शिव—शंख : रेत के चेहरे, १६७३
(८) तारादत्त निर्विरोध—गीत यात्रा

(९) विश्वेश्वर शर्मा—आश्विन के धूप बिम्ब
(१०) ज्ञान भारिल्ल—सांझ उतरी
(११) योगेन्द्र किसलय—और हम, १९७३
(१२) मरुधर मृदुल—शब्दों का घूघट, १९७३
(१३) जुग मदिर तायल—जगल से गुजरते हुए, १९७३
(१४) गुरुदत्त सोलकी—लालारुख और अन्य कविताएं, १९७३
(१५) हेमन्त शेष—जारी इतिहास के विरुद्ध, १९७४
(१६) विजेन्द्र—जन शक्ति, १९७४
(१७) अक्षयकीर्ति व्यास—प्रताप शतक, १९७४
(१८) कन्हैयालाल सेठिया—निर्ग्रन्थ, १९७५
(१९) सावर दइया—दर्द के दस्तावेज, १९७६
(२०) कुमार शिव—पंख धूप के, १९७७
(२१) स. प्रभाकर आर्य—युगदाह, १९७७
(२२) कमर मेवाडी—बहस अभी जारी है, १९७७
(२३) अफजल खा—कठिन रास्तो पर, १९७७
(२४) भगवतीलाल व्यास—शताब्दी निरुत्तर है, १९७७
(२५) डॉ. सुधा गुप्ता—चेतना के फूल, १९७७
(२६) „ „ —रोशनी की शहतीर, १९७७
(२७) त्रिलोक गोयल—त्रिलोक गोयल की कविताए, १९७७
(२८) स. योगेन्द्र किसलय—राजस्थान के कवि भाग-२ (हिन्दी), १९७८
(२९) सावित्री डागा - सदर्भों के कटे हुए
(३०) डॉ. विश्वभर उपाध्याय—कबध, १९७८
(३१) मणि मधुकर—बलराम के हजारों नाम, १९७८
(३२) „ „ —घास का घराना, १९७८
(३३) रामदेव आचार्य—रेगिस्तान से महानगर तक, १९७८
(३४) बी. आर. प्रजापति—एक मुट्ठी धूप, १९७८
(३५) रेवती रमण शर्मा—जमीन से जुड़ते हुए, १९७८
(३६) हरीश भादानी—नष्टो मोह, १९७९
(३७) कृष्ण कुमार वशिष्ठ—अक्षत, १९७९

# एक और कबीर : सैयद कमालशाह घायल

□ चतुर कोठारी

सैयद कमालशाह "घायल" का जन्म राजनगर (राजसमद) जिला उदयपुर राजस्थान मे सन् १८३३ में श्री गुलाम मोहम्मद साहब कादरी के परिवार मे हुआ। श्री गुलाम मोहम्मद साहब की एक मात्र सन्तान श्री फतेह अली सैयद "गौश" आपके पिता थे। आपकी मृत्यु ९६ वर्ष की अवस्था मे १४ अप्रैल, १९२९ को हुई। आपका मूल नाम कमालुद्दीन था। एक बार आप अजमेर तशरीफ ले गये। वहाँ पर किसी ने आपका परिचय पूछा तो आपने अपना परिचय यों शायरी मे दिया—

(१) जिस जगह रहता हूँ उसका नाम है
मुनफ अद हरफो मे वो अरकाम है
रे अलीफ और जीम साकीन नुन नाम
गाफ रे को तू मिला ए नेक नाम।

(२) वो इलाका उदयपुर का है यार
जिस जगह रहता है अजीज खाक सार
काकरोली से फक्त दो मील है
और समन्दर वहा का मिसले नील है।

(३) है मुसनीफ का कमालुद्दीन नाम
मैं तो हूँ सादात के घर का गुलाम
बुजुर्गों का वतन तो सिन्ध है
अब ये बाशिन्दा मुल्के हिन्द है।

श्री 'घायल" की शिक्षा किसी पाठशाला में नहीं हुई। प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही पिता श्री के द्वारा पूरी हुई। वे अरबी, फार्सी और उर्दू भाषा के अच्छे विद्वान थे। राजस्थानी मिश्रित हिन्दी का ज्ञान भी उन्हें कम नही था।

श्री "घायल" सादगी पसन्द व्यक्ति थे। साधारण खान-पान एवं गरीबी के जीवन से उन्हे बड़ा लगाव था। पर विचारो के बडे धनी व्यक्ति थे। "सादा जीवन उच्च विचार" वाली कहावत निसदेह आपके जीवन पर चरितार्थ होती है। इसी सादगी के प्रति लगाव प्रकट करते हुए आपने एक जगह लिखा है—

कोई है लाल के सदके, कोई है हीर के सदके।
हम खुशक रोटी बिन बगारी दाल के सदके॥

कमालशाह अपने समय के एक अच्छे शिक्षक व हकीम तो थे ही, पर महान् चिन्तक व साहित्यकार भी थे। आपके समय में छापे खाने का अधिक विकास नही हुआ था, अत. जीवन का अधिकाश समय कुरान शरीफ और धार्मिक पुस्तकों के लेखन मे व्यतीत हुआ। जीवन काल में अपने हाथ से कुरान की लगभग दो सौ पुस्तके लिखी। साथ ही शरियत अर्थात् धार्मिक कानून की कई पुस्तको का लेखन भी आपने किया।

मुसलमानो में "सैयद" जाति सबसे ऊँची मानी जाती है। ऊँची जाति मानने का कारण यह है कि यह जाति पैगम्बर मुहम्मद साहब के नवासे इमाम हसन हुसैन के वशज की है, लेकिन 'सैयद' जैसी उच्च जाति मे जन्म लेने के पश्चात् भी कमालशाह अपने को उच्च जाति याने मुहम्मद साहब के वश के योग्य नही मानते थे। और कहा करते कि—मैं तो उस वश का गुलाम हूँ।

मैं तो सादात का चाकर और गुलाम।

"घायल" नामकरण—एक बार राजनगर (राजसमद) में कोठार के पास एक मकान मे एक शेर घुस गया। किसकी हिम्मत थी कि शेर को नगर से जगल मे भगाये। कुछ लोगों ने कमालशाह को शेर से लड़ने के लिए प्रेरित किया। फिर क्या था? साहसी कमालशाह एक छुरी लेकर शेर से भिड गये। हिम्मत के साथ छुरी सहित अपना हाथ शेर के मुंह मे डाल दिया। शेर ने कमालशाह को घायल तो कर दिया, पर उन्होने भी शेर का काम तमाम कर दिया। इस प्रकार शेर से लड़कर घायल होने वाले कमालशाह को बाद मे "घायल" खिताब से पुकारा जाने लगा। और इसी "घायल" खिताब का प्रयोग आपने अपने भजनों, प्रभातियो और दीगर पद्य रचनाओं में किया है। जिसकी

पुष्टि करते हुए आपने एक शेर में यों कहा है कि—

मैं तो हूँ सादात का चाकर और गुलाम।
कविता में उस्ताद ने दिया "घायल" नाम ।।

**महाराणा की भेंट अस्वीकार**—श्री कमालशाह की जन-सेवाओं से प्रभावित हो मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा श्री फतेहसिंह जी ने एक बार आपको दरबार में बुलाकर पाँच सौ रुपया नकद व एक साफा भेंटस्वरूप दिया, लेकिन कमालशाह ने उक्त भेंट लेना अस्वीकार कर दिया और महाराणा से कहा कि—मेरा पुत्र सरदार आपके रावले की सेवा करता है। मैं भक्ति करता हूँ। मुझे ईश्वर की भक्ति का लालच है, दुनिया के माल, धन किसी की परवाह नहीं है।

**वसीयत**—श्री कमालशाह की अन्तिम वसीयत यही थी कि मेरी कब्र कच्ची ही बनाना ताकि लोग यह न जान सकें कि मैं कहाँ सो रहा हूँ। मेरी लम्बी नींद में खलल न पड़ने पाये। मगर उनके चाहने वालों ने नौचौकी मार्ग पर उनका मजार पक्का बनवा रखा है। पूर्व दिशा में श्री कमालशाह का मजार है। उसके पास ही उनके दोनों पुत्र श्री सरदार अली व उमराव अली के मजार स्थित हैं।

**मरने के बाद भी**—कुछ लोगों ने कहा कि कमालशाह का निधन हो गया है, तो सुनने वाले व्यक्ति ने कहा कि आज ही सुबह तो वे मुझसे मिले है, यानी मरने के बाद भी लोगो द्वारा उन्हें देखने व मिलने की लोक चर्चा है। ऐसा लगता है कि मृत्यु से उनका साक्षात्कार हुआ है—

एक चोर ने धूम मचाई कोई नाय चली चतुराई।
चार वीर ता बीच नायक ताके कण्ठ मरोड़े।।
गढ़पति की एक नही मानी सातो ताला तोडे।
कोट न टूटो भीत न फूटी नाम जुस उठाए।।
आभूषण उन इक ही ना लीनों निज विद या ऊचाई।
आत-जात दीखत नाही नजर बंद कर दीनी।।
सब सखियो को मुरछा आई चाहत वस्तु लीनी।
कम्पत राजा कम्पत प्रजा तज गर अक अकारी।।
कहे 'घायल' अति मूढ़ है मूरख है बलवन्त अकारो।
भजन (कमाल भजन माला-चतुर्थ पुष्प)

कृतित्व—श्री कमालशाह द्वारा अरबी, फारसी व उर्दू में हस्तलिखित कई पुस्तकें उपलब्ध हैं। राजस्थानी मिश्रित हिन्दी मे "कमाल भजन माला" नाम से सात पुष्प प्रकाशित हुए है, उनमे से कुछ पुष्प तृतीय, चतुर्थ व पचम उपलब्ध है। इनका प्रकाशन काल दीपावली १९९९ है। प्रकाशन कमालशाह के पौत्र मुशी अली अकबर ने कराया। और मुद्रक हैं पडित रघुनाथ पालीवाल नाथद्वारा (मेवाड़)। प्रत्येक पुष्प का मूल्य एक आना रखा गया है। प्रथम बार २०० प्रतियाँ छापी गईं। इसके अलावा अन्य कोई सामग्री प्रकाशित नही हो पाई है। लगता है कमाल के भजनो का प्रभाव लोक जीवन मे अधिक था अतः उनकी स्मृति मे ही यह प्रकाशन हो पाया है।

कबीर की तरह कमालशाह भी निर्गुण निराकार ईश्वर की आराधना करने वाले सन्त थे। एक नायिका के रूप मे ही आपने ईश्वर की आराधना की है। आपने सम्प्रदायवाद, हिन्दू-मुसलमानों की फिरकापरस्ती, पाखण्ड और झूठी परम्पराओ पर साधारण बोल-चाल की भाषा में गहरी चोट की है।

आपने ग्रामीण संस्कृति मे स्थापित प्रतीको के माध्यम से शरीर, आत्मा, पंच इन्द्रियों, काल आदि को सटीक चित्रों मे उभारा है तथा मनुष्य को सचेत हो, जागकर ईश्वर का सच्चा ज्ञान प्राप्त कर ईश्वर मे रमने के लिये प्रेरित किया है।

भक्ति-दर्शन—कमालशाह दार्शनिक होने के साथ-साथ कवि हृदय भी थे, और हर बात का जवाब कविता मे दिया करते थे। कोठारिया के रावजी ने जब इनकी काफी तारीफ सुनी तो एक व्यक्ति के साथ यह लिख भेजा कि यदि खुदा है तो कहाँ है ? श्री कमालशाह ने उसी कागज पर वापस यह उत्तर लिख भेजा कि—

है कहूँ तो कहाँ बताऊँ नही कहूँ तो है।
दोनों है के बीच में जो कुछ है सो है।।

पाखण्ड-विखण्डन—पाखण्ड विखण्डन करते हुए कमाल शाह ने इस ससार के प्राणियों को कहा है कि ये सभी पन्थ तो गोता देने के रास्ते हैं। अगर शुद्ध पन्थ को चाहता है तो प्रथम तो अपनी काया को शुद्ध कर, फिर निरगुनी के रग मे रग जा।

तेरा पन्थ नही पाया, मैं हेर हेर घबराया
मन्दिर हेरा मस्जिद हेरी, थानक शीश झुकाया।
भरम की टाटी परतन फाटी, फिर फिर जन्म गमाया
न्हाय धोयकर तिलक लगाया, हर्षित शख बजाया।

दीपक जोड़ आरती गाई, सारा नगर जगाया
ज्योति अखड की करिके सेवा, जमला जाय जगाया ।
पन्थ की खाड़ी मे गोता खाए, सब पाखण्ड उपाया
जो तू चाहे शुद्ध पन्थ तो, प्रथम शुद्ध कर काया ।
'घायल' रग लगा निरगुन का, जिन सब रग बनाया

भजन (कमाल भजन माला चतुर्थ पुष्प पृ. ५)

साधु-सन्यासियों के ज्ञान, जप, माला, छापा, तिलक, गंगा-स्नान करले, हस्तरेखाएँ देखने आदि पर चोट करते हुए कहा कि जिन्हें अपने बारे में ही शुद्ध ज्ञान नही है वे साधु दुनिया को क्या बतलाएँगे ? यह सब कुछ धोखा देना है—भोले मनुष्यो को लूटना है—

सब अपनी अपनी गाते है, निरकार भेद नही पाते हैं।
पूरब जनम अगम पच्छम का पण्डित भेद बताते हैं॥

रेख करम अपनी नही जाने औरों को भरमाते है।
गंगा जा स्नान किया और काया शुद्ध बनाते है॥

मन का मैल कभी नहीं छूटे उल्टा पाप कमाते हैं।
काजी मुल्ला खोल किताबें निरंकार पद गाते हैं॥

अर्थ निरर्थ को कोउ ना जाने अपनी तात बजाते हैं।
'घायल' तन्त्र निरन्जन सुमेर वही सन्त कुछ पाते हैं॥

प्रभाती (कमाल भजन माला-तृतीय पुष्प पृष्ठ ३)

कमालशाह ने जीवन के अन्तिम पड़ाव में जो कुछ लिखा है, लगता है वह अनुभव कञ्चन जैसा मूल्यवान व खरा है। वृद्धावस्था मे जो कुछ अनुभव हुआ उसमे शरीर को रस-राग की एक पेटी ही माना और जगाने की चाबी देने के लिये कहा है, सचेत करने के लिए कहा है—

या पेटी रस-राग की, दे दे चाबी जाग की।
कारीगर ने मशीन बनाई गुप्त पवन जल आग की॥

पाच खार की पान लगाई छल बल सब है नाग की।
स्वासा तार प्रेम पद गावे ठुमरी देश भाग की॥

स्वर और ताल धरी अटकल सु मशीन करी बे लाग की।
अज्ञान करे अज्ञानी होवे।
झूम झूम स्तुति गावे निरगुन मे बेराग की।

पावे रीझ मोज सूं घायल अपने अपने भाग की॥
रीझ प्यारे प्राणपति की देखो अमर सुहाग की।

प्रभाती (कमाल भजन माला-तृतीय पुष्प पृ. ४

जवानी के बाद शरीर अशक्त हो गया। वृद्धावस्था आ गई। अब जीव की गाड़ी चलाने मे बड़ी कठिनाई होती है, तो शरीर को बैलगाडी के प्रतीक रूप मे प्राणी मात्र को चेतावनी देते हुए कहते हैं कि—

तेरी गाड़ी हो गई पुरानी, तू चेत चेत अज्ञानी।
ओदन के बद बड़कन लागे कड़कन लगी कमानी॥

कील कील हो गई ढीली मत कर खेंचा तानी।
जूनों ठाट काठ घन खायो, चाल चले मन मानी॥

पिन्जनियाँ अदवीच सू टूटी मन मूरख अभिमानी।
बैल थके दो हत्त भी टूटे पूठी पूठ दिखानी॥

बिखर गए सब फाचरा मुड़ गई लोर निमानी।
कहे "घायल" सब कल कल बिखरी तो भी नही पिछानी॥

उलट गई जब गाड़ी बन मे गुडक गए सैलानी।

भजन (कमाल भजन माला चतुर्थ पुष्प पृ. ४)

जीवन को रेल और मन को उसमे यात्रा करने वाला मुसाफिर मानकर जीवन को वस्तु-स्थिति का ज्ञान कराते हुए लिखते हैं कि हे मन ! तू अपनी इच्छाओ का त्याग कर—

मुसाफिर रेल बिखर गई तन की, पर हर नही जावत मन की।
अगनी बल सू सब जल सूखो मिट गई तपत अगन की॥

भस्म हुए सब काठ कोयला चाल थकी अजन की।
लालटेन की जोत बिलाई लिपटी पवन पवन की॥

अन्त लेन पर भई अधियारो आई टेम चलन की।
चौकीदार ध्वजा दिखलावे रग कर लाल विरन की॥

सिगनल के दोई हत्ता टूटे झण्डी देख विगन की।
स्वासा सीटी पड़ गई फीटी फूक गई धम्मन की॥

टूटे तार मुसाफिर अटके चिट्ठी बाँच गवन की॥

लेट हुई जब रेल ए 'घायल' उलटी मेल जतन की।
गजर बजा और हो गई घण्टी गोरखपुर टेशन की॥
भजन (कमाल भजन माला-चतुर्थ पुष्प-पृ. ३)

जीवन-रक्षा के कवि ने लाख उपाय किये, पर एक न चली और शरीर रूपी खेत मे बोई हुई खेती खाकर मृग चला गया। कवि ने अपनी व्यथा की अभिव्यक्ति करते हुए मार्मिक शब्दो मे मन के भेद को यो खोला है—

करूँ क्या मृग ने खेती खाई, मेरी कोई ना चली चतुराई।
काया खेत सास हल हांक्यो करम किवाड लगाई॥
और निज नामक बीज छांटियो शील सन्तोष सुहाई।
मन माली ने अन्त जतन से तन की खेती बाई॥
डर विश्वास भंवर रखवाली चोकी भजन बिठाई।
एक मृग और चार मृगनियाँ वाड़ी मे घुस आई॥
रखवाली सूं हेत लगायो हरयाली सब खाई।
मृगा खेत हमें कर छल बल पाप की पवन चलाई॥
घर भेदू मिली खेत खवायो 'घायल' कहो न जाई।
भजन (कमाल भजन माला-चतुर्थ पुष्प पृ. ५)

भक्त कवि ने मन को मूर्ख और अभिमानी कहते हुए कहा है कि नौ मास तक शरीर रूपी चादर को बड़े जतन से बनाया, पर तूने इसकी सार-सम्भाल नहीं की। इसका ताना-बाना टूट गया और यह शरीर अब जरा-जरित हो गया है। तूने अज्ञानवश इसे मैली कर दी है—जबकि कबीर ने कहा कि—

ज्यो की त्यो धर दीनी चदरिया।

यहाँ कवि की वाणी दृष्टव्य है—

चादर हो गई पुरानी तू लायो माँग बिरानी॥
सात सखी मिली पूणी काती और चढाई तानी।
पाँच जणा मिली रेजो बुन्यो कर कर खेचा तानी॥
नौ मास ता बुनता लागा, धोई चोवटे आनी।
प्रेम-प्रीति सूं करी उस्तरी मूंगे मोल बिकानी॥
साधु सन्त ओल्या ओढ़ी धो धो निर्मल पानी।
मूरख नर चादर ने राखी पर जानी मन मानी॥

ताना कटा बाना टूटा ऊन गई बिखरानी।
"घायल" चादर मेली कीनी मन मूरख अभिमानी ॥
दीगर (कमाल भजन माला-पंचम पुष्प पृ. ३)

चेतावनी—अपने संगी-साथियो, शिष्यो व संसार के लोगो को कबीर की तरह ही चेतावनी देने मे कवि चूका नही है। जीवन के गहनतम अनुभवों को शब्द देते हुए कवि कहता है कि इस शरीर रूपी महल में काल रूपी ऐसा चोर आएगा जिसके पास न हथियार है न कुछ। न वह दीवार तोडता है, न कुछ धन माल ही लूटता है। व्यक्ति की शक्ति उस समय यों की यों धरी रह जाती है। चोर चोरी कर चला जाता है और महल के मालिक मन राजा की कुछ नही चल पाती है—

इक चोर महल मे आवेगा नही सस्तर आयुध लावेगा।
फोड़ी भीत न खोदी खाई सांधा नाही लगावेगा ॥
साकल ताला कोई ना खोले मन्दिर में घुस आवेगा।
हीरा मोती सोना रूपा ना कोई वस्तु उठावेगा ॥
माल खजाना पड़ा रहेगा हीरा उछंग उड़ावेगा।
महावीर बलवन्त सूरमा ना कोई आंख मिलावेगा ॥
दिन धोले वो धाड़ो नाके मोहन मूठ चलावेगा।
दुरबल देह अनाथ नाथ पर बिल्कुल दया न लावेगा ॥
ए "घायल" बलवीर का सस्तर खूंटी पर रह जावेगा।
दीगर (कमाल भजन माला—तृतीय पुष्प पृ. ६)

अन्तिम सीख—जीवन के अन्तिम समय मे जो कुछ अनुभव हुआ सार स्वरूप ससार के लोगों के लिये आपने लिखा। एक भजन मे आप अपने को सखी-मानकर कहते है कि ये पाँचों इन्द्रियाँ रूपी सहेलियाँ मुझे संसार सागर में अकेली छोड़ गई है अर्थात् सभी ने साथ देना बन्द कर दिया है और अब यह दुल्हन कर्म की गठरी बाँध कर अकेली ही पियर त्याग कर अपने प्रियतम के घर जा रही है।

तुम सुनो री आज सहेली, पिया घर जावत अलबेली ॥
अन्त: कठोर कुलच्छन नारी पाँचो होकर भेली।
माया मोह मे मोए फसाई अन्त भई मैं गेली ॥

छोटी सु मोटी भई अलि रेन दिना सग खेली।
छोड गई भव के सागर मे रच गई हाय अकेली॥

जावत आज भयानक नगरी मगदा रूप नवेली।
सुवस बसायो देश तुमारो मडप महल हवेली॥

पिहर में पिय हरके बैठी मद जोवन मे फेली।
'घायल' दुल्हन जात अकेली शीश गठरिया ले ली॥

भजन (कमाल भजन माला-पंचम पुष्प-पृ. २)

इस संसार मे जन्म और मृत्यु को आना और जाना मानकर प्राणी को राही (बटाऊ) सम्बोधित कर कहा है कि—

बटाऊ मनख जनम यू ही खोयो रे!
गगाजी सूँ नीर मगायो नीर मे नीर समोयो रे॥
कर स्नान करी शुद्ध काया मायलो मैल न धोयो रे।

बाल पनो हँस खेल गमायो भर जोवन में सोयो रे।
मोह लोभ में कई नही सूझ्यो वृद्ध भयो तब रोयो रे।

अन्त समय पर भजन न कीनो गेहरी नीद मे सोयो रे॥
पतित भयो लालच के फन्दा अन्त मोल भी खोयो रे।

तीनों ही काल गये अधर्म मे तन्त नाम ना जोयो रे॥
अधरमी 'घायल' तेरे अधरम सूँ पापी ने पाप डवोयो रे।

दीगर (कमाल भजन माला-पचम पुष्प—पृ. ३)

कवि कहता है कि अब ईश्वर के घर से सदेशा आ गया है अत. ससार का जो कुछ देना-लेना शेष है, उसे चुका कर ही जाना और साहूकार की तरह अपनी साख जमाना—

आया प्रियतम का परवाना, तू रीते हाथ न जाना॥
दानी आकर दान जो मांगे मत ना वस्तु छिपाना।
कोडी कोडी हासल देके चिट्ठी माल कटाना॥
सत का सौदा वेच बावरे भर्यो माल खजाना।

लालच के मत भूल भरोसे मत ना मोल लगाना॥
तन्त माल के अक्षर माडे वो ही निज माल भराना।
साचे रहो साहूकार से अपनी बढिया पैठ बढाना॥

ठग एक कुटिल वात में बैठो प्राणी .प्राण बचाना ।
'घायल' कहे एकन्त नगर मे एक दिन वास वसाना ॥
भजन (कमाल भजन माला-चतुर्थ पुष्प पृ.—७)

अपनी सीख मे आगे आपने कहा कि और एक दिन ऐसा आएगा कि यह शरीर प्राणों का साथ देने से मुकर जाएगा। अतः ए प्राण ! तू कपटी शरीर का संग मत कर कर्त्ता की ओर ही ध्यान लगा ।

चल दिये प्राण मुकर गई काया ।
प्राण कहे सात स्थल मे हमने जीव छिपाया ॥
चहुँ ओर से निरमुख आए पाँच मिल ने मिल पकडाया।
मै जानूं तो सग चलेगी काया हज कराया ॥
जम जम काजल भर कर लाया जमना जल स्नान कराया।
पाचो मित्र निकस गए कपटी काम पडे पर जाया ॥
काया का अब दोष कहाँ है करम लिखा था हमने पाया ।
कहे 'घायल' कपटी की सग करके वृथा जन्म गमाया ॥
दीगर (कमाल भजन माला-पचम पुष्प—पृ. ४)

भक्त कवि को अनुभव हुआ कि जो जैसी खेती करेगा वह वैसा ही फल प्राप्त करेगा। अत· हे प्राणी ! ससार मे रह कर जीवन मे अच्छे-अच्छे कार्य करना। सदा सावधान रहना, नही तो खेती मुफ्त मे ही नष्ट हो जाएगी। अत हे बावरे मन ! तू अच्छी खेती करना ।

मन बावरो रे तू आछी करजे खेती ।
आछी धरती देखा पना को ऊसर खेती रेती ॥
हल हाके तो तन्त नेहसू छाटे बीज अगेती ।
भजन भाव को पानी दीजे रहे बावड़ी वहती ॥
हासल दे और घर मे खावे वा खेती करमेती ।
करज राज को जमा कराजे जद आवे कामेती ॥
शील दृढसुं कर रखवाली मत ना न्हाक पछेती ।
'घायल' तक पर करजे खेती मत करजे अनवेती ॥
कमर बाध नित चोकस कीजे खेती धणिया सेती ।
दीगर (कमाल भजन माला-पंचम पुष्प—पृ. ७)

इस प्रकार कमालशाह ने युगीन प्रभाव में न बह कर संसार के लोगों को मनुष्य जन्म को वृथा न गँवाकर अच्छे कार्य करने व जीवन के मर्म को समझाने के लिए भजन-कीर्तन शैली का उपयोग किया। क्योंकि लोक शैली में गीतों और भजनों का जो प्रभाव धार्मिक काल में भारतीय जनता पर कबीर, मीरा, सूर आदि का हुआ, लगता है वही प्रभाव इस युग में राजस्थान के अन्य सन्त चतुर सिंह जी के साथ निरगुणी भक्त कवि सैयद कमालशाह 'घायल' का भी रहा। इस सम्बन्ध में इतना ही लिखना पूर्ण नहीं होगा। विज्ञ पाठकों के लिये कमालशाह के साहित्य के अध्ययन व शोध की तो आवश्यकता है ही पर अप्रकाशित साहित्य के प्रकाशन से अरबी, फार्सी, उर्दू व हिन्दी के वाङ्मय की अभिवृद्धि होगी। ऐसा मेरा विश्वास है।

☐

# डॉक्टर पाण्डुरंग

☐ रूपनारायण काबरा

सांभर झील कोई छोटा मोटा कस्बा नही है, ३५ हजार की आबादी है। ३०-४० वकील। नमक की सबसे बड़ी झील है हिन्दुस्तान की। इसका पौराणिक इतिहास है—महाभारत काल से राजा ययाति, देवयानी और शर्मिष्ठा से जुड़ा हुआ। पृथ्वीराज चौहान से भी इस कस्बे का सीधा सबध रहा है। बडे-बड़े सेठ, साहूकार, नमक विभाग के अफसर, कर्मचारी, हायर सैकण्डरी स्कूल, कॉलेज, कोर्ट, अस्पताल आदि सभी कुछ है, पर सबसे बढकर डॉक्टर पाण्डुरग है, जिन्हे सभी जानते है। इस कस्बे मे डाबर के च्यवनप्राश की तरह आप भी जगह-जगह दीवारों पर नजर आ जाते है। कस्बे का कोई ऐसा कोना नही है जहाँ अपकी कीर्ति-किरण नही पहुची है। प्राइमरी के बच्चों से लेकर कॉलेज के पीएच. डी. प्रोफेसर तक दीवारो पर इस 'राष्ट्र सेवक' का परिचय प्राप्त करते रहते है।

डॉक्टर पाण्डुरग के पोस्टरों से साफ जाहिर होता है कि उन्हे कितना दर्द है राष्ट्र का, कितनी चिन्ता है देश की प्रगति की। डॉक्टर साहब के एक पोस्टर का नमूना—भ्रष्टाचार मिटाओ, विनयशीलता ही विशालता है, सुखी जीवन पुरुषार्थ है, आत्मा ही परमानन्द है, दूषित करने वाले विचारो से बचो इत्यादि।

डॉक्टर पाण्डुरग अपने पोस्टरों और बुलेटिनो मे कहा करते हैं "शरीर नाशवान है। दिन मे तीन समय विचार करें और सोचें कि हम देश के लिए क्या करते है। हम राष्ट्र के नवयुवकों से प्रार्थना करते हैं कि राष्ट्र को सँभाल कर रखना आपका काम है। एक गुरुकुल १०१ प्रौढ़ व बालकों को साक्षर

बनाने के लिए ११० रुपये मासिक और तीन घंटे श्रमदान । गरीबों को रुपया दिलाकर बेकारी को हटाने मे पूर्ण योगदान दें ।"

आपका शुभचिन्तक
राष्ट्रसेवक डॉ. पाण्डुरग
सस्थापक विश्व प्रेम सघ व
राष्ट्र सेवक समाज, साभरलेक

वे सभी के पास इस प्रकार के बुलेटिन भेजकर अपनी जन कल्याणकारी योजनाओं का बखान करते रहते है । ऐसी योजना की तारीफ भला कौन नही करेगा ! कितने ही पत्र लिखे है देश के महान् नेताओं को । उनके सग्रह मे पत्र है महात्मा गाधी, जवाहरलाल नेहरू, राजेन्द्र प्रसाद, राजगोपालाचारी, विनोबा भावे इत्यादि के । इनकी योजनाओं एव विचारो की सबने तारीफ की है ! कितनों का कल्याण हुआ है, कितने साक्षर हुये है, कितनी शान्ति स्थापित की है, इसका वास्तविक लेखा-जोखा या प्रमाण कही नही है । एक अदमनीय आकाक्षा महत्वपूर्ण बनने की, बड़ा बनने की, विशिष्ट बनने की इनमे इतनी घनघोर है कि ये इस प्रकार का प्रचार-प्रसार किये बिना नहीं रह सकते ।

कस्बे के विकास के लिए क्या नही किया था इन्होने । (स्वयं की मान्यता है), दुनिया भले ही न माने—दुनिया की आदत जो है ! किसी की तारीफ करते कितना कष्ट होता है लोगों को । और इसलिए तो विचारे डॉक्टर साहब को स्वय ही यह सब कुछ करना पड़ता है ।

डॉक्टर पाण्डुरग विद्वान है, धर्म एव दर्शन के ज्ञाता । घटो बात कर लीजिये उनसे । उनके पास वक्त की कमी नही । सेवा भाव वाले वक्त की परवाह नही किया करते है । अब आपके पास समय नही है तो आपका दुर्भाग्य । आपकी समझ मे उनकी फिलासफी नही आती है तो वे क्या करें । उनकी बातो से आप बुरी तरह बोर हो जाते है तो उनका क्या दोष ? आप अपनी समझ पर ही तरस खाइये ।

कस्बे मे कोई भी विशिष्ट अतिथि आयेगा तो कोई पहुँचे या न पहुँचे, डा. पाण्डुरग अवश्य पहुंच जायेंगे और बड़े विनीत भाव से अपना परिचय-पत्र पेशकर पुनः अपने को प्रस्तुत कर देंगे और पूछेंगे, 'सेवक को क्या आज्ञा है ?' चाहे नेत्र रोग का चिकित्सा शिविर हो या मूत्ररोगों का, या परिवार-नियोजन शिविर ।

डॉक्टर साहब अपने को 'आफर' कर देते हैं। यदि कोई इनसे सेवा नहीं लेता है तो वे क्या करें ?

सदैव अध्ययनशील, चिन्तन मनन करने वाले डॉक्टर पाण्डुरग को नासमझ लोग, जिनमे ज्यादा संख्या बडे लोगों की है, 'क्रैक' भी कहते हैं।

मुझे तो आते जाते टोक लेते है, कहते है—"मास्टरजी, कभी-कभी तो इस नाचीज को वक्त दिया करो।" और मैं बैठ जाता हूँ। वे अपनी विशाल योजनायें बताते हैं। "देखिये १०१ केन्द्र प्रौढ़ शिक्षा के खोलने है। मुझे आवश्यकता है 'वर्कर्स' की, निष्ठावान कार्यकर्ताओ की। आप जैसे महानुभाव ही मेरी इस योजना को सफल बना सकते है। आप यह सूचना प्रार्थना मे लड़कों को सुनाइयेगा। मैं आऊँगा एक रोज। केन्द्र सँभालने है।"

सत्य यह है कि कही कोई केन्द्र नही है—डॉक्टर साहब की महत्त्वाकाक्षाओं को किसी ने समझा नही। उस दिन जब मैं बैठा तो कहने लगे, "मास्टरजी जो कुछ कर सकता हूँ, करता रहता हूँ। यह शरीर नाशवान है, कुछ काम आ जाय तो शान्ति मिलेगी। समाज के विकास के लिये कुछ न कुछ करने की आदत सी पड गई है। देखिये न, राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री इत्यादि सभी से पत्र-व्यवहार चलता रहता है। मैंने कुतूहलवश वह पत्र-व्यवहार देखना चाहा। वे बडी प्रसन्नता के साथ यत्न से सहेजा एल्बम निकालकर दिखाने लगे। उन ऐतिहासिक पत्रों मे से अधिकाश जन्म दिवस पर भेजे गये सदेश अथवा उनके उत्तर थे। कुछ शोक सदेश, आभार प्रदर्शन, शुभकामनाये या चुनाव जीतने की बधाई। एक भी पत्र पर राष्ट्रपति या प्रधान मंत्री के हस्ताक्षर नही। सब सचिव द्वारा लिखे गये छपे हुये पत्र।

कौन नही जानता इस भव्य मूर्ति को, साभर की इस विभूति को! पेशा तो इनका डॉक्टरी है। आप चश्मो के और दाँतों के डॉक्टर है। होमियोपैथी और आयुर्वेद की औषधिया देते है। ७५ वर्ष की उम्र यों ही नही बिताई है। बड़ा तजुर्बा लिया है दुनिया का। इनके कबाड़ी खाने मे या यों कहिये सग्रहालय मे जाने कैसे-कैसे मे दुर्लभ ग्रन्थ हैं, कैसी दवायें हैं, नुस्खे है पर मरीज इनके पास कम ही जाते हैं। ये सेवक जो ठहरे! अन्यथा काफी कुछ कमा सकते थे। वैसे दवा वगैरह के पैसे लेते तो कस कर ही हैं।

सांभर का ऐसा कौनसा महत्त्वपूर्ण कार्य है जो इनकी सहायता के बिना हो गया हो। गुढाड़िया से पहाड़िया तक आपकी सीधी पहुँच है। जयनारायण व्यास भी इनसे ही विचार विमर्श करते थे कस्बे के विकास हेतु। अब लोग

नही बतायें, नहीं जिक्र करें तो क्या हुआ, बात छिपी नही रहती है। डॉक्टर साहब खुद बता देते हैं कि उनका इन सबमें कितना महत्त्व है।

काश, डॉ. पाडुरंग के दर्द को कोई समझता और उनकी महत्त्वाकांक्षा की कद्र करता तो वे निश्चय ही सही राष्ट्र-सेवक बन दिखाते। पर लोगों ने मन ही मन (सामने नही) उनका मजाक उड़ाया है और इसीलिये अपने अनन्त ज्ञान-कोष से वास्तव मे वे किसी को कुछ नही दे पाये। सब कुछ अधिकारी को ही मिलता है, कुपात्र को नही। ये तो लालायित है अपना सब कुछ देने को, समर्पण करने को। पर लोग दो मिनट का वक्त तक भी तो नही दे पाते उनको। यही तो डॉक्टर साहब की बेबसी है। डॉक्टर पाण्डुरग-सा विनीत विद्वान सहज मे नही मिल सकता। काश, उनकी महत्त्वाकांक्षायें पूरी हों और कस्बे का भी कल्याण हो।

□

# मास्टर फिरंगी

☐ वासुदेव चतुर्वेदी

मिस्टर फिरंगी के अब्बा ने न जाने क्या सोच कर उनका नाम फिरंगी रखा। हो सकता है बचपन मे गिरगिट की तरह रग बदलते देख कर उनका नाम फिरंगी रख दिया होगा। अब फिरंगी को लोग रगी भी कहने लगे है। मेरे ख्याल से उनका आकार प्रकार, उनका रंग रोगन, उनकी झगड़ालू प्रवृत्ति किसी पेटन टैंक को भी मात कर देती है। इनके मुँह मे पान की गिलौरियाँ इस तरह दबी रहती हैं कि बस यों समझो दुनाली भरी हुई है। उनकी बिलोरी आँखें बिल्ले की आँखो को भी मात कर देती है। गेहुँये रग को कुर्ते पाजामे मे समेटे, चप्पलें घिसटते घिसटते उनका असली रंग बदरग हो गया था। बीबी का रुतबा ऐसा कि चौराहे पर दहाडने वाले मास्टर फिरगी घर मे भीगी बिल्ली बन जाते। आप कुछ भी कहे पर मिस्टर फिरंगी को लोग मास्टर फिरगी के नाम से ज्यादा जानते है। चाहे उन्होंने स्कूल मे कभी नही पढाया और पढ्ते थे तब भी पाँचवें दर्जे मे फेल हो जाने के बाद गाडी आगे नही बढ़ पायी। कुछ परीक्षाएँ उन्होंने प्राइवेट पास करके एक-आध छोटी-मोटी डिग्री हासिल कर ली। जब उन्होंने कभी पढ़ाया नही तो फिर उनको मास्टर के नाम से क्यो पुकारा जाता है। इसलिए कि मास्टर की कक्षाएँ तो स्कूल मे लगती हैं पर मिस्टर फिरगी की कक्षाएँ लगती थी पान वालो की दुकान पर या चौराहे पर। पढ़ाई पढ़ाते थे राजनीति की। फटेहाल फटीचर मास्टर फिरगी रगीन तबियत के आदमी हैं।

इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नही। इनके जीवन मे रंगी अथवा फिरगी का जो प्रभाव है उसे अलग नही किया जा सकता। इसलिए कि आदमी भले ही फटीचर हो पर कदर तो उसके गुणों की होती है। उनकी अदाओ पर रीझ कर कॉलिज मे पढ़ने वालों ने इनको अपना जीवन साथी चुन लिया।

उधर इनके चाचा इनको लाखो की दौलत का वारिस बना रहे थे पर शर्त यह थी कि फिरगी शादी करे उनकी पसद की लड़की से। वे कहते, अगर हमारी बात नही मानेगा तो जिन्दगी भर फटीचर बना रहेगा। इस दौलत से महरूम रहेगा। पर फिरगी तो कालेज की उस हसीना पर जी-जान से मर मिटे थे। इसलिए लाखो की दौलत को लात मार कर उस हसीना से शादी कर ली। दो-चार दिन हो-हल्ला मचा फिर सब ठीक-ठाक हो गया। इसके बाद जमाने की हवा का असर फिरगी पर इस कदर चढा कि दिन भर राजनीति की बातें करते। पान वालो की दुकान पर मजमा लगा लेते। चौराहे पर भाषण झाड़ने लगते। राजनीति मे गाली पुराण को कठस्थ कर लिया हो तो उसका सितारा बुलद होने मे देर नही लगती। रेस मे मौका आने पर फिसड्डी घोड़ा भी कभी-कभी बाजी मार ले जाता है। यही हाल फिरगी का भी हुआ। राज-नीति के रग मे इस तरह चोला बदल लिया कि लोग उन्हे सच्चा सेवक मानने लगे। मगर पार्टी दफ्तर मे बिछी जाजम पर लेट कर पखे की हवा मे ताजगी लेने वाले मास्टर फिरगी की जिन्दगी मे कभी बहार नही आई।

खर्चे के लिए यहाँ-वहाँ से जो कुछ मिल जाता उसी से काम चल जाता था। शहर के नब्बे प्रतिशत पान वालों के यहाँ उनके खाते लगे हुए थे। नेतागिरी का लेबल इस तरह चिपका हुआ था कि किसी भी आफिस मे घुस जाएँ, मिस्टर फिरगी काम करवाए बगैर नही लौटते। इस तरह गुडते गुड़ते महादेव हो गये थे। शहर में किसी भी लक्ष्मण को 'शक्ति' लगती तो बस हनुमान जी संजीवनी लाने दौड पडते। उस समय हनुमान वायु मार्ग से गए थे। आज रेल, मोटर, तागा और रिक्शे है। एक से एक बढकर फाइव स्टार होटल है। किसी कार्य से राजधानी मे पहुँचना है तो खर्चे-पानी के नाम से दस आद-मियों से 'कुछ' बटोर लिया और निकल पड़े सजीवनी लाने। इस तरह *निःस्वार्थ जन-सेवा भी हो गई और अपनी पहुँच का अच्छा-खासा लाभ भी मिल गया।*

इधर फिरगी की बीवी जगी ने देखा कि समाज-सेवा का गजब का शौक फिरगी को लगा हुआ है। मुझे भी कुछ करना चाहिए, इसलिए उसने भी मोहल्ले की औरतो से सम्पर्क कर समाज-सेवा का बीडा उठा लिया। भगवान जाने समाज-सेवा का यह काम हुआ भी या नही, पर इसकी कई सहेलियाँ जरूर बन गई। मोहल्ले के हर घर मे दिन प्रतिदिन चाय नाश्ते के दौर चलते। गपशप

होती। रगी-जगी और फिरगी नामो की चर्चा बच्चे बूढ़े और जवान के मुँह पर आ गई।

फिरगी के एक दोस्त है वेणुगोपाल। बेचारे हमेशा राजनीति के पिटे इस मोहरे ने अबकी बार मास्टर फिरंगी को पत्र लिखा—

मेरे जिगरी,

मौका है, कई दिनो मे मुलाकात नही हो पाई, अधिवेशन मे भी प्रतीक्षा रही। प्रेम को पटा लो और किसी तरह अबकी बार बाजी मार लो। कहो तो साथ चलूं। कुछ दिन राजधानी मे मस्ती रहेगी।

'वेणु'

पत्र घर के पते से लिखा था। वेणुगोपाल 'वेणु' हो गई, जब फिरगी की बीवी ने पत्र पढ़ा। पत्र पढ़ते पढ़ते जंगी के तन बदन मे आग लग गई। अच्छा तो यह माजरा है! नेतागिरी करते है या छोकरियों से चोंचे लडाते है। इस हरामजादी वेणु को भी गुलछर्रे उड़ाने की सूझ रही है। वेहया लिख रही है प्रेम को पटा लो। आ जाएँ तो खबर लेती हूँ। कौन है यह राड़े? जवानी के दिनो मे मेरे इर्द-गिर्द चक्कर काटे। मुझ पर डोरे डाले। अब बुढापे मे भी नीयत ठिकाने नही। आ तो जाएँ यहाँ वो मजा चखाऊँ कि छठी का दूध याद आ जाए।

शाम को थके-हारे फिरगी घर लौटे तो जगी को बदरग देखकर कुछ पूछने की हिम्मत नही कर पाए। पर जगी तो जग करने पर तुली हुई थी। राजा दशरथ की रानी कैकयी ने तो कोप भवन मे शरण ले ली थी। इधर जगी मैदान छोड़ने वाली नही थी। तेवर बदल कर फिरगी की खबर लेने पहुँच गई। मैं पूछती हूँ यह रांड कौन है? कब से डोरे डाल रहे हो इन पर? कौन है ये वेणु और कौन है ये प्रेम? वेहया लिख रही है प्रेम को पटा लो और किसी तरह बाजी मार लो। लो देखो तुम्हारे काले कारनामो का फल।

फिरगी ने बीवी का क्रोध देखा तो ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की साँस नीचे रह गई। उनके चेहरे पर हवाइयाँ उडने लगी।

वेणु का पत्र पढा तो उनकी जान मे जान आ गई। मुस्करा कर वे बोले—भाग्यवान, बात को समझा करो। अक्ल का अगर दिवाला निकल गया हो तो जबान से बाहर बात निकालते समय सोच लिया करो कि क्या बात कर रही हो

और किसको कह रही हो। पहले एक गिलास पानी तुम पी लो फिर मुझे भी एक गिलास पानी पिला दो। दिमाग ठण्डा हो जाए तब बात समझाऊँ। ऊल-जलूल बोल कर दिमाग खराब करने की जरूरत नहीं।

दोनों ने एक-एक गिलास पानी पिया। जब दोनों नार्मल हो गए तो फिरंगी ने कहा, जिसे तुम वेणु समझ रही हो वह कोई औरत नहीं बल्कि मेरे दोस्त वेणुगोपाल है। दीपक जिन्हें चाचा जी कहता है वे ही वेणुगोपाल हैं और जिस प्रेम को पटाने की बात यह लिख रहा है वह कोई प्रेम नाम की लड़की नहीं, वह राजनीति का धुरंधर खिलाड़ी प्रेमस्वरूप है जो इन दिनों प्रान्त में पार्टी के उम्मीदवारों को टिकिट देने का काम कर रहे हैं। समझी? संकेतात्मक भाषा में पत्र लिखा है। प्रेमस्वरूप चूंकि वेणुगोपाल का लंगोटिया है इसलिए उसने चल कर काम करवाने की बात लिखी है। मैं भी इस बार एम. एल. ए. के चुनाव में खड़ा होना चाह रहा हूँ। यह पत्र उसी संदर्भ में लिखा है।

जगी इस बात को सुनकर मन ही मन खुश थी कि उनके पति निकम्मे नहीं है। आखिर वे भी चुनावी दंगल में कूदने के लिए जोड़-तोड़ बिठा रहे है। फिरंगी की बात सुन कर बोली—ओह, तो यह बात थी? सचमुच मैं गडबड सोच गई थी। अब मेरी समझ में सारी बात आ गई है। आइए, अब खाना खा लें।

जी-जान से प्रयत्न करने पर टिकिट मिल गया। टिकिट मिलने का श्रेय जितना फिरंगी के गाली पुराण को है उतना फिरंगी को नहीं। गाली पुराण का दो चार बार पारायण करने के बाद जब टिकिट मिल गया तो फिरंगी की रंगत ही बदल गई। कुछ दिनों बाद बात करने का लहजा ही बदल गया। चाल बदल गई, बात करने का ढंग बदल गया। बदल गई रंगत। सबसे बढ़ कर बात हुई कि बदली हवा में पूरा माहौल बदल गया। कुछ तो मोहल्ले के लडकों ने जोर लगाया. कुछ पार्टी के नेताओं ने मदद की। चुनाव में जीत मास्टर फिरंगी की ही हुई। तरह तरह की बातें होने लगी। कोई कह रहा था, अरे एम. एल. ए. हो गया तो कौन-सी बड़ी बात हो गई है? आज के जमाने में हर पाँचवें साल एक रेस होती है जिसमे जितना दम खम होता है वह सब लगा कर जीतने की कोशिश करता है। इस बार जो घुड़-दौड़ हुई उसमें यह पाँचवी फेल आदमी बाजी मार ले गया। कौन-सी बडी बात हो गई।"

"अरे जिन्दगी खपा दी बेचारे ने। पार्टी का वफादार कार्यकर्त्ता रहा है। देखना मिनिस्टर बनेगा मिनिस्टर!"

"अरे घोड़ा घोडा होता है। अच्छी नस्ल का घोड़ा अच्छी चाल चलता है। देखते हैं यह फिसड्डी घोडा कौन-सी चाल चलता है।"

"अरे मैं कहता हूं, देखना जॅकी को भी पीठ से गिरा कर यह ऐसी दुलत्ती झाड़ेगा कि कुछ ही दिनों मे यह चमक जाएगा।"

"क्या खाक चमकेगा। मिनिस्टर भी वन गया तो पहले ये अपना घर भरेगा फिर लोगों का मुंह बद करेगा।"

चौराहे पर खडे लोग मास्टर फिरगी के बारे मे तरह तरह की बातें करने लगे।

मास्टर फिरंगी की जीत जनता की जीत थी। पार्टी के वफादार सेवक की जीत थी। एक समाज सुधारक और सच्चे कार्यकर्त्ता की जीत थी।

जिस पार्टी के टिकिट पर मास्टर फिरंगी जीते थे बहुमत उसी पार्टी का था। इसलिए चास था कि मास्टर फिरगी भी मिनिस्टर वन जाएँ। जोड-तोड़ शुरू हुआ। वफादारी की शपथ और शहादत का परवाना। नए चेहरो को मौका मिले इस दृष्टि से मास्टर फिरगी को मिनिस्टर बना दिया गया। पार्टी के लोग सोचने लगे यह फिसड्डी घोड़ा रेस मे सबसे आगे आ गया। देखें क्या गजब ढाता है।

पार्टी के भीतर कुछ लोग मास्टर फिरगी को बुद्धू, अड़ियल राजनीति मे लगड़ा और नौसिखिया मानते थे। उन्हें उसका मिनिस्टर बनना फूटी आँख भी नही सुहाया। उन्हें लगा कि यह कौआ अब हस की चाल चलेगा।

मोहल्ले की औरतें, रिश्तेदार, पान की दुकान वाले और राशन की दुकान वाला रोशनलाल भी मौके का फायदा उठाने की सोचने लगे।

बस मास्टर फिरगी के शपथ लेते ही पहले बधाइयो का ताता लगा, उसके बाद—पत्रम् पुष्पम् लेने का कार्य शुरू हुआ।

कुछ ने रियायतें हासिल की, कुछ ने परमिट हासिल किए, कुछ ने अहसान जता अपना काम निकलवाया, कुछ ने तबादले करवाये, कुछ ने अपनो-परायो को लाभ पहुँचाया।

बात की बात मे मास्टर फिरगी की कलम एक्सप्रेस बन गई। पी. ए., सचिव जो भी कागज बना कर लाते बस फिरगी की कलम उस पर ऐसे चलती जैसे किसी बकरे की गर्दन पर छुरी चल रही हो।

दूर बैठा जैकी देखता रहा। फिसड्डी घोड़ा काफी नाच कूद लिया। अब इसके लगाम लगा देनी चाहिए। जैकी बेचारा सोचता रहा। फिरंगी की कलम अपना कमाल दिखाती रही। बूचड़खाने में हड्डियों का ढेर हो गया तब पता लगा कि अब गन्दगी बर्दाश्त से बाहर है। घी, दूध की नदियाँ बहाई जानी बद की जानी चाहिए। जैकी लगाम लेकर उठा और पानी की नदी के किनारे लाकर खड़ा कर दिया फिरंगी को।

□

# खेमाशाह

☐अचलचंद जैन

पात्र-परिचय

मुहम्मद वेगडा
(वघेरा)—गुजरात का बादशाह
दीवान—बादशाह का प्रधान सलाहकार
खेमाशाह—नाटक का मुख्य नायक, गुजरात का
प्रसिद्ध दानवीर शाह
शाहगण—अहमदाबाद के लक्ष्मीचन्द, लखपतराय,
हजारीमल, मनोहर लाल आदि
पहरेदार—शाही दरबार का पहरेदार
जनसमूह—अकाल पीडित लोगों का समूह
बूढा व्यक्ति—अकाल पीडित समूह का एक वयोवृद्ध,
साहसी एवं समझदार व्यक्ति
जौहरी—बादशाह के दरबार का एक प्रसिद्ध जौहरी
दरबारीगण—बादशाह के दरबार के दरबारी लोग

## पहला दृश्य

स्थान—बादशाह मुहम्मद बेगड़ा का शाही दरबार

बादशाह तख्त पर बैठे दिखाई दे रहे है। बादशाह के दोनों तरफ दीवान व सामन्तगण यथास्थान बैठे है। दीवान दाहिनी ओर के आसन पर एवं सामन्तगण बाईं ओर के आसनों पर बैठे हैं। दीवान की कुर्सी से थोड़े तिरछे हटकर नीचे की ओर दरबारीगण बैठे है। उनसे थोड़े फासले पर सुसज्जित पहरेदार खड़ा है। अन्य सभी यथास्थान अदब-कायदे से खड़े हैं।

पर्दा खुलते ही सभी दरबारीगण उठकर बादशाह को कोर्निश (झुककर तीन बार सलाम करना) बजा लाते हैं एवं यथास्थान बैठ जाते हैं।

बादशाह—(दीवान की ओर मुखातिब होकर)—क्यो, दीवानजी, अबकी मर्तबा कौन-कौन से इलाकों मे बारिश नही हुई ?

दीवान—(खड़ा होकर, कोर्निश बजाकर) जहापनाह, इस बार खास तौर से दक्षिण एव पश्चिम के बीच का इलाका बिलकुल सूखा रह गया है। आलमपनाह, ऐसी भी खबर मिली है कि उन इलाको मे मवेशी घास-पानी के अभाव मे मर रहे हैं। वहा के बाशिन्दों ने दरख्तों के छिलके कूट-पीसकर कुछ दिनों तक तो जैसे-तैसे गुजारा किया परन्तु अब तो किसी दरख्त पर छिलका भी नही रहा जिससे अगणित बच्चे एव बूढे बेमौत मर रहे है।

बादशाह—हम क्या करें ? उनकी तकदीर ही ऐसी है। अन्यथा अकाल ही क्यो पड़ता ? दीवानजी, जिनके तकदीर मे बेमौत मरना लिखा है तो वे मरेंगे ही।

दीवान—खुदावन्द, उन बेचारों पर कहर टूटा है। कैसी उनकी तकदीर फूटी है ? आलमपनाह, मैंने यह भी सुना है कि उन इलाकों के बचे-खुचे औरत मर्द सभी पनाहगीर होकर पेट भरने की फरियाद लेकर आलमपना के दरबार मे पहुँचने वाले हैं।

(कुछ ठहरकर) ऐसा दीख रहा है आलीजाह कि एक न एक दिन उन लोगों का काफिला जरूर यहां आ धमकेगा। ऐसी हालत मे उन्हे एक मात्र आपका ही सहारा हो सकता है। मौत और जिन्दगी का सवाल जो ठहरा।

बादशाह—तो इस तरह तो मुझे यों साफ-साफ दिख रहा है कि उन मूर्खों के अगली फसल तक खाने के बन्दोबस्त मे शाही खजाना चन्द रोज मे ही (हाथ से चुटकी बजाकर) खाली हो जायगा।

दरबारी—(खड़े होकर हा मे हा मिलाते हुए) हजूर, एकदम दुरुस्त फरमा रहे है। (बैठते हैं)

बादशाह—(दरबारियों की कही बात अनसुनी करके) इधर मेरी फौज को मैंने शुमाल की सरहद सर करने भेजा है। फौज की तीसरी कुमक भी भेजी जा चुकी है। फौज के खर्च के मारे तो वैसे ही महफिलों एव रगरेलियों का रंग फीका पड़ता जा रहा है। और अब तो यह वाकया सुनकर मेरी रूह काप उठी है। दिल की धड़कन बढ़ने लगी है।

(बादशाह का बयान सुनकर दरबार मे एकदम सन्नाटा छा जाता है। सभी सिर नीचा कर लेते हैं। कोई-कोई थोड़ा-थोड़ा ठहरकर बादशाह के चेहरे की ओर जरा-सी ऊची नजर करके देखकर फिर नीची नजर कर लेते है।)

बादशाह—(दरबारियों की ओर मुखातिब होकर) बोलो। तुम सभी लोग चुप्पी साधे क्यों बैठे हो? तुम लोग भी तो अपनी-अपनी सलाह पेश करो। (बादशाह सबके सामने तीखी नजर से देखता है। इतने मे एक पहरेदार दौड़ता, हाफता दरबार मे बादशाह के सामने हाजिर होता है। बादशाह को झुककर कोर्निश बजाता है। उसकी सास फूल रही है, बोला नही जाता।)

बादशाह—(पहरेदार की बदहवासी देखकर गुस्से में) क्या है? इतनी बदहवासी का सबब? खैरियत तो है। अबे बेवकूफ, बोलता क्यों नही? (माजरे को समझकर दीवान का मन ही मन मुस्कराना।)

पहरेदार—(फिर कोर्निश बजाता है), आलमपनाह, सारे जहा मे आपके

नाम का डंका बजता रहे। (हांफना अभी जारी है।)

बादशाह—(बीच में ही बात काटकर, गुस्से में) अबे अक्ल के अन्धे। तू जिस बात को कहने आया है, उसे जल्द क्यों नही कहता ?

पहरेदार—(गिड़गिड़ाता हुआ हाथ जोड़कर) खता मुआफ हो, कहता हू खुदावन्द। क्या करू ? दौड़ते-दौड़ते, यहा तक आपके कदमों मे पेश होते, इस नाचीज खाकसार का तो दम ही फूल गया। (फिर हांफता है, कुछ रुक कर) जहांपनाह, दक्षिण व पश्चिम के बीच के इलाको मे भुखमरी पडने से वहा की तमाम रियाया टिड्डी दल की तरह यहा उमड़ी आ रही है। और हुजूर, वे सब के सब आलमपनाह के महल के सामने ही पनाह लेने को कह रहे है ? (गिड़गिड़ा कर दोनो हाथ जोड़कर) बस इतना ही आपके कदमो मे अर्ज करने आया था। हुजूर, मेरी खता मुआफ की जाय। (पहरेदार का बादशाह के कदमो मे गिरना)

बादशाह—(डाटते हुए) चल हट, निकल यहा से। (सुनते ही पहरेदार का चले जाना। दरबारियो की ओर मुखातिब होकर —लो, जिसकी अभी-अभी चर्चा कर ही रहे थे वह शामत सचमुच आज ही आ गई।)

बादशाह—(दीवान की ओर मुखातिब होकर) देखो, बाहर मेरे महल के सामने वाले मैदान मे लोगो के झुण्ड के झुण्ड आ रहे है, सो पहरेदारो को लेजाकर उन्हे वही चुपचाप मैदान मे बिठाने की कोशिश करो। खबरदार। हो हल्ला कतई न होने पाये। उन लोगो से कहना कि बादशाह सलामत खुद तशरीफ लाकर तुमसे मिलेंगे।

दीवान—जो हुक्म आलीजाह। (आदाब बजाकर जाना। बादशाह गमगीन बन जाता है। दरबार बरख्वास्त किया जाता है। बादशाह का तख्त से उठना। पर्दा गिरता है।)

## दूसरा दृश्य

स्थान—बादशाह के महल के सामने का मैदान।

भूख से मरते नर-नारी, बच्चे, बूढे सभी असहाय अवस्था मे

बैठे दिखाई दे रहे है। बच्चे भूख के मारे चीख रहे है, उनकी माताएँ रो रही हैं। सभी ओर से आर्त्तनाद सुनाई दे रहा है।

(दो सिपाहियों का प्रवेश)

सिपाही—(भूख से तड़पते लोगों को डाटकर) चुप हो जाओ। खबरदार, अगर किसी ने भी हल्ला मचाया तो। बादशाह सलामत अभी खुद तुम्हारे ऊपर मेहरबानी करके तशरीफ ला रहे है।

जनसमूह—(जोर से एक साथ चिल्लाकर) जय हो बादशाह सलामत की जय हो। (सिपाही फिर डाटता है। सिपाही के डाटने पर सब शान्त हो जाते हैं। इतने मे बादशाह अपने कुछ दरबारी व सामन्तों के साथ आते हुए दिखाई देते है।

सिपाही—(जनसमूह को सम्बोधित करके) बैठो, बैठो चुपचाप बैठ जाओ। देखो, वे बादशाह सलामत तशरीफ ला रहे है। (बादशाह को आता देखकर जनता आंधी की तरह उमड़कर बादशाह के कदमों में गिरना चाहती है। इस हड़बड़ी मे कई लोग एक दूसरे पर गिरते है, चिल्ल-पो मचती है। सिपाही जनता को रोकने की कोशिश करते है।)

बादशाह—(अव्यवस्थित उमड़ती भीड़ को देखकर गुस्से में) भूखे मरते हो तो यहा क्यो आये हो? चले जाते किसी दूसरे राज्य मे और मेहनत मजदूरी कर पेट भरते। यहा क्या तैयारी है कि तुम सबका प्रबन्ध हो जाय?
भीड मे से एक बूढ़ा और सयाना व्यक्ति साहसपूर्वक उठकर खडा होता है और बादशाह को हाथ जोड़कर अर्ज करता है।)

बूढा—जय हो, आलमपनाह की। हम सब आपकी रियाया है। आपके सिवाय हमें कौन सहारा दे सकता है? इन बच्चों और बूढ़ों का इस भयंकर अकाल मे हुजूर के सिवाय और कौन माकूल इन्तजाम कर सकता है? अन्नदाता हम सब आपके ही आसरे हैं। (बच्चे चिल्लाते है। जनसमूह भूख के मारे व्याकुल है। चारों ओर गमगीनी छा गई है।)

बादशाह—(करुण चीत्कारों से पसीज कर) दीवान जी, इस जनसमूह

के लिये १५ दिन तक के भोजन का प्रबन्ध शाही खजाने में किया जाय और तब तक आगे के प्रबन्ध के लिये कोई उपाय ढूंढा जाय।

बूढ़ा—(ऊंचे स्वर में) जय हो, आलमपनाह की। हम इसी भरोसे आपके कदमों में हाजिर हुए हैं। जहांपनाह, हमारा इन्तजाम जल्द से जल्द करवाया जाय, नहीं तो हम सब भूख के मारे बेमौत मर जायेंगे। (रोने का स्वर उनकी पुकार सुनकर बादशाह उन्हें ढाढ़स बंधाते हैं एवं शीघ्र इन्तजाम का आश्वासन देकर वहां से प्रस्थान करते हैं। पर्दा गिरता है।)

## तीसरा दृश्य

स्थान—बादशाह मुहम्मद बेगडा का शाही दरबार। दरबार खचाखच भरा है, सभी दरबारी एवं कर्मचारीगण यथास्थान बैठे एवं खड़े हैं। बादशाह तख्त पर चिन्ताग्रस्त बैठे हैं। पहरेदार का प्रवेश।

पहरेदार—हजूर का बोलबाला। जहांपनाह की खिदमत में कुछ शाह लोग पेश होना चाहते हैं।

बादशाह—शाह लोग? कैसे शाह? दीवान जी, इन शाह लोगों के बारे में आपको जानकारी है क्या?

दीवान—(खडे होकर) हुजूर, इनके पूर्वजों ने इस धरती पर कई ऐसे ऐसे काम किये हैं, जिससे उन्हें यह खिताब इनायत हुआ है। यह बात आजकल की नहीं है जहांपनाह, सदियों से चली आ रही है। (बैठ जाना)

बादशाह—समझ में नहीं आता कि जो सल्तनत का मालिक होता है वही शाहजहां कहलाता है। (गुस्से व जोश में) फिर इन शाह कहलाने वालों ने कौन-सी सल्तनतों पर राज्य किया है? कौन से मुल्क फतह किये हैं?

दीवान—(पुनः खड़े होकर) जहांपनाह आपका फरमाना ठीक है कि इनके पुरखों ने सल्तनतों को फतह करके राज नहीं किया। परन्तु हुजूर, इतिहास इस बात का साक्षी है कि शाह लोगों के पुरखों ने ही आड़े समय में सल्तनतों की आर्थिक सहायता

कर उनके अस्तित्व की रक्षा की है जिससे सल्तनतें दुश्मनों के पंजों से बाल-बाल बच गयी । इतना ही नहीं हुजूर, शाह लोग अपनी बुद्धि-कौशल से कई सदियों तक सारे राज की बागडोर को भी सम्भालते रहे है । (बैठ जाना)

बादशाह—हू—तो इसी कारण वे लोग शाह कहलाते है । (मन ही मन मे) तब तो अच्छा अवसर है, अकाल के समय इन्हे परखने का । पहरेदार, शाह लोगो को दरबार मे आने की इजाजत है । उन्हे बाइज्जत दरबार मे आने दिया जाय।

(पहरेदार का प्रस्थान एवं शाह लोगो का प्रवेश । )

शाह लोग—जहांपनाह की जय हो ।

बादशाह—आप लोग ठीक वक्त पर आये हैं । बैठिये । (शाह लोग बैठते हैं) उनमे सबसे वृद्ध लक्ष्मीचन्द हाथ जोड़कर बादशाह से अपनी बात अर्ज करने की इजाजत मागते है । बादशाह उन्हे इजाजत देते है ।

लक्ष्मीचन्द—(हाथ जोडकर) इस बार दक्षिण एवं पश्चिम के बीच के इलाके मे जबरदस्त अकाल पड़ा है । भूख के मारे चारों ओर त्राहि-त्राहि मची हुई है । जहापनाह, ऐसे वक्त मे हुरड़ा ग्राम के खेमाशाह ने अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति से अनाज खरीद-कर प्रत्येक गांव मे मुफ्त अनाज की दुकानें खोलने का सकल्प किया है । और हुजूर से इस हेतु प्रत्येक गाव में केवल व्यवस्था सम्बन्धी मदद चाही है ताकि अकालग्रस्त सभी गावों मे लोगों को भूख से मरने से बचाया जा सके ।

बादशाह—(आश्चर्य मिश्रित खुशी से) क्या ? खेमाशाह ने अपना सारा धन अकाल पीड़ितों की भूख मिटाने के लिये खर्च करने का निर्णय ले लिया है ? (दीवान की ओर मुखातिब होकर) दीवानजी, अगर यह सही है तो खेमाशाह का राजकीय सम्मान किया जाना चाहिए ।

लक्ष्मीचन्द—हुकम की यह बात सौ फीसदी सही है ।

दीवान—जहापनाह, शाह लोगो की बात ही और है, ये लोग अपने बुद्धिबल से कमाते भी अनाप-शनाप है और समय आने पर देश के लिये सब कुछ लुटा देते है ।

बादशाह—अब मैं समझ गया कि एक बार एक चारण ठीक ही कह रहा था कि यह कौम पहले की शाह है। बाद में सल्तनत हमारे पुरखों के हाथ में आयी है, इसीलिये हम लोग बादशाह कहलाये। शाह लोगो, हम दानवीर खेमाशाह से मिलना चाहते हैं।

लक्ष्मीचन्द—हुजूर, वे भी आपके दर्शनों के लिये लालायित हैं।

बादशाह—तो उन्हें यहा आदरपूर्वक बुलाया जाय।

शाह लोग—हम उन्हें शीघ्र ही हुजूर की खिदमत में ले आयेंगे।

बादशाह—बहुत अच्छा। दीवानजी, सभी सूबेदारों के नाम आदेश जारी कर दो कि खेमाशाह द्वारा अकालग्रस्त लोगों के लिये वितरित किये जाने वाले अनाज को वितरण करवाने एव व्यवस्था बनाये रखने में हमारे शासन की ओर से पूर्ण मदद दी जाय। और हमारे राज्य में जहा भी खेमाशाह जायें उनका खूब आदर-सत्कार किया जाय।

दीवान—जो हुक्म।

पर्दा गिरता है।

## चौथा दृश्य

स्थान—स्थल मार्ग।

लक्ष्मीचन्द, लखपतराय, हजारीमल एव मनोहरलाल चारों शाह बैलगाड़ियों में बैठकर आपस मे बातें करते हुए खेमाशाह के गांव की ओर जा रहे हैं।

लखपतराय—भाई साहब, खेमाशाह ने तो कमाल ही कर दिया। उन्होंने अपने बच्चों के लिये एक कौडी भी शेष नहीं रखी।

हजारीमल—ठीक ही है। पूत सपूत तो क्यू धन सचे, पूत कपूत तो क्यू धन सचे।

मनोहरलाल—वास्तव में भूखे इन्सानों की मदद करना ही सच्चा धर्म है। मानव वही है जो मानव के लिये मरे।

लक्ष्मीचन्द—खेमाशाह, सही माने में भगवान महावीर के अनुयायी हैं। लगता है 'दया धर्म का मूल' उनका जीवन दर्शन बन गया है। धन्य है ऐसे सपूतों को। मा के ऐसे सपूत ही कौम और देश का नाम रोशन करते हैं।

(काफी रात्रि गये पड़ावों के बाद चारों शाह लोग खेमाशाह के गांव हुरड़ा पहुंच जाते हैं। प्रातः ६ बजे के लगभग गाव के नर-नारी और चौपाये जानवर आते-जाते दिखाई दे रहे है। शाह लोग गाव मे प्रवेश करते है।)

लक्ष्मीचन्द—अच्छा हो, हम लोग मन्दिर मे चलकर पहले भगवान के दर्शन करलें। (चारों शाह लोग भगवान के दर्शनार्थ मन्दिर मे पहुँचते है। सयोग मे खेमाशाह भी उस समय मन्दिर मे है। वे पूजागृह मे पूजा के कपडे बदल रहे है। अत: इन शाह लोगों को नही दीख पाते। जैसे ही चारो शाह लोग दर्शन कर लौटते है खेमाशाह उन्हे मन्दिर की सीढ़ियों पर ही मिल जाते हैं। जैसे ही वे एक दूसरे को देखते है परस्पर जय-जिनेन्द्र करते है। अभिवादन के बाद वे उत्साहपूर्वक एक दूसरे से गले मिलते है। खेमाशाह खद्दर की मोटी धोती, अगरखी एव साफा बाधे हुए है। ललाट पर तिलक किया हुआ है।)

खेमाशाह—(चारों से गले मिलने के बाद) पधारो शाह सिरदारो।

लक्ष्मीचन्द—हम आ ही रहे थे। सोचा कि भगवान के दर्शन करके ही चलें। अच्छा हुआ इतने मे आप भी मिल गये।

खेमाशाह—भगवान सब अच्छा ही करता है। अब आप घर पधारो और भोजन करो।

(चारों शाहों का खेमाशाह के साथ उनके मकान की तरफ प्रस्थान। पर्दा गिरता है।)

## पाँचवाँ दृश्य

स्थान—खेमाशाह का मकान।

चारों शाहों को खेमाशाह मान-मनुहार पूर्वक भोजन करवा रहे हैं। चारो शाह प्रेमपूर्वक भोजन करने के बाद खेमाशाह के मकान मे बने बैठक के कमरे मे जाकर बैठते है। इतने मे खेमाशाह का लड़का सुपारी इलायची लेकर आता है एव सबको पेश करता है।

खेमाशाह—आपने मेरी अर्ज बादशाह सलामत तक पहुँचा दी होगी।

लक्ष्मीचन्द—आपकी सम्पूर्ण योजना हमने बादशाह सलामत को अर्ज कर दी है और बादशाह सलामत ने समस्त अकालग्रस्त इलाको के सूबेदारों को आप द्वारा वितरित करवाये जाने वाले अनाज की व्यवस्था करने के आदेश जारी कर दिये हैं।

खेमाशाह—इस मदद की पहल करने के लिए आपको खूब-खूब धन्यवाद।

लखपतराय—असली धन्यवाद के अधिकारी तो शाह साहब, आप है। आपने अकालग्रस्त लोगों के दु:ख को अपना दु:ख समझा है और उनके लिए आपने अपना सर्वस्व दे दिया है।

हजारीमल—(बीच में ही) शाह साहब, आपने तो हमारी शाह कौम की प्रसिद्धि में चार चाद लगा दिये हैं। और लाखो लोगों को मौत के मुँह से बचा लिया है। पूरे देश को आप जैसे दानवीर शाह पर गर्व है।

खेमाशाह—(हाथ जोडकर)—सिरदारो, मै तो सिर्फ आप सब का तुच्छ सेवक हूं।

मनोहरलाल—बस, बस शाह साहब, "हीरा मुख से कब कहे लाख हमारो मोल।" अब एक अर्ज और है कि आप मेहरबानी कर हमारे साथ बादशाह के दरबार मे पधारें।

खेमाशाह—मुझे नाम और मान की कोई चाह नही है। मैंने यह एक हीरे की अगूठी बादशाह सलामत को भेंट करने के लिए रखी है अत मेहरबानी कर अगूठी बादशाह सलामत को भेंट कर देना।

लक्ष्मीचन्द—बादशाह सलामत ने स्वयं आपसे मिलने की इच्छा जाहिर की है। इसलिए हम लोग आपको लेने यहाँ आये हैं।

मनोहरलाल—(बीच मे ही) और बादशाह सलामत ऐसे नररत्न से मिले बिना कैसे रह सकते है? अतः आप और हम सब एक साथ ही चलते है।

(रास्ते मे खेमाशाह द्वारा राजधानी मे एकत्रित अकालग्रस्तो एव अकालग्रस्त अन्य गावो हेतु भेजी गई अनाज की बोरियो से भरी हुई असख्य गाडिया अलग अलग गावो की ओर जाती हुई दिखाई दे रही है। पाचों शाह लोग रात्रि पड़ाव

करते हुए राजधानी पहुंचते हैं।)

पट परिवर्तन

स्थान—बादशाह का दरबार

बादशाह तख्त पर विराजमान है और सभासद यथास्थान बैठे हैं। पहरेदार का प्रवेश।)

पहरेदार—(आदाब बजाकर) जहापनाह, शाह लोग आपकी खिदमत मे हाजिर होने की इजाजत चाहते हैं।

बादशाह—उन्हें इजाजत है (एक ओर से पहरेदार का जाना दूसरी ओर से चारों शाहों का प्रवेश।)

रों शाह एक साथ—शाहशाह की जय हो।

बादशाह—(उनकी ओर देखकर) खेमाशाह कहां है।

लक्ष्मीचन्द—हम उन्हें ले आये हैं। वे आपके दर्शन के लिए बेताब हो रहे हैं। आपका हुक्म था कि उनका राजकीय सम्मान किया जाय।

बादशाह—हा शाह लोग, हम ऐसे दिलेर इन्सान का राजकीय सम्मान करना चाहते है। दीवानजी राजकीय सम्मान के साथ उन्हें यहा लाने की व्यवस्था की जाय।

(दरबार का बरख्वास्त होना एवं दीवान का चारों शाहों के साथ बातचीत करना। खेमाशाह को सम्मानपूर्वक लाने हेतु सबसे बुजुर्ग शाह लक्ष्मीचन्द के नेतृत्व मे राजकीय सवारी भेजना। पर्दा गिरता है।)

## छठा दृश्य

बादशाह के महल के सामने दूरस्थ मैदानी भाग। जहां अकाल पीड़ितो की बस्ती एव उनके साथ के मवेशी दिखाई दे रहे है। इन सबके जीवन यापन की व्यवस्था खेमाशाह की ओर से हो रही है। इस व्यवस्था के कारण अकाल पीड़ितो के दिल में खेमाशाह के प्रति श्रद्धा है। वे बात बात मे खेमाशाह की दानवीरता की तारीफ करते है एवं उनकी जय जयकार करते हैं।

स्थान—बादशाह का शाही दरबार
बादशाह तख्त पर बैठे है। सभी दरबारीगण यथोचित स्थान पर बैठे हैं।

पहरेदार—(कोर्निश बजाकर)—जहांपनाह का सितारा दिनों दिन बुलन्द हो। खेमाशाह कुछ शाह लोगो के साथ दरबार मे हाजिर होना चाहते है।

बादशाह—उन्हें बाइज्जत हाजिर किया जाय।
(पहरेदार का प्रस्थान एव खेमाशाह का शाह लोगो के साथ प्रवेश।)

सब एक साथ—बादशाह सलामत की जय हो।

बादशाह—(खेमाशाह एव अन्य शाहो को आदरपूर्वक यथा स्थान बिठाते हैं एव बादशाह खेमाशाह को कुछ समय तक गौर से देखते है।) इतने बड़े दौलतमन्द इंसान को इतने सादे लिबास में देखकर एकाएक यह विश्वास करना कठिन हो जाता है कि जिस खर्चे का भार वहन करने मे शाही खजाना भी डगमगा रहा था उस सम्पूर्ण खर्चे का भार इस शख्स ने उठाया है। धन्य है, खेमाशाह जैसे सपूत को।
(खेमाशाह बादशाह को एक बेशकीमती हीरे की अगूठी भेंट करते है।)

बादशाह—(चमचमाती अगूठी को हाथ मे उठाकर) आह, क्या ऊंची किस्म का हीरा है। (शाही जौहरी की ओर देखकर एव उसके हाथो मे अँगूठी थमाकर) क्यों? इसकी कीमत आक सकते हो?

जौहरी—(हीरे की अँगूठी को अच्छी तरह से जाच कर एवं परख कर आश्चर्य के साथ) जहांपनाह, ऐसा कीमती हीरा मैंने आज तक नही देखा है। इसकी कीमत कम से कम भी आकी जाय तो एक करोड़ अशर्फियो से क्या कम होगी? हुजूर, यह हीरा तो जन्नत की जमीन का दीखता है। जहांपनाह, इस धरती पर तो ऐसा हीरा मिल नही सकता। (जौहरी

अंगूठी बादशाह को वापस देता है। सभी दरबारी एव बादशाह स्वय आश्चर्यचकित होकर खेमाशाह को देखते है।

बादशाह—(खेमाशाह से) ऐ मेरे रहम दिल, महामानव शाह, तुम्हारी जितनी भी तारीफ की जाय वह थोड़ी है। तुम्हारे सादे लिवास को देखकर तो हैरानी होती है। क्योकि आजकल के रईस तो बेशकीमती जेबरो व कपड़ों से खूब लदे रहते हे। जबकि तुम्हारे हाथ में तो एक अगूठी तक नही है।

खेमाशाह—बादशाह सलामत, मै तो एक अदना इसान हूँ। सादगी को ही खुदा प्यार करते है। बाहरी श्रृंगार तो दुनिया को रिझाने के लिए किया जाता है।

बादशाह—क्या सार की बात कही है?

खेमाशाह—हजूर, हमारे पूर्वजो ने वक्त पर बड़े से बड़ा त्याग एव बलिदान किया है एव सल्तनतो की-इज्जत आवरू ही नही रखी अपितु करोड़ों इन्सानो के जान की रक्षा भी की है। जहापनाह, यद्यपि मैंने परिश्रम से धनोपार्जन किया है फिर भी मै इस धन को मेरा नही मानता। मैं इस पर सम्पूर्ण समाज का हक मानता हू और इस धन को सार्वजनिक हित के काम लगाना अपना कर्तव्य समझता हू।

बादशाह—(खुश होकर) क्या खूब। वाह, वाह। तुम्हारी कौम मे रहम-दिली तो कूट कूट कर भरी हुई है। वाकई तुम सच्चे माने मे 'शाह' हो।

खेमाशाह—हजूर, प्राणी मात्र पर दया करना ही धर्म है।

बादशाह—वेशक, तुम्हारी रहमदिली की हम तारीफ करते है। तुम्हारे जैसे शाह लोगों को खुदा सलामत रखे, यही मेरी आरजू है।

खेमाशाह—हजूर, भूखे, नगे, वेसहारा एव उपेक्षित लोगो की मदद करने मे ही 'शाह' खिताव की गरिमा है।

बादशाह—खेमाशाह तुम महान हो।

खेमाशाह—महान तो जहापनाह हैं जिन्होंने मुझ इन्सान को दरबार मे आने एव इन लाखो लोगों की सेवा करने का अवसर दिया।

बादशाह —(दरवारियों की ओर मुखातिब होकर) सबके सब खेमाशाह

की जय बोलो।

खेमाशाह—नही जहांपनाह, जय मेरी नही, जय आपकी हो। (खेमाशाह एवं साथ आये शाह लोग बादशाह की जय बोलते हैं। इधर दरबार के अन्य सभी लोग बादशाह के हुक्म के अनुसार खेमाशाह की जय बोलते हैं। उधर बाहर दूर मैदान मे खेमाशाह के जय की आवाजें आसमान छूने को हो रही थी।

पर्दा गिरता है।



# मुक्ति

□लीला शर्मा

(एक बड़ी हवेली के, बड़े कमरे मे सेठ दौलतदास मसनद के सहारे लेटे हुए हैं। पास मे सेठानी बैठी सरौते से सुपारियाँ काट रही है।)

दौलतदास—सेठानी, तुझे इस सरौते से सुपारियाँ काटते हुए कितने साल हो गये ?

सेठानी—तीस साल से ज्यादा तो हो ही गये हैं। क्या आप नया सरौता खरीदने की सोच रहे हैं ?

दौलतदास—नही, मैं स्वस्थ हू। मुझे फिजूलखर्ची का बुखार नही चढ़ा है। मैं सोचता हूं तुम्हे सुपारियाँ काटने का काफी अभ्यास हो गया है। यह काम तो तुम अन्धेरे में भी कर सकती हो। रोशनी की क्या जरूरत है। इसे बंद कर दें ताकि कुछ तो बचत हो सके।

(दौलतदास ने बैठे बैठे ही छड़ी के सहारे बटन ऊपर कर दिया। हल्का अन्धेरा हो गया।)

सेठानी—इस अन्धेरे मे मेरी अंगुली कट गई तो ?

दौलतदास—थू थू, बुरा मत सोचा करो। मेरी तरह हरदम अच्छा सोचा करो।

सेठानी—इस समय आप क्या अच्छा सोच रहे है ?

दौलतदास—वही जो किसी व्यापारी को सोचना चाहिए। मैंने गोदाम बाजरे से भर रखे है और मेरे सामने वाले ने ज्वार से। मैं तो यही सोचूगा कि बाजरे के भाव बहुत ऊचे चले जायें और ज्वार के एकदम नीचे गिर जायें। इसी तरह अपने रामदास

के लिए ऐसा रिश्ता मिल जाये कि खूब दहेज आये और इस बेटी राधा का ब्याह बिना दहेज के हो जाये।

(दरवाजे पर खटखट होती है। सेठानी जल्दी से उठकर रोशनी करती है और भीतर चली जाती है। सेठ दौलतदास दरवाजा खोलते है। दरवाजे पर सेठ पूंजीदास खड़े हैं।)

दौलतदास—आइए आइए। रात के समय कैसे चले आये? खाना तो खाकर ही आये होंगे? आप कुछ गम्भीर नजर आ रहे है। कही बाजरे का भाव नीचे तो नही आ गया है?

पूंजीदास—नही भाई, मैं तो आपसे कुछ निजी बाते करने आया हू।

दौलतदास—फिर तो रोशनी की क्या जरूरत है। हमने एक दूसरे को देख ही रखा है।

पूंजीदास—सुनिये भाई साहब, जमाना बड़ा अजीब आ गया है। मेरी बेटी स्मिता ने आज ही अपनी माँ को बताया कि वह आपके बेटे रामदास ने प्यार करती है। वह शादी करेगी तो सिर्फ रामदास से। आप जानते ही है मेरे एक ही बेटी है। मेरी पत्नी को तो आप जानते ही है, बेटी जो कह देती है उसे पूरा करके ही मानती है। उसी ने मुझे आपके पास भेजा है। आप यह रिश्ता स्वीकार कर ले।

दौलतदास—वाह सेठ जी, सौदा लेकर आप खुद ही चले आये। हमारे रिवाज के मुताबिक तो पहले दलाल आते है। भाव ऊंचे नीचे होते है। यह वैभव का सौदा···?

पूंजीदास—थोड़ी देर के लिए व्यापार को भूलकर प्यार पर आ जाइए।

दौलतदास—सेठजी, रामदास मेरा इकलौता बेटा है। मैने उसे कालेज मे पढ़ाया है। अपनी बिरादरी मे कालेज मे पढ़े लडके को दहेज मे स्कूल तक पढे लड़के से दो गुना धन मिलता है। चलो, सीधे ही फाइनल पर पहुच जाते है। एक लाख रुपया नकद लूंगा। गहने और कपड़े तो आप अपनी बेटी को देंगे ही।

पूंजीदास—सेठ दौलतदास, तुमने बाजरे का स्टाक किया है। उसका भाव बढ़ता जा रहा है। मेरे ज्वार के स्टाक पर तो सीधा घाटा पड़ रहा है। ज्वार के भाव ही नही बढ़ रहे है। कुछ कम करो।

दौलतदास—रामदास भी मेरा स्टाक है। जब बाजरे के भाव बढ़ रहे हैं तो रामदास के क्यों नही ?

पूंजीदास—सेठजी, मान लो मामला इसके विपरीत होता···।

दौलतदास—यानी बाजरा आपके गोदामों में और ज्वार मेरे गोदामों मे तो ?

पूंजीदास—यही मान लो। आपकी बेटी राधा भी कालेज मे पढ़ती है और मेरा बेटा अशोक भी। यदि उनकी आँखें चार हो जाती यानी जिस तरह मैं आपके पास आया हू, वैसे ही आपको आना पड़ता तो ?

दौलतदास—तो क्या ? मै कोई आपकी तरह कजूस थोडे ही हू। लड़की के रिश्ते की बात करने आता तो दहेज की सूची साथ मे लाता। अगर मेरी बेटी राधा ने आपके बेटे से प्यार किया होता तो शादी मे दो लाख रुपये नकद देता। एक कार, फ्रिज और टेलीविजन भी देता। गहने और कपड़ो का ढेर लगा देता।

पूंजीदास—सेठ दौलतदास को मैंने व्यापार मे तो जबान का पक्का देखा है ब्याह शादी के मामले मे···।

दौलतदास—अरे क्या बात करते हो सेठ पूंजीदास ! जबान से जो कह दिया वह कह दिया। उससे फिरता नही हू मै।

पूंजीदास—तो सेठजी, आपके लिए खबर यह है कि आपके बेटे ने मेरी बेटी को नही बल्कि मेरे बेटे को आपकी बेटी ने पसद किया है ?

दौलतदास—है है ? क्या यह सच है ?

(सेठ दौलतदास बेहोश हो जाते हैं। भीतर से सेठानी भागी आती है। सेठजी के मुंह पर पानी के छींटे मारे जाते हैं तो उन्हें होश आ जाता है। वह कुछ देर सेठ पूंजीदास को घूर कर देखते हैं।)

दौलतदास—सेठ पूंजीदास, आज आपने व्यापार मे मुझे मात कर दिया। मेरे बाजरे का भाव मदा कर दिया और अपनी ज्वार को ऊंचा उठा दिया। लेकिन मैं भी सेठ दौलतदास कहलाता हू। जितना कहा है, उससे ज्यादा दूंगा। मुझे मेरी बेटी का रिश्ता तुम्हारे बेटे के साथ मंजूर है।

(सेठ पूंजीदास के चेहरे पर खुशी न देखकर)

क्यों सेठ पूंजीदास, उदास क्यों हो गये। खुश हो जाओ। तुम्हारी बेटी को मनचाहा वर मिलेगा और तुम्हे दहेज में मनचाही राशि। तुम्हारे ज्वार का भाव ऊंचा हो गया यार, मेरे बाजरे का नीचा, फिर भी मैं खुश हूं। तुम क्यों नहीं?

पूंजीदास—सेठजी, गोदामों में भरा आपका बाजरा और मेरा ज्वार दोनों अपने लिए मिट्टी हो गये हैं। मेरे बेटे ने कह दिया है वह दहेज नहीं लेगा। जब वह अपने पांव पर खड़ा हो जायेगा तब आपकी बेटी से किसी मंदिर में शादी करेगा। हमारे पास तो वे सिर्फ आशीर्वाद लेने आयेंगे।

दौलतदास—रोशनी जलाओ यार। जब ऐसी औलाद पैदा हो गई तो किसके लिये कंजूसी।

□

# नालन्दा का प्राचीन विश्वविद्यालय बोला

□ विद्यासागर राय

(एकान्त और सन्नाटे का अनुभव कराने वाली ध्वनि, तेज हवा, साय-सांय। पत्तों की गड़गड़ाहट, बिजली की कड़क का प्रभाव, धीरे-धीरे फेड आउट और फिर गूंजती हुई आवाज में निम्नलिखित स्वर उभरता हुआ—

वक्त से है आज और कल,
वक्त से है कल और आज,
वक्त की हर शै गुलाम,
वक्त का हर शै पे राज,
आदमी को चाहिए वक्त से डर कर रहे
कौन जाने किस घड़ी वक्त का बदले मिजाज।

आवाज (प्रतिध्वनि में)—ओह! समय बलवान होता है। समय समय की बात है। समय के झंझावतों ने बड़े बड़े राजा महाराजाओं को मिट्टी में मिला दिया। रंक को राजा और राजा को रंक बना दिया। भव्य एवं सुन्दर प्रसादों को वीरान कर दिया। ओह! क्या था मेरा वह रूप? और आज…आज यह खण्डहर यह एकान्त कितना भीषण…कैसा भयावह

(वही सन्नाटे की आवाज तेज होती हुई).

आज यहां उल्लू बोलते हैं…(उल्लू की घू घू, चमगादड़ों की ची ची की ध्वनि)

चमगादड़ें यहां अपना बसेरा बनाये हुए है, आज मेरा कोई न रहा,

मेरी बात तक सुनने वाला कोई न रहा (सन्नाटे की ध्वनि और उभरती हुई)

हा, कभी कोई भूले भटके मुझे देखने चले आते है और यहा मेरे आगन में खड़े होकर मेरे पुराने गौरव को नमन करते है, तो सहसा मेरा मन पुरानी स्मृतियो मे खो जाता है।
पहिचाना मुझे मैं कौन हूँ (पॉज)

मैं···मैं नालन्दा का प्राचीन विश्वविद्यालय हूँ जो लगभग 600 वर्षों तक एशिया की चेतना का केन्द्र रहा। दुनिया आज तक मेरा नाम भूल नही पाई। शायद भूलेगी भी नही, क्योकि मैं भारतीय प्राचीन संस्कृति का प्रतीक, पुरातन में ज्ञान का सूर्य बन कर चमका हूँ। मैंने अपने ज्ञान आलोक से दिशाओं को प्रकाशित किया है।... कितना श्रेष्ठ और पावन दिन था वह, जिस दिन बौद्ध धर्म के प्रवर्तक महात्मा बुद्ध के चरण यहां पड़े थे और···और मेरे जन्म के सूत्र एकत्र हुए थे। ओह, वह घटना।

(समवेत स्वर मय सगीत)—

धम्म शरणम् गच्छामि,
संघं शरणम् गच्छामि,
बुद्ध शरणम् गच्छामि,

(जयजयकार की ध्वनि उभरती हुई)—बौद्ध धर्म की जय हो, बौद्ध सघ की जय हो, भगवान बौद्ध अमर रहे।)

बुद्ध— शान्त! राजग्रह के धर्म प्राण लोगो, शान्त। धर्म की शरण मिलेगी, सघ की शरण मिलेगी, अहिंसा की ज्योति फैलेगी, ज्ञान का प्रकाश अज्ञान के अन्धकार पर विजय प्राप्त करेगा। बोलो तुम्हारी क्या इच्छा है?

एक वणिक—भगवान हम अभागों को पापों का प्रायश्चित करने का अवसर प्रदान करें। हम मगध राज्य के ५०० व्यापारी आपकी शरण मे आए हैं। हम अपने धन से भूमि खरीद कर आपको समर्पित करते है। देव! स्वीकार करें।

बुद्ध— तथास्तु। व्यापारी गणो! आप लोगों का विचार श्रेष्ठ है। इस भूमि पर एक विश्वविद्यालय-ज्ञान का केन्द्र बनाया जाय। उसका

नाम नालन्दा विश्वविद्यालय होगा जो ससार मे ज्ञान ज्योति को प्रज्वलित करेगा और भारत के नाम को सदियों सदियों तक अजर अमर रखेगा।

(वही जयजयकार और समवेत स्वर—उभरती हुई ध्वनि मे, बौद्ध धर्म की जय हो, बौद्ध संघ की जय हो, भगवान बुद्ध अमर रहे।)

धम्म शरणम् गच्छामि,<br>
सघ शरणम् गच्छामि,<br>
बुद्ध शरणम् गच्छामि (धीरे-धीरे फेड आउट)

नालन्दा—हा, तो इस प्रकार ५०० व्यापारियो के महान दान से राजगृह के तप्त कुण्डों से सात मील दूर उत्तर मे मेरा जन्म हुआ। ओह! कितने भव्य, विशाल, गगनचुम्बी छह विहार बने। मेरे विहारो की पक्तियो के ऊचे ऊचे शिखर आकाश के मेघों को छूते थे। इनके चारों ओर नीले जल से भरे सरोवर थे। सरोवरो मे लाल कमल तैरते थे। बीच बीच मे आम्र कुजो की सघन छाया थी।

(छैनी हथौड़ों द्वारा मूर्तिया बनाने की ध्वनि मय सगीत के)

नालन्दा—ये शिल्पियो द्वारा मूर्तिया बनाने की आवाजें। ओह! कितनी लगन और मेहनत से शिल्पियों ने मुझे सवारा। उस शिल्प, उस स्थापत्य कला को देख दर्शक आश्चर्य चकित होते थे। आज भी मेरे खण्डहर उनकी याद को ताजा बनाये हुए है।—(वही छैनी हथौड़ों की ध्वनि) मेरे यहा संसार के ज्ञान पिपासु आए। मुझे याद है उस ह्वेनसाग की, जो दूर चीन से, यहा ज्ञान की ज्योति लेने आया था। (सगीत, फेड इन)

ह्वेनसाग—प्रहरी! मै इस विश्वविद्यालय के आचार्य से मिलना चाहता हू। मैं चीन देश का युवक ह्वेनसाग हू। ज्ञान की प्यास मुझे यहा खीच लाई है।

प्रहरी— आओ युवक! मेरे साथ आओ, मैं तुम्हे आचार्य शीलभद्र के पास पहुचा देता हूं। (सगीत और धीरे धीरे फेड आउट)

ह्वेनसाग—ओह! इतना भव्य, इतना विशाल (गूजती हुई सगीत ध्वनि) प्रहरी! यहा कितने विद्यार्थी अध्ययन करते हैं।

प्रहरी— आगन्तुक! यहा दस हजार छात्र और पन्द्रह सौ अध्यापक हैं।

ह्वेनसाग—अच्छा । और यह क्या पुस्तकालय ?

प्रहरी—हा यह यहा का पुस्तकालय है जो एशिया का सबसे बड़ा पुस्तकालय है। इसमे भाषा, दर्शन, तर्कशास्त्र, चिकित्सा शास्त्र, धर्म, शिल्प आदि विभिन्न विषयो की असख्य पुस्तके है। लो, यह सामने आचार्य शीलभद्र का कक्ष है। वहा अब सरस्वती वदना होगी। हम सरस्वती वदना के पश्चात् आचार्य से मिलेंगे।

(शीलभद्र के कक्ष से आ रही सरस्वती वदना की सगीत, मय ध्वनि)

या कुन्देन्दु तुषार हार धवला, या शुभ्रवस्त्रावृता,
या वीणा वरदण्ड मण्डित कर या श्वेतपद्मासना,
या ब्रह्माच्युत शकर प्रभृतिभिर्देवै. सदा वन्दिता,
सा मा पातु सरस्वती भगवती नि शेष जाड्यापहा।

(हल्का संगीत और साज)

ह्वेनसाग—परम पूजनीय कुलपति जी के चरणो मे प्रणाम।

आचार्य—प्रसन्न रहो। आओ युवक, क्या नाम है तुम्हारा ? कहा से आये हो और तुम्हारा क्या प्रयोजन है ?

ह्वेनसाग—मैं चीन देश से ह्वेनसाग विद्या अध्ययन के लिए श्रीमान् के चरणो मे आया हू। क्या मुझ पर कृपा करेंगे ?

आचार्य— अवश्य, तुम्ही क्यों, यहा सभी को बिना भेदभाव के प्रतिदिन एक सौ व्याख्यान दिये जाते है।

(सगीत ध्वनि)

नालन्दा—और ह्वेनसाग ने आचार्य शीलभद्र के चरणों मे बैठकर पहले न्याय, योग, व्याकरण आदि का अध्ययन किया फिर उसने पाच वर्ष तक अनेक बौद्ध शास्त्रों का परायण किया !...भारत के अतिरिक्त चीन, कोरिया, तिब्बत, तुखार एव सुदूर मगोलिया तक के ज्ञान पिपासु यहा आए।.............—...

(सगीत)

—मुझे याद है आर्यवर्ग नाम के कोरियन विद्वान सन् ६३८ ई० मे यहा आए। ओह, यही पढ़ते पढाते 70 वर्ष की आयु मे उनकी मृत्यु हुई।...

(दु.ख प्रकट करने वाला संगीत)

—हा। यहा इत्सिग नामक चीनी यात्री भी आया। उस समय तक मेरे भवन का बहुत विस्तार हो चुका। 300 बडे कमरे और आठ मण्डप बन चुके थे............

(सगीत)

—मेरी व्यवस्था के लिए पैसो की कभी कमी नही रही। भूमि और

भवनों के दान के अतिरिक्त प्रतिदिन के खर्च के लिए सौ गांवों की आय मुझे समर्पित थी। इतिसंग के समय में यह संख्या दो सौ गावों तक पहुँच गई थी। मेरे निर्माण कार्य और अर्थव्यवस्था मे उत्तर प्रदेश बिहार, बगाल ने पर्याप्त योग दिया।

—हा। विदेशी सम्राट भी मेरे यहां आर्थिक सहायता भेजते रहते थे।······एक बार सुमात्रा के शासन थी बालदेव पुत्र ने अपना दूत भेजा। मुझे याद आ रही है वह घटना—(फ्लेश बैंक का सगीत, उसके बाद उभारती हुई पदचाप की ध्वनि)

दूत—प्रहरी मुझे मगध के सम्राट श्री देवपालदेव के पास पहुचाये।

प्रहरी—आगन्तुक तुम कौन हो ? और सम्राट से मिलने का तुम्हारा क्या प्रयोजन है ?

दूत—मैं एक विदेशी दूत हू और कुछ सदेश लाया हूँ।

(परिवर्तन सूचक सगीत)

प्रहरी—सम्राट के चरणों में प्रहरी का प्रणाम। देव ! यह विदेशी दूत आपसे मिलना चाहता है। कुछ सदेश लाया है।

सम्राट—कहो दूतवर, क्या बात है ? किसका सदेश लाये हो ?

दूत—सम्राटवर ! मेरा प्रणाम स्वीकार करें। मैं सुमात्रा के सम्राट श्री बालदेव पुत्र का दूत हूँ। मुझे आपके यहाँ भेजकर, सम्राट ने प्रार्थना की है कि···उनकी ओर से पांच गाँवो का दान नालन्दा विश्वविद्यालय को किया गया है। यह ताम्रपत्र समर्पित है।

सम्राट—दूतवर ! सम्राट बालदेव पुत्र के हम बहुत आभारी है। उन्हे हमारा शुभ सदेश दें। हमे प्रसन्नता है कि उन्होने नालन्दा की ज्ञान ज्योति को अखण्ड रखने में, अपना सहयोग दिया है।

(संगीत)

नालन्दा—इस प्रकार विदेशी शासको द्वारा मेरे लिए धन समर्पित होता रहता था। एक बार शिष्यो को सम्बोधित करते हुए मेरे बारे में आचार्य शीलभद्र ने कहा··· (सगीत)

शीलभद्र—(प्रतिध्वनि मे) प्रिय शिष्यों ! नालन्दा विश्वविद्यालय भारतीय ज्ञान साधना का पुण्य सरोवर है। इस सरोवर के शीतल जल का पान करने के लिए सभी देशो से जिज्ञासु आते ही रहते हैं।

इस विश्वविद्यालय का सम्पूर्ण व्यय राज्य वहन करता है अतः हम निश्चित होकर ज्ञान की साधना में लगे रहते हैं। यहाँ शिष्य गुरु के चरणों में बैठकर विनम्रतापूर्वक गहन अध्ययन करता है। (संगीत)

नालन्दा—आचार्य शीलभद्र ने ठीक ही कहा। मेरे यहाँ गुरु शिष्यों के सम्बन्ध बहुत मधुर एवं सम्माननीय थे। आज जब मैं गुरु-शिष्यों के बीच खाई और अनुशासन हीनता की घटनाएं सुनता हूँ तो मुझे बहुत दुःख होता है। मेरे यहाँ गुरु की महत्ता के मधुर स्वर गूजते ही रहते थे।

(गूजते हुए स्वरों में)

गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णु, गुरुर्देवो महेश्वरः
गुरुः साक्षात् परब्रह्म, तस्मै श्री गुरुवेनमः।

(धीरे-धीरे फेड आउट)

नालन्दा—मेरे यहाँ केवल पांच विषयों की ही शिक्षा दी जाती थी। ये विषय थे व्याकरण, तर्कशास्त्र, चिकित्साशास्त्र, शिल्प विद्या और दर्शन व धर्म। मेरे यहाँ शिक्षा के उद्देश्य आज की शिक्षा के उद्देश्यों से भिन्न थे। (संगीत)

—आज की शिक्षा को देख मुझे बहुत दुःख होता है। आज हमारे विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम का रूप समग्रतया जीवनोपयोगी एवं व्यावहारिक नहीं। इसी कारण आज शिक्षितों पर भी निराशा के बादल मण्डराते है। (निराशासूचक संगीत)

—मेरे यहाँ का पाठ्यक्रम व्यावहारिक था। व्याकरण या शब्द-विद्या द्वारा विद्यार्थी भाषा का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करता था। तर्कशास्त्र द्वारा वह अपनी बुद्धि की कसौटी पर प्रत्येक बात को परखता था। चिकित्सा शास्त्र द्वारा वह स्वयं स्वस्थ एवं दूसरों को स्वस्थ रखता था। शिल्प विद्या द्वारा, विद्यार्थी आर्थिक क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनता था। धर्म व दर्शन की शिक्षा द्वारा विद्यार्थी अपने जीवन को सयत व अनुशासित बनाता था। (संगीत)

—मुझे याद आ रही है वह घटना जब इत्सिंग चीनी यात्री आया

ही था और उसने धर्म की शिक्षा के बारे मे आचार्य से पूछा—
(सगीत)

इत्सिग—आचार्यवर ! क्या यहाँ बौद्ध धर्म की ही शिक्षा दी जाती है ?

आचार्य—नही, आगन्तुक ! इस विश्वविद्यालय मे धार्मिक सहिष्णुता को अपनाया गया है । ब्राह्मणो और बौद्धो के सहित्य, दर्शन, विज्ञान और कला का हमारे पाठ्यक्रम मे समावेश है । यहाँ बौद्ध धर्म के ग्रन्थो के साथ-साथ वेदागों के अध्ययन अध्यापन की सुन्दर व्यवस्था है । यहाँ का प्रत्येक छात्र अपनी रुचि के अनुसार धर्म और दर्शन का अध्ययन करता है ।

इत्सिग—आचार्य ! यह धार्मिक सहिष्णुता और धर्म निरपेक्षता का प्रतीक है । इस प्रकार की धार्मिक शिक्षा, बिना भेद-भाव के सभी को अपने अक मे समेटने वाली उत्तम व्यवस्था है । (सगीत)

नालन्दा—हाँ, तो मेरे यहाँ, अपनी रुचि से धार्मिक शिक्षा प्राप्त करने की स्वतन्त्रता थी । बौद्ध धर्म के साथ-साथ वेदो के अध्ययन अध्यापन की अच्छी व्यवस्था थी, इसी कारण मेरे यहाँ से निकले छात्रों का नैतिक स्तर ऊँचा होता था । उनमे धार्मिक सहिष्णुता घर कर जाती थी (पॉज)

नालन्दा—आज के नवयुवकों की नैतिक स्थिति को देख कर मुझे दया आती है । देश मे बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों के होते हुए भी अनुशासन एवं धार्मिक सहिष्णुता की कमी है । (सगीत)

—मुझे गर्व है मेरे से निकले, विद्वानों पर जिन्होने देश विदेशो मे जाकर ज्ञान का प्रसार किया । आज से लगभग २६०० वर्षों पूर्व मेरे आचार्य शान्तिरक्षित तिब्बत पहुँचे । उन्होने यहाँ से प्रस्थान करते समय सकल्प किया । उनके वे शब्द, आज भी मुझ मे गूज रहे है (सगीत)

शान्तिरक्षित—(गूजती हुई प्रतिध्वनि) मैं तिब्बत जाकर वहाँ बौद्ध विहारों की स्थापना करूँगा । भारतीय धर्म ग्रन्थों का तिब्बती भाषा मे अनुवाद करते हुए मैं अपना शेष जीवन वही धर्म प्रचार में व्यतीत करूँगा । (सगीत)

नालन्दा—और हाँ आचार्य शान्तिरक्षित ने ऐसा ही किया । इसी प्रकार मेरे अनेक ग्रन्थो की प्रतिलिपियाँ चीनी यात्रियो के द्वारा चीन

पहुंची और वहाँ की भाषा में अनूदित हुई। कला के क्षेत्र में भी मैं अग्रणी रहा'''(छैनी हथौड़ों से मूर्तियों पर काम करने का उभरता हुआ स्वर) मेरे यहाँ के कलाकार आकर्षक कास्य मूर्तिया बनाते थे। मेरी इस कला का प्रभाव नेपाल, तिब्बत, हिन्देशिया, एवं मध्य एशिया के कलाकारों पर पड़ा। मेरी कला उन कलाकारों की छैनी में समा गई।

(वही उभरता हुआ और फिर हलका होता हुआ स्वर)

नालन्दा—मेरा अपना गौरव है। मेरी गौरव गाथा को अब भी गाया जाता है और उसमें दिशा लेने का सकल्प किया जाता है। मगध अनुसंधानशाला का शिलान्यास करते हुए हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय डा राजेन्द्रप्रसाद ने भी अपने विचार प्रकट किये

(सगीत)

डा राजेन्द्रप्रसाद—नालन्दा की सर्वांगीण उन्नति वस्तुतः उस समन्वित साधना का परिणाम थी जो शिल्प विद्या, शब्द विद्या, तथा धर्म और दर्शन को एक साथ पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने में सभव हुई। हमारी भी अभिलाषा होनी चाहिए कि हम भूतकाल की व्यवस्था से शिक्षा ग्रहण कर, कला, साहित्य, धर्म, दर्शन और ज्ञान का एक बड़ा केन्द्र नालन्दा में पुनः स्थापित करें।

(संगीत)

नालन्दा—तो हाँ, इसी सकल्प से मेरे यहाँ अब नई-नई अनुसंधानशालाए बनाई जा रही है। उनमें काम करते हुए जिज्ञासुओं को देख मुझे अपार आनन्द हो रहा है किन्तु उनका वर्तमान पाठ्यक्रम मुझे और मेरे शिष्यों को वही प्राचीन गौरव एवं रूप दे सकेगा, इसमें मुझे सन्देह है। बीते दिन पुनः आना कठिन है। मुझे आशा के बादल नही दिखाई देते। मुझे जान पड़ता है, मुझे मेरे इन खण्डहरों में ही भटकना होगा। ये मेरे गौरव की याद सदियों-सदियों दिलाते रहेंगे।

(एकान्त और सन्नाटा बताने वाली ध्वनि, तेज हवा, साय-साय, पत्तों की खड़खड़ाहट, बिजली की कड़क एव *आँधी तूफान*— और फिर हल्के सगीत से समाप्ति)

□

# वन्देमातरम्

❑ चुन्नीलाल भट्ट

मैं अपनी धुन मे यो ही चला जा रहा था। एकाएक ध्यान सामने के आलीशान बगले की ओर गया।

अहाता लोगों से खचाखच भरा हुआ था। चमचमाती सरकारी कारो की कतारे लगी हुई थी। भीड़भाड़ से भरी सड़क पर पुलिस वाले हाथो मे डडे लिए इधर-उधर दौड़ रहे थे। कुछेक अनावश्यक ही लाठियाँ जमीन पर ठोक रहे थे। मानो उन्हे देखकर जल्द ही कोई हवलदार बना देने वाला हो।

मेरे कदम भी उसी बहाव में चल पडे—यही सोचकर कि शायद यही कही कहानी का कोई 'प्लाट' मिल जाये।

दरवाजे पर पहुचते कुछ सकपकाया। सम्भवतः रोजमर्रा की तरह पहरेदार रोक लेगा। क्योकि वह एक मन्त्री महोदय की कोठी थी। लेकिन आज किसी ने कुछ नही पूछा। मालूम नही ये सब इतने मेहरबान कैसे बन गये···? कही इलेक्शन विलेक्शन का तो चक्कर नही···।

सूट-बूट मे अपटूडेट अफसरो, खादी के लबादे से लदे नेताओं की भीड़ ने मत्रीजी को घेर रखा था।

इतनी भीड़भाड के बावजूद भी एकदम सन्नाटा था···शान्त वातावरण··· पिन ड्राप साइलेन्स···।

अनायास मेरा ध्यान उनके चेहरे की ओर गया। मत्रीजी एकदम गम्भीर मुद्रा मे खड़े थे। मानो किसी गहन शोक मे डूबे हुए हों। आसपास खडे उनके इष्ट-मित्रो सहयोगियो के नेत्र भी आंसुओ से लबालब भरे थे।

मै बडे सकट मे फस गया। बात क्या है, समझ नही पा रहा था। पूछू तो भी किससे? अपनी बिरादरी के लोग तो नही के बराबर ही थे। कुछ थे भी तो वे उन्ही की जी-हजूरी मे व्यस्त थे।

खैर ! मन को मार कर एक तरफ खड़ा देखता रहा । गम्भीर मुद्रा बना-कर। पास मे एक सरदार भी खड़े थे । लगते तो वे भी कोई अफसर ही, लेकिन बडे हँसमुख । अपने सूरजमुखी से खिले हुए मुँह को गम्भीर बनाने का असफल प्रयास कर रहे थे । काफी कोशिशो के बावजूद भी अपने को असफल पाकर कोट के जेब से कुछ निकाल कर जोर से सूघ लिया । देखता हूं कि एक दो क्षणो मे उनके प्रफुल्लित चक्षुओं से अश्रुधारा बह चली है । इसे देखकर तो मुझे वही फिल्मी हीरोइनों वाली बात याद आ गई जो अपने प्रेमी के वियोग में आसू बहाने के लिए नेत्रो मे ग्लिसरीन लगा लेती है ।

सामने से आते एक युवक को देखकर मन्त्रीजी के पास खड़े एक नेताजी रोब से चिल्ला उठे—"क्यो जी ! बड़ी देर लगा दी न तुमने ? कब से फोन किया था तुम्हारे अखबार को ।"

"जी···जी···जी माफ कीजिए···जैसे ही मुझे खबर मिली मैं दौड़ा आ रहा हू···" कपकपी भरे स्वर में उसने जवाब दिया । युवक इस शहर से प्रका-शित एक पत्र का सवाददाता था ।

"ठीक है···ठीक है···अब देर मत करो···देखो आज के अक मे ही यह शोक समाचार मुख-पृष्ठ पर ही बड़े बड़े अक्षरो मे प्रकाशित हो जाना चाहिये···"

"जी···वैसा ही होगा ।"

"और, हाँ देखो !···थोडी 'ममता' की जीवनी···मंत्रीजी का उससे अटूट स्नेह···आदि पर एक दो पेराग्राफ लिख देना···थोड़ा-सा अपनी ओर से नमक-मिर्च लगा देना, ठीक है ?···अरे हाँ, फोटोग्राफर साथ नही लाये ?"

"जी, नही तो ? आपने तो सिर्फ···"

"देखिए साहब !" मन्त्रीजी को सम्बोधित करते हुए एक नेताजी बौखला उठे—"इनका संपादक तो बडा घमण्डी है हजूर !···कुछ समय के लिए विज्ञा-पनों तथा कागज के कोटे पर पाबन्दी लग जाये तब ठिकाने आयेगी अकल···" सवाददाता से—"अच्छा, तुम तो जाओ···और अपने फोटोग्राफर को जल्दी भेज दो···हाँ यह समाचार मय फोटो के छपना चाहिये, समझे ?"

मुझे भी अब कुछ कुछ समझ मे आ रहा था । आखिरकार, किसी न किसी की मौत हो गई है, जिसका मन्त्रीजी से अटूट रिश्ता था । तभी तो वातावरण इतना शोकाकुल था ।

परन्तु यह ममता कौन थी ? भतीजी…? भानजी…? बेटी ? बहन या पत्नी ? इसी प्रश्न से बेचैन था ।

"नमस्कार…नमस्कार साहब !" एक सज्जन ने बीच मे आकर मन्त्रीजी को साष्टाग दण्डवत करते हुए कहा—"मै…मैं मदन, आईमीन मदनकुमार चट्टोपाध्याय…आकाशवाणी का सवाददाता…जैसे ही यह 'बैड न्यूज' सुनी दौड़ा आ रहा हूँ…" वह एक ही सास में बोलता रहा—"सर !…तो यह ममताजी की डेथ…आईमीन स्वर्गवास कब हुआ…?'

"आज बड़े सवेरे ही…बड़े बड़े डॉक्टरों ने भरसक प्रयत्न किये…लेकिन सब निरर्थक…आखिर ममता को तो चल बसना ही था…" कहते कहते आवाज भर्रा गई उनकी । मन्त्रीजी के नेत्रों से अश्रुधार वह चली । पास मे खड़े सभी सज्जन भी अपनी-अपनी जेबो से रुमाल निकाल अपने आसू पोंछने लगे ।

"डॉन्ट वरी सर !"…मै यह दु खद समाचार अभी ब्राडकास्ट करवा देता हू ।

"देखिए !…यह भी घोषणा करवा दीजिये कि इस नगर के सभी दफ्तर व शिक्षण सस्थाएँ इस महान् आत्मा के निधन पर शोक सभाएँ आयोजित कर छुट्टी कर दें ।" एक सज्जन ने बहुत गम्भीरता के साथ कहा ।

तभी पास मे खड़े पुलिस इस्पेक्टर को देख उसकी ओर मुखातिब हुए—"अरे हा…देखिये इस्पेक्टर साहब !…आप भी अपने कुछ सिपाहियों को भेज कर 'मार्केट', बन्द करवा दीजिये…और पूरे नगर मे 'एनाउन्समेंट' करवा दीजिये कि आज सायकाल चार बजे शवयात्रा मे अधिक से अधिक लोग ममताजी के अन्तिम दर्शन के साथ अन्तिम सस्कार मे सम्मिलित हों ।"

इसी बीच अपने शरीर पर कैमरे लादे कैमरामेन आ पहुँचा । मन्त्रीजी सहित उनके साथियो के अनेक कोणीय फोटो खीचे जाने लगे ।

एकाएक मेरा ध्यान कलाई में बँधी अपनी घड़ी की ओर गया । लेकिन मैं हँस पड़ा, अपनी इस आदत पर । मैं तो भूल ही गया था कि दो दिन पहले ही इसे मै गिरवी रख चुका था ।

पास खड़े एक अजनवी से जो मेरी ही तरह बड़े विस्मय से इस रहस्यमय करुण दृश्य को फटी आँखों देख रहा था मैने समय पूछा ।

"बारह बजा है…भाई साहब !" उसने कहा ।

यानी चार घटे शेष है, शवयात्रा के । अच्छा हो तब तक किसी रेस्टोरेन्ट की शरण ली जाय…यही सोचकर चल पड़ा वहां से । जेब मे पड़ी दो चवन्नियो

ने लम्बे समय से उछल-कूद मचा रखी थी···मानो जेब मे पड़े पड़े उनका दम घुट रहा हो।

रेस्टोरेन्ट मे पड़े नये-पुराने अखबारो के पृष्ठों को पलटता विचारो मे खोया अपनी किस्मत को कोसने लगता···काश ! मैं मंत्रीजी का कुछ होता···।

ठीक चार बजे शवयात्रा का जलूस ममता के अन्तिम सस्कार के लिए श्मशान-घाट की ओर बढ़ा। सैंकड़ो की सख्या में नेता, अफ़सर, नगर के गण-मान्य लोग, सरकारी गैर-सरकारी कर्मचारी व नगरवासी इस शवयात्रा मे सम्मिलित थे।

मैं भी चुपचाप इन सबके पीछे पीछे चल पड़ा।

घंटे भर मे शवयात्रा का जलूस नियत स्थान पर पहुँच गया।

शव को चन्दन-चिता पर सुला दिया था। मेरी निगाहे ममता के अंतिम दर्शन को आतुर थी, मगर करता भी क्या ? देख भी तो नही सकता था, पास जाकर। शव तो पूरी तरह पुष्पों से ढँका हुआ था और चिता को चारो ओर से मंत्रीजी के सहयोगियों ने घेर रखा था। सभी हाथों में पुष्प लिए शोक मग्न खड़े थे। मेरे पास सिसकते खड़े एक विधायक को पता नही क्या हुआ, लड़-खड़ाती आवाज मे चिल्ला उठे, वन्देमातरम् ?

एक पंडित जी जिनकी तोंद का घेरा ढाई मीटर से कम नही होगा, एकदम नग्न बदन, खड़े अपने मुखारविन्द से श्लोकों की बौछार कर रहे थे। आवाज तो मैं साफ साफ नही सुन पा रहा था लेकिन दूर खड़े यह अवश्य ही दिखाई दे रहा था कि आवाज के साथ साथ उनकी मदमस्त तोंद भी हिलोरें लेती जारही है।

ज्योंही उनकी नकल करते हुए चिता के चारो ओर खड़े मन्त्रीजी एव उनके इष्ट मित्रो ने नतमस्तक हो ममता के शव पर श्रद्धा-सुमन अर्पित किये, त्योंही चिता भी अग्नि शोलो की तरह भभक उठी।

आसमान ममता और मंत्रीजी की जय जयकार से गूंज उठा था। इस करुण दृश्य को देख कर मेरी आँखें भी अपने आँसू न रोक पायी।

पर मौत से भी बड़ा दु.ख अभी भी मेरे मन मे टीस मार रहा था। शव-यात्रा के साथ होते हुए भी सैंकडों की हृदय सम्राज्ञी 'ममता देवी' के अन्तिम दर्शन न कर सका। अपनी श्रद्धा के दो सुमन भी इस महान आत्मा को अर्पित न कर सका···।

खैर, इसी सोच मे बगल मे फँसी अपनी फाइल को मजबूती से दबाये घर की ओर चल पड़ा।

सड़क पर एक अखबार वाला जोर जोर से चिल्ला रहा था—"आज की ताजा खबर···मंत्रीजी के घर मौत—ममता की···देखिए···पढ़िए···मात्र पन्द्रह पैसा···"

मुखपृष्ठ पर बड़े बड़े अक्षरों मे लिखा था—"मन्त्रीजी के घर मौत ममता की।" नीचे फोटो छपा था, जिसमे मंत्रीजी सहित उनके कई साथी अश्रु बहा रहे थे। आगे लिखा था—"मंत्रीजी के परिवार का अभिन्न अग, उनकी प्राण प्यारी पालतू बिल्ली, जिसको सभी प्यार से ममता कहा करते थे, आज ब्राह्म-मुहूर्त मे इस दुनिया को छोडकर परलोक सिधार गयी।'

□

# घोर अन्धकार

□ गोपालप्रसाद मुद्गल

चम्बल के खादरों में, धौलपुर के पास, कासिमपुर ग्राम में पंचायत चुनाव का आदेश मिला है। कासिमपुर पहुँचने से पहले मानस में भय का घटाटोप अँधेरा है। चुनाव कराकर सही सलामत लौट आने के लिए दुआ मना रहा हूँ। आज याद आ रहा है कि चाकर है तो नाचाकर। वास्तव में "नौकरी" और "न" में वैर है। उस पर भी एलेक्शन अर्जेण्ट।

लो, कासिमपुर आ गया। गाँव को देख देखकर आठ आठ आँसू रोना आ रहा है। गाँव की गलियाँ टेढ़ी मेढ़ी, औधक नीची। मकान आदिवासी जैसी अवस्था में रहने वालों जैसे। गाँव में गरीबी कितनी साफ झलकती।

चुनाव के लिए प्राथमिक शाला में अस्थायी व्यवस्था है। उसी में ठहरना है। ठहरने के लिए अगल बगल में (8'×8' की) दो कोठरिया हैं। पार्टी में उन्नीस व्यक्ति, जाड़ा अलग। कोठरियों के ऊबड़-खाबड़ फर्श को देखकर तन-मन दोनों काँप रहे। सोच नहीं पा रहे, रात कैसे गुजरेगी ?

खैर, किसी तरह इधर उधर सहारा लेकर रात गुजारते है। बड़े सवेरे से ही पचों और सरपचों के पर्चे भरे जा रहे हैं। गाँव में चहल पहल है। कहीं खुले आम विचार विमर्श, तो कहीं कानाफूसी। किसी तरह आठ वार्डों में से पाच में निर्विरोध पचों का चुनाव हो गया है। दूसरे, तीसरे, चौथे वार्डों के पचों का तथा सरपच का चुनाव कराना शेष है। काफी सहूलियत मिल गई है। सरपच के लिए केवल दो नाम (बाबा-नाती) मैदान में हैं। बाबा 72 वर्ष का नाती 27 का। घर में ही धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र रचा है।

मतदान से एक दिन पूर्व मतपत्र तैयार कर लिये गए हैं। पटवारी और ग्राम सेवक इशारों पर नाच रहे हैं। चुनाव लड़ने वाले भी हमसे चुपचाप मिलने की नाकामयाब कोशिश कर रहे हैं। वे हमारे लिए सहूलियत की सामग्री

जुटाकर हम पर एहसान थोपना चाहते है। हम भी पत्थर के नीचे से अपनी अँगुली निकालने की फिराक मे हैं।

किसी तरह दूसरी रात भी गुजरती है। मतदान की भोर आ गई है। समय से पहले सभी तैयार है। सभी आठ बजने ही ओटोमैटिक मशीन की तरह लग गए है। मैं पीठासीन अधिकारी, पैसा ज्यादा काम कम। बस डाँग पटैलाई में हू, फिर भी मेरी पूछ ज्यादा है। मैने अपनी दुकान एक तख्त पर लगा रखी है।

मतदान केन्द्र के चारों ओर चम्बल के खादरो के व्यक्ति दुनाली बन्दूक को सम्हाले मूछों पर ताव दे रहे है। गनीमत यह है कि वोट डालते समय वे अपने हथियार मतदान केन्द्र मे भीतर नही ला रहे है। हाँ इतना अवश्य है कि किसी किसी की स्वच्छन्द प्रकृति जाग उठती है और वह केन्द्र को छोड़ते समय दोनों हाथ उठाकर जयघोष कर अपनी छाप छोड़ देता है।

उन्हीं अनजान चेहरो मे एक तिलकधारी सज्जन दिखाई देते है। मै स्वत. स्फूर्त श्रद्धा मे झुक जाता हू। प्रश्न फूट पडता है :

"सखा धरम निबहैं किहि भाँती ?"

इसका उत्तर वह तिलकधारी गोली की तरह देता है :

"जिमि दसननि महँ जीभ बिचारी।"

मैं प्रभावित होकर उन्हे अपने पास बिठा लेता हू। वे मशीन गन की तरह तुलसीदास की चौपाइयों को दागते चलते हे और मैं सोचता हू कि चम्बल के बीहड़ो मे धर्म की कैसी तूती बोल रही है। खैर, काम में मैं व्यस्त हो जाता हू और तिलकधारी जी खिसक जाते है।

मतदान समाप्त हो जाता है। परिणाम शान्ति से सुना दिया जाता है किन्तु उस तिलकधारी की छाप मेरे मानस से हटाए नही हटती। तभी एक ब्राह्मण मेरे पास आकर प्रश्न करता है—

"महाराज आपने वा तिलकधारी कूँ डडौत चौ करी ? वाए आपने अपने पास चौं बैठायो ?"

एक बार तो मै प्रश्नों को सुनकर सकपका जाता हू। समझता हूँ, कोई गलती हो गई और सिर पर कोई आफत आने वाली है किन्तु साहस बटोर कर उत्तर देता हू—

"तिलकधारी के स्वरूप को देखकर डडौत की और पास बैठाया।"

इतना सुनते ही वह ब्राह्मण आक्रोश से फूट पड़ता है :

"अजी महाराज बू तिलकधारी पक्को डकैत औ। पहले भोपाल मे तार-

घर में चपरासी जी । तारघर में तारबाबू की जनीमान्स चौदह कलम पढ़ी धर्मात्मा ई । ई तिलकधारी वा जनीमान्स ए यज्ञ दिखाबे के बहाने सी लै आयौ और यहाँ छै मौ रुपैयान मे बेच दई । मैंने ई काफी समझायौ पर एक नहीं सुनी । काऊ तरियाँ सरकार कूँ मालिम पर गई । पुलिस ने दबिस दई । छै मानुस के हथकड़ी पड़ी । मेरे ऊँ हथकड़ी पड़ी । वा जनीमान्स ने अंग्रेजी में पुलिस वारेन तें कछू कही तब मेरी हथकड़ी खुली । मैंने भोपाल जनीमान्स के मर्द कूँ तार कियौ । बू भलोमान्स आयौ दोनों एक दूसरे कूँ देख देख के रोने लगे । जनीमान्स की हिलकी बँध गई, गरो रुँधगो, वाने मान्स के पैर पकर लिए। कही कै मैं तिहारे मतलब की नाँय रही । तुम्हें दूसरो ब्याह करनो परैगो । बू याही सर्त पै संग गई । बू तारबाबू के संग अबऊ मथुरा में रह रई ए । वाने अपनो पन निभायो अपने मर्द को दूसरो ब्याह करा दियौ । वाके मोंडा मोंडी एँ और बू बिचारी नौकरानी की तरह रह रई ए । महाराज ये तिलकधारी ऐसे कनास एँ ।"

मैं उस अपरिचित ब्राह्मण सज्जन से उस तिलकधारी की कहानी सुनकर चकित रह जाता हूँ । मैं उससे दो प्रश्न और करता हूँ :

"क्या यहा से चुपचाप निकलना संभव नही ?

क्या कोई अड़ोसी पड़ोसी सहायता नही करता ?"

उस ब्राह्मण ने लम्बी सास भर कर कहा :

"एक जनीमान्स की का चलै दस-दस, बारह-बारह जनीमान्स के पाँव बाँध कै डार दे । वे कैसेऊँ निकस कै नाय जाय सकैं । अच्छे-अच्छे साहूकारन के मोंड़ाऊ नाय भाग सकैं तामें तौ वे जनीमान्स एँ, कितेक दम होय ।

दूसरी बात कौ उत्तर ई ए कै कोऊ एक दूसरे की कछू नाय कह सकै चौं कै सबन के घर मे ई ई धन्धौ होय ।"

मैं दाँतो तले अँगुली दबाता हूं, बार बार सोचता हू, बीसवी सदी मे यह घोर अन्धकार । तभी एक भूभरिया जाति की औरत रोती फिफाती मेरे सामने हाथ जोड़कर कहती है—

"महाराज मेरी कामी को थारी ए दिन मे अबई अबई कोऊ लैगौ । तुम अफसर आए हौ, निकरवा देऔ तौ बड़ी महरबानी होय ।"

मैं किंकर्तव्य विमूढ़-सा उसे देखता रह जाता हूँ और अपनी असमर्थता उसके गले नही उतार पाता ।

□

# जहाज रेगिस्तान का

□ दिलीपसिंह चौहान

ब्रह्माजी जब प्राणियो का निर्माण करने बैठे तो उन्होंने सबसे पहले छोटे-छोटे जीव-जन्तु बनाये। उसके बाद पक्षी और उसके बाद उन्होने मनुष्य बनाया। पक्षियो और मनुष्यों के दो दो पाँव दिये। अब उन्हे पशु बनाने थे। भण्डारी को बुलाया और कहा, 'सामान निकालो।' भण्डारी ने पेट निकाले। अलग अलग रख दिये। फिर पूछ लाया। ब्रह्माजी ने पेट के पीछे पीछे एक एक पूछ लगा दी। इसी तरह से गर्दन, मुंह, आँख, कान, नाक आदि भण्डारी रखता गया, ब्रह्माजी बड़े-छोटे पेट के अनुसार उन्हे लगाते गये। अब नम्बर पाँवों का आया। ब्रह्माजी ने अन्य प्राणियो की भाति दो-दो पाँव बनाये और प्राण फूक दिया।

प्राण मिलते ही सबके सब पशु खडे हो गये। लेकिन गर्दने लम्बी थी और पेट बड़े थे। इसलिए धड़ाम से मुंह के बल गिर पडे। घोड़ा हिन-हिनाया हि-हि ऽऽ। गधा भौंका तिभों-तिभों। लेकिन शरीर अधिक भारी होने से ऊँट गराड़े करने लगा हूरूंड़ू-ड़ू ड़ू-ड़ू ऽऽऽ।

ब्रह्माजी ने देखा, इनके दो पाव से काम नही चलेगा भण्डारी को बोले, "इन्हे आगे की तरफ दो-दो पाँव और दे दो।" भण्डारी ने दो दो पाँव और लगा दिये। सब पशु चारों पाँवो पर खड़े हो गये और ब्रह्माजी ने पृथ्वी पर फेंक दिये। घोड़ा भी गिरा, गधा भी गिरा और ऊँट भी गिरा। धम से धरती पर : पृथ्वी पर आते ही मनुष्य ने इन्हे देखा। पकड़ना चाहा। लेकिन शेर, चीते, हिरण, खरगोश आदि तो जगल मे भाग गए। बेचारे गधे, घोड़े, ऊँट आदि पशु पकड़ मे आ गये। फिर क्या था मनुष्य इनके मुंह बाधकर माल लादने लगे। गधा छोटा था इसलिए कम बोझा लदा। घोड़े पर उसने ज्यादा, क्योंकि वह उससे बड़ा था। मगर ऊँट तो सबसे बड़ा था, इसलिए कई बोरे लाद दिए गए।

ऊँट गराड़े करके रोने लगा—हरूड़् ड्ड्ड् ऽऽऽ । अब तो वजन के मारे उसकी रीढ़ की हड्डी बीच से टूटने लगी ।

मौका पाकर ऊँट भागा । ब्रह्माजी के पास रोता हुआ गया । उसने शिकायत की—"हे मेरे पिता ब्रह्मा ! पृथ्वी पर काले सिर वाला मनुष्य बड़ा खराब प्राणी है । वह मेरे ऊपर इतना बोझा लादता है कि मेरी रीढ़ की हड्डी टूट जायगी और मेरा पेट फूट जायगा । इसलिए मुझे एक पाँव बीच में और दे दो ।" ब्रह्माजी को यह बात ठीक लगी और भण्डारी से बोले, "इसे एक पाँव और दे दो ।" उन्होंने एक पाँव बीच में और दे दिया । अब ऊँट के पाँच पाँव हो गए थे । दो आगे, दो पीछे और एक मध्य में । ऊँट बहुत खुश हुआ और धरती पर लौटा ।

मनुष्य ने ऊँट को पुन. पकड़ लिया । उसने देखा कि 'इसके पाँच पाँव है ।' इसलिए उसने पहले से ज्यादा बोझा लादना शुरू कर दिया ।

ऊँट घबराया । अब तो पाँचवें पाँव से ज्यादा परेशान हो गया । वह नीचे बैठता तो पाँचवा पाँव बगल में नहीं निकल सकता था इसलिए पेट के नीचे पिचकता था । जब बोझा लदा हुआ होता तब तो और भी ज्यादा दबता । उसे भारी पीड़ा होने लगी । मौका पाकर एक दिन वह फिर ब्रह्माजी के पास हरूड़् ड्ड्ड् ऽऽ गराड़े करता हुआ गया और कहा, "प्रभो ! यह पाँचवीं टाग तो मेरे अत्यन्त दु.खदाई हो गई है । इससे मनुष्य ज्यादा बोझा लादने लग गया है और बैठते समय यह टाँग पेट के नीचे पिचकती है । इससे पीड़ा होती है इसलिए इसे हटा लो ।"

ब्रह्माजी को गुस्सा आया । उन्होंने यमराज को हुक्म दिया, "ऊँट को पुन' नष्ट कर दो । इसने परेशान कर दिया है । इसका शरीर बेनाप का बन गया है और इसकी आवाज भी रोने जैसी है । ले जाओ इसे काल कोठरी में और बन्द कर दो । जब मर जाय तो सब अग वापस भण्डारी के पास जमा कराकर प्राण लाकर मुझे सौप देना ।" यमराज ऊँट को लेकर चल दिया ।

ऊँट हरूड़्-ड्-ड्-ड् ऽऽऽ रो रहा था और आगे आगे यमराज और पीछे-पीछे ऊँट । दोनों काल कोठरी की ओर जा रहे थे ।

काल कोठरी आ गई । बहुत छोटी-सी कोठरी थी जिसमें ऊँट मुश्किल से समा सकता था । उसका आकार गोल था । दीवारें गोल लोहे की बनी हुई थी । उसके एक दरवाजा बना हुआ था, जिसके दो फाटक वाले किंवाड़ थे । छत भी लोहे की गोल थी, जो ऊपर नीचे सरकने वाली थी । यमराज ने ऊँट को वहा ले

जाकर खड़ा किया। ऊँट कोठरी से भी बड़ा था। वह हरूड़ ड़ूड़ूड़ू गराड़े करके रो रहा था और प्रार्थना कर रहा था कि "मुझे मत मारो।"

यमराज ने काल कोठरी की फाटकें खोली। छत को ऊपर सरकाई और ऊँट को पूंछ की ओर से उल्टा अन्दर घुसेड़ा। ऊँट का शरीर अन्दर समा गया। मगर गर्दन लम्बी थी, आज की तरह टेढी नही थी बल्कि बिल्कुल सीधी सामने तनी हुई थी, इसलिए वह कोठरी से बाहर निकली हुई थी। यमराज को फाटकें बन्द करनी थी। वह सोचता रहा।

यमराज ने जोर से दोनों फाटकों को ऊँट का मुंह अन्दर लेते हुए बन्द कर दिया। इस झटके से ऊँट की गर्दन सलवट खाकर अन्दर चली गई। दोनो फाटकों के मिलान के स्थान पर अन्दर की तरफ ऊँट के होठ आ गये। ऊपर वाला होठ कट गया और दो भाग हो गये। नीचे वाला होठ नीचे फिसल जाने से कटा नही और नीचे लटक गया। वह अन्दर जोर जोर से हरूड़ू ड़ू ड़ू ड़ू ऽऽ गराडे करने लगा, पर यम ने एक भी न सुनी।

अब यमराज ने ऊपर की गोल छत को धीरे धीरे नीचे उतारना प्रारम्भ किया। ज्यों ज्यो छत नीचे खिसकने लगी ऊँट जोर जोर से गराडे करने लगा हरूंड़ू ड़ू ड़ू ड़ूऽऽ।

अब छत ने ऊँट के ऊपरी पीठ को स्पर्श किया और वह धीरे धीरे नीचे से नीचे खिसकती रही। वह काफी भारी थी इसलिए ऊँट नीचे बैठने लगा। लेकिन अपने पाँवों को बगल मे फैलाने का स्थान नही था। इसलिए वह अपने चारो पांवो को अपने शरीर के नीचे समेटने लगा और बैठता गया। मगर उस पांचवे पांव को मोड़ना भूल गया। इसलिए वह पाँचवाँ पांव पेट के अन्दर घुसने लगा और अन्दर इकट्ठा होते होते नही समाया तो बीच मे ऊपर खम्भ निकल गया जो आज भी है।

यम ने सोचा कि अब ऊँट सिकुड़ कर बैठ गया होगा। सभी अग टूटे नही इसलिए छत को और अधिक नीचे नही उतार कर वही रोक दी। ताला लगा दिया और चला गया।

एक महीने बाद यमराज ने सोचा कि अब तो ऊँट भूख और प्यास के मारे मर चुका होगा। इसलिए उसके अगों व प्राण को लेने के लिए काल कोठरी मे गया। यमराज ने कमर से चाबी खोली। ताले मे लगाई ताला खुला। किवाड़ खोले तो ऊँट गराड़े करने लगा हरूंड़ू ड़ू ड़ू ड़ू ऽऽ। वह तो मरा नही जिन्दा था।

यमराज को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह कैसा प्राणी है जो एक माह बिना खाये और बिना पानी के भी जिन्दा है। उसकी इस विशेषता की जानकारी देने वह उसे ब्रह्मा के पास ले गया। आगे आगे यमराज और पीछे पीछे ऊँट हुरूड़, ड़ूड़ूड़ू करता जा रहा था।

ब्रह्माजी दूर से रोते हुए ऊँट को आते देखकर अचम्भे में पड़ गये। उन्होंने पास लाकर देखा—उसकी सीधी गर्दन टेढ़ी हो गई थी। ऊपर का होंठ कट चुका था। नीचे वाला होंठ लटका हुआ था। पीन्दी पोर गायब हो चुका था। केवल थोड़ा-सा नीचे का भाग शेष दीख रहा था। पीठ पर मध्य में खम्भ निकल आया और जो पांड़े के खुरों की तरह तीगे-तीगे खुर थे। वे दबकर गद्दियों-नुमे बन गये थे और वह एक माह बाद भी बिना खाये पीये जिन्दा है। उनको खुशी हुई और वे चिल्ला उठे, 'तथास्तु। बस, यह तो बड़ा उपयोगी पशु बन गया है। अब इसे ऐसा ही रहने दो और रेगिस्तानी भाग में भेज देना चाहिये। वहाँ पानी की कमी रहती है। यह कई दिनों तक बिना पानी के जिन्दा रह सकेगा। देखो इसके पाँवों में कैसी गद्दियाँ बन गई है। इनसे रेत में पाँव भी नहीं धसेगा। बेचारे की गर्दन टेढ़ी हो गई है, मगर कोई बात नहीं, सवार की लगाम से इस पर नियन्त्रण अच्छा रहेगा। अब इसे मत मारो और भेज दो रेगिस्तान में। यह तो रेगिस्तान का जहाज बन गया है।" इस प्रकार तभी से ऊँट का शरीर इस प्रकार का बन गया है जो आज भी है।

और ब्रह्माजी ने उसके सिर पर हाथ फेरा और वह बोला—हुरूंड ड़ूड़ूड़ू ऽऽऽ। ब्रह्माजी ने सीधा रेगिस्तान की ओर फेंका। धम से आ गिरा रेत में। मनुष्य ने पुनः उसे पकड़ा। उसके पाँवों की गद्दियाँ देखकर वह बहुत खुश हुआ तथा कई दिन बिना पानी के भी जिन्दा रह पाने से इसका नाम रेगिस्तान का जहाज रख दिया।

□

# अपने अन्दर

□ अब्दुल मलिक खान

डेन्मार्क की किसी अदालत मे मजिस्ट्रेट के सामने एक व्यक्ति लाया गया। उस पर कार तेज चलाने का आरोप था। जैसे ही उस व्यक्ति ने मजिस्ट्रेट का चेहरा देखा उसकी आँखें झुक गई। न्यायाधीशं की कुर्सी पर बैठा हुआ नवयुवक किसी समय उसका शिष्य रह चुका था। शिष्य ने भी अपराधी के कटघरे मे खडे अपने पुराने स्कूल मास्टर को पहचान लिया था। सुनवाई करने के वाद मजिस्ट्रेट ने उचित दड का आदेश दिया। यह विदेश की घटना है। अपने घर की चर्चा करे।

सिनेमा शो चालू होने वाला है। टिकट खिडकी पर भीड़ लगी हुई है। एक किशोर छात्र चोर नजरो से इधर-उधर ताकता खिड़की की तरफ कदम बढाता है कि अचानक उसके पैर ठिठक जाते है। यह क्या ? सामने मास्टरजी तेजी से इधर ही आ रहे है। स्कूल समय मे गोत मारकर पिक्चर देखने आया था। शायद पोल खुल गई, अब खैर नही। छात्र के मन में अपने अनुचित कार्य के लिये ग्लानि पैदा होने लगती है। इसी समय मास्टर जी की आवाज़ उसे झकझोर देती है, "एक टिकट मेरे लिये भी वच्चे ! खिड़की पर वड़ी भीड़ है।" वाद मे उन्होंने यह भी वता दिया कि वे हेडमास्टर साहव से बीमारी के वहाने छुट्टी लेकर आये हैं।

जव मूर्तिकार ही देवता के स्थान पर राक्षस की मूर्ति वनाने लग जाएँ तो इसमे धातु का क्या दोष ? उसे तो ठोक-पीटकर जैसा आकार दिया जाता है वैसा रूप वह ग्रहण कर लेती है। अपने हाथो से निर्मित विकृत आकृति मे सम्मान पाने की आशा रखना किसी मृगतृष्णा से कम नही।

उन दिनो वच्चों की खेलकूद प्रतियोगिता भवानी मडी से वारह किलोमीटर दूर मिश्रोली ग्राम मे चल रही थी। वहुत सी प्राथमिक शालाओं के छात्र उसमे

भाग लेने आए थे। मिश्रोली के प्रतिष्ठित नागरिक के जिस कमरे मे हम ठहरे थे उसमें एक और टीम अपने अध्यापक जी के साथ ठहरी हुई थी। सितम्बर का महीना। कड़ाके की सर्दी। अपनी टीम के बच्चो को जल्दी ही रजाई मे दुबका दिया और मैं भी रजाई ओढ़ कर लेट गया। लेकिन उस एक मास्टर जी को नीद नही आ रही थी। उन्होंने दो तीन होशियार बच्चो को साथ लिया और यह कहते हुए चल दिये, "गुरुजी! हम बाजार तक जा रहे है कृपया बाकी बच्चों का ध्यान रखना"। व्यावहारिकता के नाते मैंने हाँ कर दी। लगभग आधे घंटे बाद वे पान खाकर वापस आ गए। बिस्तर पर बैठकर एक छात्र से कहा—"ला निकाल"। छात्र ने अपनी जेब से सिगरेट का पैकिट और माचिस निकालकर मास्टर जी के सामने रख दी। उन्होंने सिगरेट सुलगाई फिर खुला पैकिट उस छात्र की तरफ बढा दिया। छात्र ने झिझक प्रकट की तो बोले —"पी ले भाई, अभी कौन सा स्कूल लग रहा है" ? फिर मेरी ओर मुखातिब होकर कहने लगे—"अरे इनसे क्या शरमाना ? ये भी तो अपने ही है"। उत्साह वर्धन करने पर छात्र ने सिगरेट सुलगा ली और कश खीचने लगा। मैंने एतराज किया तो बोले—"मोडर्न जमाने में सब चलता है जी। छानो गुरुजी ? जिंदगी मे क्या रखा है ? अपना तो बस यही सिद्धान्त है 'ईट ड्रिंक एन्ड बी मेरी'।" उनकी बात सुनकर मेरी जबान पर ताले पड़ गए।

कोरी धरती में बबूल का बीज बोकर अगूर की अपेक्षा करने में कितना यथार्थ है। जब उसी बबूल का काँटा चुभता है तो हाहाकार मच जाता है। पुलिस बुलानी पडती है, आयोग बिठाने पडते है।

कक्षा में अक्सर ऊँघना, मेज पर पैर फैलाकर बैठना, आपस मे बतियाते हुए घर की रामकहानी बच्चों को सुनाना, रात देखे गए सिनेमा की खुली समीक्षा, फिल्म पत्रिकाओं की टीका, कक्षा मे छल्लेदार धुआँ, गप्पास्टिक और सुलफास्टिक, बच्चों से तम्बाकू के तिनके साफ करवाना, सुपारी तुड़वाना, उनके सामने जर्दा, चूना और सुपारी मसलकर खाना तथा कक्षा के आस-पास कई किश्तो मे आधुनिक चित्रकारी करना, कौनसी ऐसी बात है जिसके लिये हम ताल ठोक कर कह सकें कि ऐसा नही होता, यह मिथ्या है।

हम सोचते है बालक अनभिज्ञ है लेकिन बालक नजर चुराकर पल प्रतिपल हमारी गतिविधियों को मानस मे उतारता चला जाता है। हमारा हर डायलॉग वह टेप कर लेता है और वही टेप शब्द-प्रतिशब्द अपने साथियों, अपने घरवालों को सुनाता है। इसी टेप के आधार पर बच्चों मे, अभिभावको में और समाज

में हमारा मूल्यांकन होता है और हमे श्रेणी विशेष मे रख दिया जाता है। हम बच्चों और बड़ों के सामने कितना ही दोहरा अभिनय करें हमारी असलियत छिप नही सकती।

बालक जब सुनता है कि मास्टर जी परीक्षा देने जाते हैं तो वे भी नकल मारकर पास होते है। वह खुलकर नकल करना अपना अधिकार मानने लगता है। परीक्षा भवन में नकल करने से रोकना उसे अन्याय लगने लगता है। हम नजर घुमाकर देखेंगे तो यहाँ भी दोष का अग्निवाण हमारी ही तरफ आता दिखाई देगा। इन सब बातो से हमारा सम्मान गिरता चला जाता है। प्रसिद्ध विद्वान रूसो ने कहा भी है, "आत्मा जितनी भ्रष्ट होती है मस्तिक उतना ही सकुचित होता जाता है"। हमें अपना मस्तिक सकुचित नही करना हैं बल्कि उसकी बन्द खिडकियाँ खोलनी हैं। मस्तिष्क मे यदि सकुचन की प्रवृत्ति जन्म ले लेगी तो शिक्षा की सार्थकता पर स्वतः ही प्रश्नचिह्न लटक जाएगा।

बालक रूपी दर्पण के सामने जब भी दुर्गुणो की अग्नि-लपट आ जाती है तो वह भभकती आग उसके अन्दर भी साकार हो उठती है, वह भी जल उठता है, विकृत हो जाता है।

छात्र शिक्षक से रूपान्तरकारी शालीन व्यवहार की अपेक्षा रखते है। शिक्षक दिव्य कलाकार की अनुपम कलाकृति पर पड़े अनेकों आवरण हटाकर उसमें अन्तर्निहित सौन्दर्य को उजागर करता है। शिक्षक वह पवन है जो चमचमाते सूर्य पर आच्छादित श्यामल मेघो को हटाकर लोक कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है।

इस पावन वेला में हम छिद्रान्वेषण के इरादे से नही अपितु आत्म विश्लेपण और आत्म निरीक्षण की भावना से अपने अन्दर झांके, अपने आप को आँकें।

आदर्श बीज टूटती आस्थाओं के रेगिस्तान मे गहरी जड़ों वाले शाखा-प्रशाखाओं से सज्जित ऐसे बोधिवृक्ष को खडा कर देगा जिसकी छाया मे बैठकर अनेकों सिद्धार्थ बुद्ध बन जाएँगे, जो ससार को पीड़ा की जलती नदी से निकाल कर सुख के हरियाले मैदान मे छोड कर ही दम लेंगे।

फिर हमारी बनाई हुई मालाएँ अपने ही हाथो से हमे अपने गले मे नही पहननी पडेगी। समाज हमें सम्मान देकर फूला नही समाएगा। मशहूर शायर "उबैद" के शब्दों में,

इस वक्त तो कोई भी हमें पूछता नही;
कल ढूढता फिरेगा जमाना गली गली।

□

# नाना रूप धरें

निशान्त

याद आ रहा है कि पहले दिन उन्हें मैंने लुहार-लुहारी के भेष में देखा था। उनकी भेष-भूषा और भाषा से उन्हें बहुरूपिया समझना बड़ा कठिन था। पहली बार तो यही दिमाग मे आया कि ये वास्तव मे ही लुहार-लुहारी है: लेकिन वे काफी देर तक प्रदर्शन करते रहे तो वास्तविकता समझ मे आई।

दूसरे दिन इन्हे पठान-पठनी के भेष में देखा। उस दिन भी उनकी कला कमाल की थी। भिखारी के रूप मे जब एक दिन वह मेरे एक मित्र की दुकान पर गया तो मित्र ने सचमुच ही उसे भिखारी समझा और पैसा देने लगा। लेकिन वह तो भिखारी था नही, था बहुरूपिया इस लिए पैसा लेने से इंकार कर दिया और आगे बढ़ गया। मित्र एक बार तो ठगा सा रह गया। अगली दूकान पर उसे फिर उसी प्रकार करते देखकर मित्र के वास्तविकता समझ मे आई।

कला तो उनकी बहुत बड़ी है लेकिन आज कलाकारो की कदर कहा होती है ? लेकिन हाल चाल पूछने जब मै उनके तम्बू पर गया तो वह मेरे ही हाल चाल पूछ बैठा—आपको हमारे पर लिखने से क्या मिलेगा ?

मैंने कहा—अगर लेख छप गया तो यही कोई सौ-पचास मिल जाएँगे।

उसने कहा—बस इतने से के लिए काहे को इतनी तोहमत उठा रहे हो और काहे को हमे टटोल रहे हो ?

बात उसकी सच्ची थी। फिर भी जब मै चला ही गया तो कुछ बाते कर ही आया।

वह मुझे अपने पेशे से सन्तुष्ट नजर नही आया—इतनी महगाई के युग मे साहब क्या होता है ? पहले जितनी कदर भी अब नहीं रही।

सचमुच ही उसकी कोई अच्छी हालत नही थी। उसकी फटी पुरानी

कमीज में कई पैबंद लगे थे। पौष्टिक आहार न मिलने से उसके बच्चे मरियल थे। उनकी प्रत्येक चीज मे बदहाली स्पष्ट नजर आ रही थी।

लौटते हुए रास्ते मे जब मै उनकी बदहाली का कारण ढूढने लगा तो मुझे उनकी बदहाली का सबसे बडा कारण रुपये का अवमूल्यन नजर आया। जब मै छोटा था तो हमारे गाव मे भी बदरी भांड नामक एक बहुरूपिया आया करता था। हम बच्चे उसके स्वाग देखकर बड़े खुश होते थे। वह तो लगूर बनकर रात को सोते हुए लोगो को डरा दिया करता था। गनीमत यह होती थी कि वह शीघ्र ही खड़ा होकर बोल जाता था।

आखिरी दिन जब वह आता था तो पिता जी उसे एक रुपया इनाम स्वरूप देते थे। गाव मे काफी लोगो के द्वारा एक एक रुपया देने पर उसका गुजारा अच्छा हो जाता था। लोग अपनी पुरानी आदत के मुताबिक आज भी वही एक रुपया देते है। लेकिन आज के रुपये में और उस समय के रुपये मे कितना अतर आ गया है ? यह कोई नही देखता।

एक कला इस ससार से विलुप्त न हो और कुछ गरीब परिवारो का इस कला के द्वारा किसी तरह गुजर होता रहे इसके लिए हमें कुछ सोचना और करना चाहिए। बहुरूपिया चूकि लोगों के मध्य जाता है और उन्ही से अपनी आजीविका कमाता है। इम लिए इस कला को हम लोक कला भी कह सकते है। इस प्रकार यह कला केवल लोगों के द्वारा ही जीवित रखी जा सकती है। अगर हमारी सरकार और कला अकादमिया भी उनके लिए कुछ कर सकें तो और भी अच्छा है।

हो सकता है, कुछ आधुनिक दिमाग वाले लोग बहुरुपिये को देखकर नाक-भौ सिकोडे लेकिन उन्हे यह नही भूलना चाहिए कि यह कला आज भी बच्चो, कम पढे लिखे कस्बाई लोगो और अनपढ ग्रामीणो के लिए बहुत बडी है।

उनका इससे मनोरजन होता है। उनके नीरस जीवन मे यह कला रस घोलती हैं।

☐

## सृजन के क्षण

□ रमेश ग

15.12.78

पूरा एक सप्ताह बीत गया है। इन दिनों विस्तृत आकाश के नीचे विचरण करते हुये "स्पेस के प्रति मानवीय उत्सुकता" "रोशनी कहाँ से आती है" "मिस एम" "मानवीय आकांक्षा" इत्यादि ५×४ फुट के विशाल चित्रों के सृजन में लगा हुआ हूँ।

'स्प्रे मशीन' की सहायता लेने का मेरे चित्रों में पहला अवसर है। मशीन की सहायता ली जा सकता है पर हावी होने की हद तक नहीं।

यह बात बार-बार अन्तर में उठ रही है कि मशीनी सहायता से मैंने अपने निजी क्षेत्र को बहुत पीछे छोड़ दिया है।

लगभग एक दिन में १० घण्टे काम हुआ है। सृजन के समय का यह सुख बहुत मीठा है, जिसे शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता।

चारों तरफ जिस्म के जर्रे-जर्रे में एक प्रसन्नता, उमंग, आनन्द, उल्लास बराबर बना रहा है, फिर भी कृति के पूरे होने तक कई बार अपूर्णता का अहसास एक 'दर्द' के रूप में भी साथ रहा है।

22 12.78

सृजन के आनन्द के बीच-बीच में भौतिकवादी उपलब्धियाँ भी जुड़ने लगीं कि इस पेंटिंग की सफलता अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र से जुड़कर खूब आगे निकल रही है और इस प्रकार की आशाओं ने एक सप्ताह बड़े उमंग से काम करवाया।

इस बार काम मैंने किया नहीं, किन्हीं आशाओं के वशीभूत स्वयं ही हो गया है। इन आशाओं से मेरे सगे सम्बन्धी मित्रगण बड़े खुश हो सकते हैं पर मुझे इनसे कुछ शिकायत है।

रात चौथी कृति "मानवीय आकांक्षा" को भौतिकवादी आशाओं से जुड़ते देख मन मसोस कर रह गया था। भौतिकवादी उपलब्धियाँ यों तो मुझे मिली नहीं है, और जब कभी इनके लिये भटका हूँ प्रकृति ने ही साथ दिया है। जब इस प्रकार की उपलब्धियाँ मुझे निकट लगने लगीं उन्हें छोडकर मैंने अध्यात्म से जुड़ना ज्यादा उचित समझा है। आध्यात्मिक सुख, भौतिक सुख से ज्यादा गहरा है।

27.12.78

प्रगतिवादी दौड़ में शहरी और मशीनी यंत्र के जुड़ने का स्वरूप ऐसा है···

एक ग्रामीण बैलगाड़ी में बैठा हुआ रेलगाडी में बैठे हुए लोगों से अपनी पूरी क्षमता के साथ प्रतिस्पर्द्धा करता है पर उनसे पीछे रहकर अपने आप पर विश्वास होते हुए भी हतप्रभ रह जाता है।

मेरा भी यही हाल है। मैं इस समय दुविधा का शिकार हूँ। मशीन का उपयोग कर अपने ही साथियों को जो बैलगाड़ी में बैठे हुए हैं छलना और दूसरी तरफ "हवाई जहाज" में बैठे लोगों से खुद का ठगाव कचोट रहा है।

कला सर्जन में मशीनों का उपयोग मैने खुद किया नहीं, मशीन वालों ने ऐसा करने को विवश किया, पर हाथ से काम करने का जो आनन्द 'मशीन' ने छीन लिया, मेरा खुद का आनन्द 'मशीन' के भेंट चढ़ गया है। फिर भी तेज मशीनों की आकांक्षाएँ लगी हुई है।

चित्रकला मेरे लिये कभी अधिक से अधिक निर्लिप्तता प्राप्त करने का साधन रही है, पर जीवन का एक ही 'सत्य' मैं स्वीकार नहीं करता भौतिक संसार को नकार कर अलौकिक संसार में जाने का जितना सुख है उतना ही अलौकिक से लौकिक की ओर लौटने का होना चाहिए।

31.11.79

लगभग एक सप्ताह यों ही गया। अब मैं कोई नई राग अलापने के चक्कर में हूँ। बहुत कठिन व्यसन कहना चाहिये इसे। यदि किसी शास्त्रीय संगीत के गायक को यह रोग लग जाय कि वह अब कोई नया राग गायेगा तो और बना ! मै ऐसा ही 'राग' गाने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

मालकोश, विलावल, पटमजरी, ठुमरी के मिश्रित स्वर कभी-कभी यह भ्रम पैदा करने लगते है कि यह अब तक ज्ञात रागों मे से कोई नही है और जिसकी मुझे चाह थी वह मिल गया है।

अब तक ज्ञात रागो मे विदेशी शिम्फनी (प्रयोगवाद) का भी ऐसा झमेला है कि मैं वह भी गा लेता हूँ जो अभी 'भारत' मे नया है ।

प्रयोगवादी विकसित शैलियो मे आधुनिक चित्रकला की पॉप, ऑप, बक दादावाद, इम्प्रेसनिस्ट, एक्सप्रेशनिस्ट, स्युअरियलिज्म, आदि से ऊपर व्यक्ति-वादी शैली मे अछूता नही हूँ ।

उनमे मानवीय सवेग आधुनिकता को छूकर यह तक पहचान खो बैठते हैं कि आखिर सृजन का ससार कितना विकसित और विस्तृत है कि सीमित शब्दो मे यह नही कहा जा सकता कि आज का सृजन-ससार क्या कहना चाहता है ?

इसी खोज मे अनेक स्वर गुनगुनाता हूँ जिन्हे अब स्वर नही कहा जाना चाहिये । मैने अब तक जिन सवेगों से जुडकर सृजन किया उन सवेगों से रहित स्वर रहित, भाव रहित, रस और उद्वेग रहित, विचार बोध से दूर एक ऐसे चित्र की तलाश है जिसका, शीर्षक 'भाव शून्य' हो सके ।

14 12.79

विस्तृत आकाश के नीचे समस्त लिप्तता से छूटता मन कुछ भी नही गाना चाहता, और इन्ही दिनो······नही इस बात को पूरी कर खत्म नही करना चाहता । एक पूरी बात बेबात लगने लगती है । सृजन का स्वरूप, कथ्य मे नही उभरना चाहिये, सृजन की खोज मे फैले हाथ परसो तो ऐसा अनुभव करने लगे थे कि किनारा बहुत नजदीक है ।

उत्ताल तरगों से जूझता हुआ, आगे बढता हुआ, किनारा पाकर प्रसन्नता होनी स्वाभाविक थी । पूरी रात सोचता रहा, कितनी सुन्दर धरती होगी वह मेरे नये 'किनारे' की, पर—कहा न, रात मनुष्य को थकाकर, 'किनारे' के समीप पहुँचने को विवश करती है, सुबह का सूर्य, किनारा तो दूर, समुद्र की लहर तक की पहचान नही होने देता—।'

और मैं स्वय विवश होकर जिसे किनारा कह रहा था उसे छोड़ विपरीत लौट आया हूँ ।

26 12.79

नही बिलकुल नही, पूरे सप्ताह नये राग की इन्तजार मे कोहनी टेक कर बैठे बिता दी है ।

महीन से महीन, और मोटे से मोटे, सरल से सरल, सुमधुर भी, समतल

भी और वक्र रेखा वाले जितने भी राग मानस पर उतरे, मेरे परिश्रमी पूर्वजों द्वारा सृजित हैं और उन्हें जोड़ तोड़ कर गाना और अपना कहना, ईमानदारी नही।

"···तो ठीक है मैं बिना गाये ही रहूँगा।"

2.1.80

सप्ताह भर बैठे रहना कि क्या गाया जाय और कुछ तय नही कर पाना एक गायक के लिए कितना कष्टप्रद है। गायक सब कुछ के बिना रह सकता है पर गाये बिना नही। कि मैं पूरे सप्ताह बैठा रहा हूँ और मुझे मौलिक सृजन के लिये कुछ नही मिल पा रहा।

3 1.80

नये सत्य के साथ द्वन्द्वात्मक विरोधाभास से ग्रस्त हूँ। स्प्रे मशीन की सहायता से सृजनरत हुआ था न? मशीन की औद्योगिक प्रगति बहुत तेज हो सकती है पर मानवीय स्पन्दद और भावनाओं को व्यक्त करने मे वह सफल नही हो सकती।

मशीन बहुत कुछ उपलब्धि दे सकती है पर चेतन मस्तिष्क के तत्वो की खोज तक नही पहुँच सकती।

17.10.80

मैं अब अपनी नई कृति को जन्म देने की तैयारी मे हूँ। मुझे यह तो मालूम नही कि प्रसव का कष्ट कैसा होता है पर जो कुछ मैं सह रहा हूँ, बड़ा कष्टदायक है।

अब किसी भी प्राणी की उपस्थिति मुझे पसन्द नही है, यहाँ तक कि किसी का बोला एक शब्द भी। लेकिन कुछ लोगो की आवश्यकता मुझे पड़ सकती है, कि वे मेरी आवश्यकतानुसार साधन जुटायेंगे।

मैंने पूरे वस्त्र भी नही पहन रखे है। पहना हुआ बनियान मैं खोल भी सकता हूँ। या पहनने को कमीज भी माग सकता हूं। दोनो ही में मेरे सहायक दौड़ने को तैयार है।

लगभग ४ बजे शाम तक बिना किसी को जन्म दिए, बड़ी कष्टप्रद स्थिति मे रहकर अब मैं आराम चाहता हूँ पर यह समय आराम का नही है। फिर सृजन से जुडता हूँ और लगभग ५ बजे मुझे ऐसा आभास होने लगता है कि अब किसी कृति का जन्म हो गया है।

मैंने जिसे जन्म दिया उसे मै देख भी नही सकता,-इस आशका से कि जन्म देना आसान होता है उसे ठीक तरह से सवारना बहुत मुश्किल! □

# मंचीय कविता और शाश्वत मूल्य की समस्या

□ श्रीनन्दन चतुर्वेदी

कवि सम्मेलन मे खरी उतरने वाली हर कविता क्या शाश्वत मूल्य की हो सकती है ? इस प्रश्न को लेकर विवाद जब-तब चलता रहा है। बहुत वर्ष हुए, राष्ट्र कवि बाबू मैथिलीशरण गुप्त ने तो इतना तक कह दिया था कि हिन्दी कविता की चिरतनता यदि बचानी है तो कवि सम्मेलनो की परपरा को समाप्त करना होगा। समर्थक थोडे थे, विरोधी अधिक। किन्तु सम्मेलनों की परपरा बदस्तूर रही। आज तो यह परपरा एक फैशन बन गई है और व्यवसाय भी विद्यालय का वार्षिकोत्सव, मेला, पर्व, विवाह, यज्ञोपवित, गृह प्रवेश या अन्य कोई समारोह हो, कवि सम्मेलन आयोजित किये जाते है। परिवार कल्याण का प्रचार सामुदायिक विकास, कृषि उन्नयन, छात्रावास के समारोह सभी मे कवि सम्मेलन का बजट सुरक्षित रहता है। कवि गया। जो कवि के स्वाभिमान की चर्चा कर कवि सम्मेलनो की भर्त्सना करते दिखते है, वे भी ऐसे मचों पर कविता पढते दिख जाते हैं। यही नही, उन्हे ऐसे सम्मेलन मे कविता पढने का अवसर मिले, इसके लिए पहले मे जोड़-तोड भी करते दिखते है। कवि सम्मेलन आज कविता का मच कम, व्यवसाय अधिक बन गया है। जिनकी साख मचीय कवि के रूप में जरा ठीक से जम गई है, वे सदभ मुद्रा-अर्जन मे लगे है। जिनकी दूकानें जम नही पाई वे जमाने की फ़िक्र मे पागल है। कभी कभी तो अजब सा लगता है, आखिर यह हो क्या रहा है? यजमान को अपनी वाहवाही चाहिए और पंडे को उसकी दक्षिणा। यजमान न हो तो पडा नही पलेगा और पडा न हो तो कारज नही सरेगा। यही नही, कुछ और भी स्वार्थ जुड़ जाते है। आयोजको मे कुछ प्रभावशाली स्थानीय कवि अवश्य होते हैं। वे केवल उन्हें ही बुलाने में रुचि लेते है जो बदले मे इन्हें अपने यहाँ भी

बुलवाकर किसी महाविद्यालय या नगर पालिका के फंड से अच्छी राशि दिलवा सकने की क्षमता रखते हो। यहा आयोजक कविता नही, अपना भविष्य देखता है। सम्मेलन मे आपसी संबध कविता के नही, व्यापार के बन जाते है। कवि वहा क्यों कविता के विषय में सोचने लगा ? वह कैसी भी सामग्री प्रस्तुत करे, पैसे तो उसके पहले से तय है ही ! फिर असल कविता मच से आएगी कैसे ?

लेकिन कई प्रश्न फिर भी उभरते है। क्या ये सम्मेलन एक दम निरर्थक है ? क्या सचमुच एक स्वाभिमानी कवि का अहं इन सम्मेलनों से कुचल जाने वाला है ? क्या हिन्दी कविता को कवि सम्मेलनों ने कोई योग नही दिया है ? राष्ट्रीय समस्या और जन जाग्रति मे क्या ये सम्मेलन बिलकुल सार्थक नही थे ? हिन्दी कविता आज जहा तक पहुंच गई है वहा तक क्या वह बद कमरे या पुस्तकों की जिल्दों व कवियों की डायरियों से भी पहुच सकती थी ? आगे क्या कवि सम्मेलन एक दम रोक दिये जाने चाहिए ? और यदि ऐसा हो तो क्या वह हिन्दी के हित में होगा ?

समस्या का हल दुराग्रह से मुक्त रह कर करना होगा। सच्चाई का अंश दोनों ओर दिखता है। राष्ट्र कवि की बात मे जितनी वेदना, टोस और मर्मान्तिक तड़प रही उतनी अधिक क्या वास्तविकता की पकड भी थी ? बहुत लोग कहते है, अग्रेजी मे कवि सम्मेलन परम्परा नही है फिर हिन्दी मे ही यह क्यों बनी रहे ? कोई कुछ भी कहे, तथ्य नकारा नही जा सकता कि हिन्दी की कविता जितनी जनता के निकट रही, उसका कारण केवल मात्र जन सपर्क था। सदेह नही कि पुस्तके काल की शाश्वत धरोहर होती है, किन्तु जिस समाज मे शिक्षित व्यक्ति अनुपात मे बहुत कम हो वहा पुस्तको को राष्ट्रीय संस्कार बनाने मे हजार हजार बरस लग जाया करते हैं। वाणी का सीधा सप्रेषण वहा लिखित विचारो की अपेक्षा बहुत शीघ्र असर कर जाता है। भारत राष्ट्र की राजनीतिक स्वतन्त्रता को लाने वालों पर मचो मे गला फाड कर जमने वाले श्री रामधारी सिंह दिनकर, बालकृष्ण शर्मा नवीन, शिवमगल सिंह सुमन, माखन लाल चतुर्वेदी, डा० ब्रह्मदत्त सुधीन्द्र, कविवर हरनाथ, नरेन्द्र शर्मा, निराला, सोहन लाल द्विवेदी जैसे कितने ही कवियो का योग उनके द्वारा रचित पुस्तको मे कम न था। वे पुस्तकों से अपने जीवन काल मे उस जन जागृति को नही ला सकते थे, जिसको वे मंचों से ला पाये। दूसरी बात है कि मचीय वाणी का देशकाल सीमित होता है और पुस्तक रूप मे

सकलित सामग्री का असीम। सदेह नही कि मच जन रुचि का आश्रित है और भाव सप्रेषण का सरलतर साधन है।

भोली, अपढ़ निरक्षर जनता तक कवि के अनुभूत सत्य को पहुचाने का इससे सुगम और साधन क्या हो सकता है? मंच का दुरुपयोग निश्चित रूप से निन्दनीय है किन्तु सम्मेलन के माध्यम से भोली जनता किसी काव्य कृति का बोध पाती है, तो इसमे निन्दा को अवकाश कहा है? यदि सरकारी या गैर सरकारी मच से परिवार कल्याण, कृषि या योजना सबंधी कविता पढ़कर कवि समाज के लिए कुछ उपयोगी बन सकता है और साथ मे अपना अर्थार्जन भी कर सकता है तो इसमें दूसरा कोई क्यों चिल्लाये? आज भी हिन्दी जगत के अनेक कवि ऐसे है जिनकी जीविका के साधन ये सम्मेलन ही है। यह कहना भी एकदम गलत है कि उनकी सभी कवितायें निरर्थक है। जनरुचि का रजन करती हुई भी कई कविताएँ अपने स्तर से नीचे नही गिरती। फिर इसमे दो मत नही कि कवि यदि जनता के मंच पर जाता है तो उसके लिए आवश्यक होता है कि जनता की रुचि के अनुकूल बात कहे लेकिन जन रुचि का स्तर तो जो है उसे सभी जानते है। इसलिए कवि सम्मेलन की परम्परा बढती है तो कवि का स्तर आसमान को छोड़कर धरती पर उतरेगा ही।

प्रश्न फिर भी सिर उठाकर खडा होता है कि क्या कवि केवल सस्ती जन रुचि का पोषक बन जाएगा? जिन कवियों मे कविता छपवाने या पुस्तकाकार निकलवाने की क्षमता नही है, वे क्या मंचों पर ही न टूट पड़ेंगे? तब क्या कविता 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की ऊँचाई से उतरकर कैबरे-नर्तकी नहीं बन जायेगी? वह किसी नीली फिलम की नायिका सी निर्वसना होकर जनता के मच पर अपनी शूटिंग नही देने लगेगी? और नहीं तो तथाकथित, अधुनातन प्रगतिशील सभ्यता की जन रुचि में उसके लिए स्थान कहा होगा?

आज कवि सम्मेलन मच और श्रोताओ का जो सबध जुड़ता जा रहा है उससे कविता के मूल लक्ष्य सत्य शिव सुन्दर का कोई सीधा सबध नही दीखता है। फिर भी समस्या बहुत भयदायक नही है। सतह की बात और होती है गहराई मे गुरु गंभीर रहस्य छिपे होते है। समस्या की गहराई तक पहुचने वाली कविता सम्मान पाती है। धरती पर केवल कीड़े मकौड़े नही है। कविता का सबध सीधे आदमी से है। जिसके अन्दर युगो के सचित सस्कार है। इस लिए कवि-कर्म का यथोचित निर्वाह जन रुचि को उदात्त बनाने मे होता है। धरती की कविता वस्तुतः वह कविता है जो इंसान के सुख-दुख मे हँसती रोती है।

रामधारी सिंह दिनकर तो एक दम स्पष्ट कह चुके है—

व्योम कुजों की परि अयि कल्पने
आ उतर हँस खेल ले वन फूल मे
रेणुका हँसने लगे, जुगनू चलो
आज कूकें खण्डहरों की धूल मे।

सच है, आसमान मे उड़ कर कविता नही जी सकती। जिन्होने कविता को छायावाद से जोड़कर आसमान में उडाना चाहा था, उन्हें शीघ्र ही अपनी भूल पकड़ में आ गई।

सच्चाई यह है कि कवि मे यदि प्रतिभा और कठ का सम्मिश्रण है तो उसकी कविता का उदात्त स्वर आज जन बोध के धरातल पर मंच से उतर सकेगा और दम-खम के साथ जमेगा। घटिया किस्म की सामग्री प्रस्तुत कर जमने की प्रतिस्पर्धा केवल वे कर रहे हैं जिनकी स्तरीय सृजन-प्रतिभा चुक गई है या कभी यह प्रतिभा उनमें रही ही नही। जन रुचि को ही पूर्ण दोषी मानकर स्वयं को श्रेष्ठ कवि माने रहने का भ्रम-पालन गर्हित अहं का पोषण करना है।

आज भी गहरे भरे कवि सम्मेलनो मे जमने वाले भवानी प्रसाद मिश्र दिनकर सोनवलकर, नीरज, मयूख, रामकुमार चतुर्वेदी, रघुराज सिह हाडा, ब्रजेश चंचल, कुमार शिव, सोम ठाकुर, नन्द चतुर्वेदी, जगदीश सोलकी, दुष्यन्त कुमार आदि कवियों की कृतियाँ स्तर से नही गिरती। मच सम्राट नेपाली ने कभी अपनी कविता को स्तर से नही गिरने दिया था। क्या उनकी कविता मे शाश्वत मूल्य नही थे। ये कवि सम्मेलन की परपरा न पाते तो क्या इनकी कविता अब से अधिक शाश्वत होती? उत्तर सरल है। उस स्थिति मे बात कुछ और होती। निश्चित रूप से इनकी कविताएँ तब जिन्दगी से इतनी नहीं जुड़ पाती।

कवि यदि अपने कर्म के प्रति सजग है तो उसे मचो के बहिष्कार की आवश्यकता नही। जन रुचि के सस्कार का बीड़ा उठाया जाना चाहिये और यह कार्य समर्थ प्रतिभाओ को सम्पन्न करना चाहिए। कवि कर्म का यथोचित निर्वाह हुआ तो मचीय कविता मे भी शाश्वत मूल्य पलेंगे ही।

□

# वृक्षारोपण

□ 'प्रेम खकरधज'

वृक्ष शस्य श्यामला माँ वसुन्धरा का शृगार है।

जलाशय मे विकसित पद्मों का पराग शीतल जल की उर्मियों की चञ्चलता को दोलायमान करता हुआ, लौनी लतिकाओ के जाल को सहलाकर जब आम्र कुञ्जों मे प्रवेश कर नव आम्र-मञ्जरियों से चुहल व छेड़छाड़ करता आगे बढ़ता है तो मानव मन अनिर्वचनीय शीतल गन्ध का पान करता तन मन को कर्पूर चन्दन की शीतलता से आप्यायित कर अनूठे आनन्द में निमज्जि हो पूर्ण विश्रान्ति का अनुभव करता है। वृक्ष धरती की सज्जा है। सस्कृति के उत्स से लेकर आज तक कृषि एवं पशु-पालन प्रधान समाज में मानव जीवन पूर्णरूपेण वृक्षों पर आधारित रहा है। मानव और पशुओं को जीवन दान देने मे वृक्षो ने अपनी शीतल छाया, प्राणदा वायु, फल, अन्न, रस औषधियों का मुक्त हस्त से इतना दान दिया है कि वृक्ष और बादल दोनो ही परोपकार के पर्याय बन गये।

औद्योगीकरण के युग मे सम्पूर्ण विश्व को वायु प्रदूषण से बचाने का सबल और श्रेष्ठ उपाय वृक्षारोपण है। वर्षा, भूसंरक्षण, जलावन, औषध, भवन-निर्माण आदि के लिए वृक्षो की उपादेयता असन्दिग्ध है।

लेकिन मानव ने अपने स्वार्थ, अपनी अतृप्त तृष्णा की शान्ति के लिए शीतल छाया, सुस्वादुफल, सरस द्रव्य और औषधदाता वृक्षों के पैरो पर ही कुल्हाडी चलानी प्रारम्भ कर दी। वृक्ष घायल हुआ, रक्त निकला अग-अग क्षत विक्षत। उसके मौन प्रतिरोध, मूक चीत्कार को मानव का स्वार्थी मन न समझ सका। उसके प्राण दान के प्रार्थना पत्र को आरे से चीर दिया। मनुष्य हाथ मे चमचमाती धार वाली कुल्हाड़ी लेकर इन परोपकारियों का वध करने निकल पड़ा,

जिसमें वह अपनी निरर्थक आकाक्षाओं की तृप्ति कर सके, अपने जड जगत (सीमेण्ट, पत्थर, लोहा, विद्युत तार आदि) में लकडी को सम्मिलित कर सके, वृक्षों की लाशो से अपने लिए पलग, आलमारी सोफासेट, मेज-कुर्सियाँ बना सके।

वृक्षो पर किए गये अत्याचार से उनकी जननी माँ वसुन्धरा रो पड़ी, नदियाँ रोई, पशु और पक्षी रोये लेकिन मानव का वज्र हृदय द्रवित नही हुआ। उसकी कुठार की चमचमाती धार वृक्षों को धराशायी करती रही। मानव वृक्षों के बलिदान पर अपनी समृद्धि व सुख-सुविधाओं का महल खडा करता रहा। वृक्ष बदलते रहे, दरवाजे, खिड़कियाँ, पर्दे व सजावट के सामान में सूखे वृक्षो की तो बात ही अलग, कोमल और मासूम हरे भरे, उत्साह और जीवन्तता से भरे किशोर वृक्षों को भी मानव ने अपनी आकाक्षाओं का शिकार बनाकर असमय मे काल के गाल मे पहुँचा दिया।

परिणाम यह हुआ कि प्रकृति क्रुद्ध हो गयी। इस छोर से उस छोर तक उत्ताल गगनस्पर्शी लहरों से जूझते मकान, गलियाँ, बाजार, सेना के जवान, बाढ भयकर बाढ, तबाही, फसलें और पशु बरबाद, बंगाल, विहार, उड़ीसा, पजाब, हरियाणाउत्तर प्रदेश समूचा उत्तर भारत इस शताब्दी की भयकर बाढ की गिरफ्त मे। बाढ से जूझता वियतनाम, थाइलैण्ड, लाखो लोग बेघर, अरबों की सम्पत्ति का विनाश, लाखो मकान धराशायी, उलटती नौकाएँ, बाढ़ मे बहती बसें, हजारो गाँव बाढ़ की चपेट मे, नदियों की उत्ताल तरगों से होता भूक्षरण, नदियो के तल मे भरती मिट्टी, ससद मे बहस, विदेशी सहायता और न जाने क्या क्या? वृक्षों पर मानव द्वारा किए गए अत्याचारों के लिए प्रकृति द्वारा लिया गया भयकर प्रतिशोध। बादल, वृक्ष, नदी, धरती सभी ने मानव से खुलकर प्रतिशोध लिया। यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि इस दैवी आपदा के लिए मानव स्वय उत्तरदायी है।

वनो के निरन्तर कटते रहने से, वनों के साफ हो जाने से, भूमि का कटाव बढ जाने से, भूक्षरण के कारण नदी का पाट मिट्टी से, भरने लगा। जो नदी जीवन दायिनी, तृषित जनों को तृप्त करने वाली थी वृक्षों पर होने वाले अत्याचारों से क्रुद्ध नागिन की भाँति फुफकार उठी। बादल गर्जन-तर्जन कर रह-रह कर बरसते रहे। ऐसा लगता है, सभी सगठित होकर वृक्षो पर किये गये अत्याचारो का बदला ले रहे हो।

क्या इस दैवी आपदा का अन्त सम्भव है?

हाँ यदि मानव पुनः वृक्षों को जन्म देने, उनका सम्वर्द्धन करने, उन्हे पुष्पित, पल्लवित कर वृक्षों के प्रति किये गये दारुण अत्याचारों का प्रायश्चित करे। उनका सम्वर्द्धन होते ही सभी प्रसन्न होंगे।

वादल, पृथ्वी, नदी, जल, मानव से बदला न लेकर उसकी सेवा के लिए तत्पर होंगे।

कल्पना कीजिए।

श्वेत कमलो से भरे जलाशयों के किनारे हरी भरी घास के मखमली विछौनों पर कुलाचें भरते और पनघट से आती किसी शकुन्तला के आँचल से उलझते मृगशावक वृक्षों की सघन छाया में विश्राम करता गौओं का समूह आम्र-मन्जरियो की गमक, मन मे प्रणयोन्माद जगाती मौलश्री के सुमनों के सौरभ, सवेरे की धूप के वितान पर मोती और लाल की तरह जड़ें, प्रात झरे हर-सिगार के फूल, कुवारी आकाक्षाओं की भाँति करोंदों की झाड़ियों में विश्राम करते कोमल गात शशक, मानवीय मन की भाँति अम्वर के वक्षस्थल को चीर अनन्त की ओर उड़ानें भरती श्वेत वगुलो की पक्तियाँ, करोंदों की झाड़ी, पाकुर पुरइन, अशोक, आम, जम्वू, जम्बीर, नीम, वट, शिरीष, कणिकार, पीपल, वट, खेजडी, रोहिडा, शीशम, कुम्भट, जाल; सन्देडा, वकाइन, पार्किग, सोनिया, यूकिलिप्टस, अर्जुनवृक्ष, से घिरे भवन, ढाणियाँ, झोपड़े उन वृक्षो की शीतल छाया मे विश्राम करते मयूर समूह, शाला भवन के प्रागण मे घास के हरित मखतूलो पर विश्राम करते, अध्ययन करते, वहस मे तल्लीन छात्र समूह, एक जाल की आड मे अलगोंजे पर चिरमी बजाता बकरियों का ग्वाला, रोहिडे की छाया में धान का गट्ठर जमीन पर डाल झुमके से झुके कान के पीछे का पसीना, आँचल की बयार से सुखाती ग्राम्या। कितने जीवन्त, कितने उदात्त व आकर्षक दृश्य होंगे जो वृक्षारोपण के बाद दृष्टिगोचर होंगे। वह दिन कितना सुखमय होगा जब दृष्टि के इस छोर से उस छोर तक मानव के उल्लसित मन की भाँति पूर्ववत् हरियाली का सागर हिलोरें लेगा।

□

# दक्षिणी राजस्थान का बहुर्चचित मंदिर-अर्थूणा

□ रवीन्द्र डी. पण्ड्या

सन् १६७० मे मुझे अर्थूणा के प्राचीन स्मारकों मे लगभग एक-डेढ मास तक रहने का सुअवसर मिला। इस समय भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग भारत सरकार ने इन प्राचीन स्मारको के उत्खनन एव जीर्णोद्धार की शुरुआत ही की थी। एक डेढ माह के प्रवास के समय प्रायः यह देखा कि इन प्राचीन मन्दिरो मे इने-गिने लोग शिवालयों मे दर्शनार्थ आते थे। किन्तु जब भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने इन स्मारको के जीर्णोद्धार एव उत्खनन मे तेजी की तब इसी तेजी के साथ दर्शकों की भीड़ भी तेज गति के साथ बढती गई। वर्तमान मे यह स्थिति है कि अर्थूणा में जमा हो रही दर्शकों, पर्यटकों की भीड़ खजुराहो, मन्दिरो मे जमा हो रही भीड़ से कम नही। शिवालयो मे लटकते घण्टे की मधुर आवाज सूर्योदय के पूर्व से लेकर १० बजे रात्रि तक इस परिक्षेत्र मे गूजती रहती है। यह गूजती आवाज दर्शको की भीड एव शिवालयों की महत्ता के ज्वलत उदाहरण है।

मै आपको उस स्थान से परिचित करवाऊ जहा असख्य बेमिसाल मूर्तियां आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं, मौन निमन्त्रण दे रही है। इतिहासकार की गवेषणा के लिए, साहित्यकार की सृजन प्रेरणा के लिए, पर्यटकों के पर्यटन-विनोद के लिए एव चित्रकार को चित्रों द्वारा अपना दर्द प्रसारित करने के लिये।

बाँसवाडा से अनुमानतः ३० मील दक्षिण-पश्चिम मे अर्थूणा नामक प्राचीन कस्बा है। प्राचीन अर्थूणा नगर बागड के परमार राजाओं की राजधानी था। वर्तमान-कस्बा-प्राचीन नगर के भग्नावशेषों के पास बसा हुआ है। प्राचीन नगर के खडहर और कई मन्दिर अभी कस्बे के बाहर विद्यमान है, जिनमे सबसे पुराना मदिर मंडलेश्वर (मडनेश) का शिवालय है। इस मदिर को यहा के

परमार राजा मडलीक मडनदेव के पुत्र चामुण्डराज ने अपने पिता की स्मृति मे वि. स. ११३६ फाल्गुन सुदी ७ ई. स. १०८० तारीख ३१ जनवरी शुक्रवार को बनवाया था। उसके साथ एक मठ भी था। मन्दिर के मुख्य द्वार तथा कोट गिर गये है। मन्दिर के बाहर बहुत बड़ा नदी है जिसका सिर टूटा हुआ है। गुम्बद के भीतर तथा निज मन्दिर के द्वार आदि पर बड़ी सुन्दर कारीगरी का काम है। द्वार के दोनो तरफ नीचे ब्रह्मा, ऊपर विष्णु और सबसे ऊपर शिव की मूर्ति है। द्वार पर गणेश और उस पर लकुलीश की मूर्ति है जिससे अनुमान होता है कि यहाँ के मठाधीश पाशुपात सम्प्रदाय के कनफटे साधु रहे होगे।

निज मन्दिर मे शिवलिंग, पार्वती तथा उमा-महेश्वर की मूर्तिया है। मन्दिर के बाहरी ताकों मे भैरव, ताण्डव नृत्य करते हुए शिव और चामुण्डा की मूर्तियां है। यह शिव पचायतन मन्दिर था परन्तु इसके चारो कोनो के छोटे-मोटे मन्दिर नष्ट हो गये है। जिनके चिह्न मात्र अब अवशिष्ट हैं। इस मन्दिर के एक ताक मे सवत ११३६, फाल्गुन सुदी ७, इ॰ स॰ १०८० तारीख ३१ जनवरी शुक्रवार की एक बड़ी प्रशस्ति लगी है। इसमें वहाँ के कितने ही परमार राजाओ की वश परम्परा और उनके कार्यो का उल्लेख है। इस मन्दिर के सामने एक पहाडी पर भग्नप्राय चार शिव मन्दिर है, जिसके आस-पास गणेश, शिव, ब्रह्मा, विष्णु, नवग्रह, ताण्डव नृत्य करते हुए शिव, चामुण्डा, भैरव, दिक्पाल आदि की खडित मूर्तियां पडी हैं।

उक्त पहाड़ी के दक्षिण के कुछ दूर गमेला तालाब मे होकर पश्चिम मे जाने पर एक सुन्दर खुदाई वाला दो मजिला द्वार आता है जो उधर के मन्दिर समूह का मुख्य द्वार होना चाहिये, वह मन्दिर समूह "हनुमान मन्दिर समूह" के नाम से प्रसिद्ध है। उस समूह में एक हनुमान का, एक वराह का, एक विष्णु का और तीन शिव के मन्दिर हैं। विष्णु मन्दिर मे वशी वजाते हुए कृष्ण, ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा अठारह भुजाओं वाली विष्णु की त्रिमूर्ति, पार्वती एव पूतना आदि की मूर्तियां रखी हुई हैं। निकट ही पाषाण का बना हुआ एक कुण्ड है जिसके सामने नीलकठ का बडा मन्दिर है। उसमें नवग्रह, चामुण्डा और उमा-महेश्वर आदि की मूर्तिया रखी हुई है। निज मन्दिर मे शिवलिंग के पास पहुँचने के लिए नौ सीढ़ियाँ उतरनी पड़ती है। वहा शिवलिंग के अतिरिक्त पार्वती, गणपति और दो उमा-महेश्वर की मूर्तिया है। चातुर्मास मे यह मन्दिर जल से भर जाता है, हनुमानगढ़ी के मन्दिर समूह में यह सबसे बडा मन्दिर है। इसका तक्षण कार्य अत्यधिक सुन्दर है, इसके निकट एक और शिवालय है

जो जीर्णावस्था में है। उसके एक ताक मे परमार राजा चामुण्डराज के समय का आधा बिगड़ा हुआ वि. स. ११३७ ई. स. १०८० का शिलालेख था। जो इस समय अजमेर के राजपूताना म्यूजियम मे सुरक्षित है।

इसके निकट एक छोटे से मन्दिर मे हनुमान की एक विशाल मूर्ति है। उसकी चरण चौकी पर वि. सं. ११६५ ई. स. ११०८ का परमार राजा विजयराज के समय का ६ पक्तियों का लेख खुदा हुआ है।

यह हनुमान की मूर्ति या तो किसी अन्य मन्दिर से लाकर यहा खड़ी की गई है अथवा मन्दिर का द्वार किसी पुराने मन्दिर मे लाकर लगाया गया है ऐसा प्रतीत होता है।

यहा कई जैन मन्दिर भी थे। अब उनके पत्थर द्वार आदि ले जाकर दूर-दूर के गांवों मे जैनियों ने नये मन्दिर खड़े कर लिए है। वर्तमान अर्थूणा गाव का जैन मन्दिर भी पुराने जैन मन्दिरों के पत्थरो से बनाया गया है।

एक पहाड़ी पर के टूटे हुए जैन मन्दिर मे परमार राजा चामुण्डराज के समय के दो शिलालेख बिगड़ी हुई दशा मे मिले है, जिसमे से वि. स. ११५६ ई. स. १२०२ का और दूसरा भी उसी समय के आसपास का है। ये दोनों भी राजपूताना म्यूजियम अजमेर मे सुरक्षित है।

उक्त जैन मन्दिर के आस-पास कई दिगम्बर जैन मूर्तियां इधर उधर पड़ी है। इसके अतिरिक्त यहां कई मन्दिरों के भग्नावशेष विद्यमान हैं।

अर्थूणा की मूर्तिकला कई श्रेणियों मे विभाजित की जा सकती है।

सम्प्रदाय विशेष से सम्बद्ध मूर्तियां, दीवारों, आलो और मन्दिरों के ऊपरी भाग पर उत्कीर्ण परिवार, पार्श्व वाली देवी-देवताओ की मूर्तियां, देवताओ एव दिक्पालों आदि की मूर्तियां अत्यन्त ही सुन्दर एव सजीव है। इसके अतिरिक्त बाहरी या भीतरी दीवारों, खम्भों, छत एवं द्वारो आदि पर उत्कीर्ण, सुर-सुन्दरियों, अप्सराओ और नायिकाओ की मूर्तियां कला की दृष्टि से श्रेष्ठ हैं। अप्सरायें अनेक नृत्य मुद्राओं मे या देवताओ की सेविकाओ के रूप चित्रित है। उनके हाथ जुड़े हुए, तथा उनमें कमल, दर्पण, जलपात्र आदि वस्तुएँ पडी हुई है। सुर-सुन्दरियों को नायिकाओ से पृथक करना अत्यन्त कठिन है, क्योकि इनकी प्रतिकृतियां तथा हाव-भाव लगभग एक समान है। घरेलू तथा सामाजिक दृश्यों सहित तथा अनेक विषयों से सम्बन्धित धर्म-निरपेक्ष मूर्तिकला कुछ शृंगारिक मूर्तियो में अत्यन्त दुर्लभ सम्मिश्रण के साथ दिखायी पडती है।

हस्ति, वानर, अश्व कुत्ता या उनके मुख आदि अर्थूणा के सबसे अधिक लोकप्रिय और विशिष्ट-कला विषय है।

अर्थूणा की मूर्तिकला मे मानव शरीर का कामोत्तेजक पक्ष भी चित्रित है। मूर्तिकला सम्बन्धी यह विशेषता नीलकण्ठ महादेव के ऊपरी भाग पर एव उत्खनन से प्राप्त शिव मन्दिर मे अत्यधिक विकसित रूप से पाई जाती है। अर्थूणा की शृगारिक मूर्तियाँ सबसे अधिक यात्रियों को आकर्षित करती है। इन मन्दिरों का अवलोकन करते हुए खजुराहो सचमुच दर्शकों के ख्यालों मे आता है। अर्थूणा के ये मन्दिर खजुराहो की तरह ही अपनी विशेषता लिए है। कुछ लोगों का कथन है कि ये अपने समय के समाज के निम्न नैतिक स्तर की परिचायिका है। कुछ लोग इनकी अनेक सौन्दर्य शास्त्रीय या सास्कृतिक धार्मिक और आध्यात्मिक व्याख्याये करते है। कुछ इन्हे कामसूत्र मे वर्णित शृगारिक मुद्राओ का चित्रण मानते है। कुछ लोग यह विचार प्रकट करते है कि इनके दर्शन से अनियन्त्रित यौन-सुख से मुक्ति मिल जाती है तथा भक्त के हृदय की पवित्रता इस उपासना-गृह मे सरल हो जाती है। इसी के लिए मन्दिरों की बाहरी दीवारों पर शृगारिक मुद्राएँ अकित की गई है। अर्थूणा की प्रणय क्रीड़ा वाली मूर्तियो से यह भी स्पष्ट है कि उस समय समाज मे सेक्स का एक विशिष्ट स्थान था और यौन भावनाओं मे कोई बुराई नही मानी जाती थी एवं उन्हें धर्म की ओर से मान्यता प्राप्त थी।

अर्थूणा स्मारको तक पहुँचने हेतु राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात तीनो राज्यो के यात्रियों के लिए मार्ग जुडा हुआ है। गुजरात से आने वाले यात्रियो के लिए दाहोद से भूखिया कस्बा, भूखिया से अर्थूणा पहुचा जा सकता है। मध्य प्रदेश से आने वाले यात्रियों के लिए रतलाम से बाँसवाडा, बाँसवाड़ा से अर्थूणा के लिए यातायात की सुविधा है। राजस्थान के यात्रियों के लिए उदयपुर से डूगरपुर, डूगरपुर से खडगदा-गलियाकोट मार्ग होते हुए अर्थूणा आसानी से पहुँचा जा सकता है।...आप वहाँ पधारें, लेखक का आमत्रण है।

## लेखक सम्पर्क

भगवतीलाल व्यास—लोकमान्य तिलक टीचर्स कालेज, डबोक (उदयपुर)
जगदीश प्रसाद सैनी—रा. उच्च मा. वि. दाँता रामगढ़ (सीकर)
भगवती प्रसाद गौतम—रा. उ. मा. वि. भवानी मण्डी (झालावाड)
भंवरलाल नागदा—प्रा. वि. सुआवतो का गुड़ा (उदयपुर)
रामदत्त शर्मा—उप जिला शिक्षाधिकारी, भरतपुर
अर्जुन अरविन्द—काली पल्टन रोड, टौंक
अब्दुल मलिक खान—प्रेस रोड, सिंधी कालोनी, भवानी मडी (झालावाड)
ओंकार मेहता—रा. उ. मा. वि., प्रतापगढ़
जितेन्द्र—श्री गोदावत जैन गुरुकुल, छोटी सादडी (चित्तौडगढ़)
सत्या भार्गव—श्रीराम उ. मा वि. कोटा
सीताराम स्वामी—सेठ वशीधर जालान रा. मा. वि., रतनगढ़
चन्द्रदान चारण—भारतीय विद्या मदिर रात्रि उ. मा. वि. बीकानेर
श्याममनोहर व्यास—रा. मा. वि. भानदा (उदयपुर)
(श्रीमती) कमला अग्रवाल—रा. बा. उ. मा. वि. नाथद्वारा (उदयपुर)
अचलचन्द जैन—सहायक परियोजना अ., प्रौढ शिक्षा, जालोर
विद्या सागर राय—रा. महात्मा गाँधी उ. मा. वि. जोधपुर
रूपनारायण काबरा—रा. उ. मा. वि. जोबनेर (जयपुर)
वासुदेव चतुर्वेदी—उ. मा. वि निम्बाहेडा (चित्तौडगढ़)
श्रीमाली श्रीवल्लभ घोष—सुगन्ध गली, ब्रह्मपुरी, जोधपुर
चतुर कोठारी—कोठारी सदन, बडा पाडा, राजसमद (उदयपुर)
रवीन्द्र डी. पण्ड्या—रा. मा वि. खडगदा, (डूंगरपुर)
श्रीनन्दन चतुर्वेदी—रा. मा. वि. मोठपुर, अटरू, (कोटा)
प्रेम चक्रधज—रा. मा. वि. सिणधरी (बाड़मेर)

गोपाल प्रसाद मुद्गल—उप जिला शिक्षाधिकारी डीग (भरतपुर)
दिलीप सिंह चौहान—रा. मा. वि. साकरोदा, गिर्वा (उदयपुर)
निशान्त—द्वारा. डी. राज पेन्टर, पीली वगा, (श्री गगानगर)
रमेश गर्ग—रा. उ. मा. वि. निम्बाहेड़ा (चितौड़गढ़)
चुन्नी लाल भट्ट—रा. मा. वि. जेठाना, (डूंगरपुर)

□□

## शिक्षक दिवस प्रकाशन
### (संपूर्ण सूची)

1967 : 1. प्रस्तुति (कविता), 2. प्रस्थिति (कहानी), 3. परिक्षेप (विविधा), 4. सालिक ए गोहर (उर्दू), 5. वार की दावत (उर्दू)

1968 : 6. कैसे भूलूं (संस्मरण), 7. सन्निवेश (विविधा), 8. वामाने बागबां (उर्दू)

1969 : 9. प्रस्तुति-2 (कविता), 10. बिम्ब-बिम्ब चांदनी (गीत), 11. प्रस्थिति-2 (कहानी), 12. अमर चूनड़ी (राजस्थानी कहानी), 13. यदि गांधी शिक्षक होते (निबन्ध), 14. गांधी-दर्शन और शिक्षा 15. सन्निवेश-दो (विविधा)

1970 : 16. सूखा गांव (गीत), 17. खिड़की (कहानी), 18. कैसे भूलूं-दो (संस्मरण), 19. सन्निवेश-तीन (विविधा)

1971 : 20. प्रस्तुति-3 (कविता), 21. प्रस्थिति-3 (कहानी), 22. सन्निवेश-4 (विविधा)

1972 : 23. प्रस्तुति-4 (कविता), 24. प्रस्थिति-4 (कहानी), 25. सन्निवेश-5 (विविधा), 26. माळा (राजस्थानी)

1973 : 27. धूप के पंखेरू (कविता), 28. खिलखिलाता गुलमोहर (कहानी), 29. रेजगारी का रोजगार (एकाकी), 30. अस्तित्व की खोज, (विविधा), 31. जूनां ग्रेली : नुवां बेली (राजस्थानी विविधा)

1974 : 32. रोशनी बांट दो (कविता) सं. रामदेव आचार्य, 33. अपने आस-पास (कहानी) स. मणि मधुकर, 34. रङ्ग रङ्ग बहुरङ्ग (एकाकी) स.

डॉ० राजानन्द, 35. आंधी अर आस्था व भगवान महावीर (दो राजस्थानी उपन्यास) स. यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र', 36. बारखड़ी (राजस्थानी विविधा) स. वेद व्यास

1975 : 37. अपने से बाहर अपने में (कविता) स० मगल सक्सेना, 38. एक और अन्तरिक्ष (कहानी) स० डॉ० नवलकिशोर, 39. संभाळ (राजस्थानी कहानी) स० विजयदान देथा, 40. स्वर्ग-भ्रष्ट (उपन्यास) भगवती प्रसाद व्यास, स० डॉ० रामदरश मिश्र, 41. विविधा स० डॉ० राजेन्द्र शर्मा

1976 : 42. इस बार (कविता) सं० नन्द चतुर्वेदी, 43. सकल्प स्वरों के (कविता) स० हरीश भादानी, 44. बरगद की छाया (कहानी) स० डॉ० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, 45. चेहरों के बीच (कहानी व नाटक) स० योगेन्द्र किसलय, 46 माध्यम (विविधा) सं० विश्वनाथ सचदेव

1977 : 47. सृजन के आयाम (निबन्ध) सं० डॉ० देवी प्रसाद गुप्त, 48. बयों (कहानी व लघु उपन्यास) स० श्रवण कुमार, 49. चेते रा चितराम (राजस्थानी विविधा) सं० डॉ० नारायण सिंह भाटी 50. समय के सन्दर्भ (कविता) सं० जुगमन्दिर तायल, 51. रंग वितान (नाटक) सं० सुधा राजहंस

1978 : 52. अंधेरे के नाम सन्धि पत्र नहीं (कहानी संकलन) सं० हिमांशु जोशी, 53. लखाण (राजस्थानी विविधा) सं० रावत सारस्वत, 54. रचेगा संगीत (कविता सकलन) सं० नन्दकिशोर आचार्य, 55. दो गाव (उपन्यास) मुकारब खान आजाद, सं० डॉ० आदर्श सक्सेना, 56. अभिव्यक्ति की तलाश (निबन्ध) स० डॉ० रामगोपाल गोयल

1979 : 57. एक कदम आगे (कहानी सकलन) सं० ममता कालिया, 58. लगभग जीवन (कविता संकलन) स० लीलाधर जगूड़ी, 59. जीवन यात्रा का कोलाज नं. ? (हिन्दी विविधा) स० डॉ० जगदीश जोशी, 60. कोरणी कलम री (राजस्थानी विविधा) स० अन्नाराम सुदामा, 61 यह किताब बच्चों की (बाल साहित्य) सं० डॉ० हरिकृष्ण देवसरे

1980 : 62. पानी की लकीर (कविता सकलन) स० अमृता प्रीतम, 63. प्रयास (कहानी सकलन) स० शिवानी, 64. मंजुषा (हिन्दी विविधा) सं० डॉ० राजेश [illegible] अतसम्प 'आखर' (राजस्थानी विविधा) स० डॉ० नृसिंह

राजपुरोहित, 66. खिलते रहें गुलाब (बाल साहित्य) सं० जयप्रकाश भारती

1981 67. अपने से परे (कहानी संकलन) सं० मन्नू भण्डारी, 68. अंधेरों का हिसाब (कविता संकलन) सं० सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, 69. वन्देमातरम् (हिन्दी विविधा) सं० डॉ० विवेकीराय, 70. सिरजण (राजस्थानी विविधा) सं० नेर्जासिंघ जोधा, 71. एक दुनिया बच्चों की (बाल साहित्य) सं० पुष्पा भारती।

० ० ०

# राजस्थान के शिक्षक दिवस प्रकाशन

## कुछ सम्मतियां

राजस्थान शिक्षा विभाग द्वारा शिक्षक दिवस प्रकाशन योजना के अन्तर्गत राज्य के सृजनशील शिक्षक साहित्यकारों की चार कृतिया १९८० वर्ष की सार्थक उपलब्धियां हैं।

—नव भारत टाइम्स

सग्रह (पानी की लकीर) मे सभी कविताएं, कविता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, यद्यपि कुछ कविताओं को पढ़कर कविता जैसा कुछ नही लगता किन्तु कलात्मक प्रयास को नकारा भी नही जा सकता।

—नव भारत टाइम्स

'प्रयास' कहानी लेखकों का उत्तम प्रयास है तथा शिवानी' का सम्पादन वक्तव्य नव लेखको को गुरु-प्रेरणा का प्रयास है।

—नव भारत टाइम्स

'मजूषा' मे सकलित अधिकाश रचनाएं एक ओर शिक्षकों की जीवन-पीडा तथा घुटन प्रस्तुत करती हैं तो दूसरी ओर सामाजिक मूल्यों मे उनकी आस्था, व्यवसाय के प्रति उनकी निष्ठा और शिक्षार्थियों के गिरते स्तर के प्रति चिन्ता तथा जागरूक उत्तरदायित्व उभारती है।

—नव भारत टाइम्स

सकलन (खिलते रहे गुलाब) मे एक तरफ तो ऐसी रचनाए हैं जिनसे बच्चों को चरित्र निर्माण की प्रेरणा मिलेगी तो दूसरी तरफ ऐसी रचनाए भी है जिनसे उनका स्वस्थ मनोरजन भी होगा।

—समाज कल्याण, दिल्ली

रचनाओं की विषय वस्तु परम्परागत होते हुए भी बालको के मानसिक विकास मे सहायक हो सकती है। सभी रचनाओ मे विशेषकर कहानियो मे अनुभव की उष्णता विद्यमान है। सकलन निश्चत ही नन्हे मुन्ने पाठकों के लिए उपयोगी है।

—समाज कल्याण, दिल्ली

सग्रह की अधिकतर कविताएं जिन्दगी के फोटो हैं। इनमें किसी प्रकार के छदम् आदर्श की प्रस्तावना नही है।

—समाज कल्याण दिल्ली

इस संग्रह की अधिकाश कविताएं एक ऐसे आदमी की छटपटाहट को व्यक्त करने का प्रयास है जो निरन्तर अपरिचित एवं अमानवीय होते जा रहे परिवेश से पूर्णतया संपृक्त है। इस संपृक्ति के कारण ही राजस्थान के ये सृजनशील अध्यापक अपने आस-पास के परिचित सदर्भ को सर्जनात्मक आयाम प्रदान कर पाए है।

—समाज कल्याण, दिल्ली

जिस तरह सग्रह की रचनाओं की सवेदना जिन्दगी से निष्पन्न है, उसी तरह इनकी सरचना भी। कविताओं की संरचना में कोई जटिलता नही है। लगभग सभी कविताओं मे एक अनगढ़ता मौजूद है। यह अनगढ़ता ही इन कविताओं को विशिष्ट बनाती है।

—समाज कल्याण, दिल्ली

राजस्थान के शिक्षा विभाग ने विगत कुछ वर्षों से शिक्षक दिवस पर राज्य के शिक्षक साहित्यकारो की रचनाए पुस्तक रूप मे छापने की एक स्वस्थ परम्परा प्रारंभ की है। इस योजना से अनेक सृजनशील साहित्यकारों को साहित्यिक क्षेत्र मे अपना स्थान बनाने के लिए भी प्रेरणा तथा प्रोत्साहन मिला है।

—दैनिक हिन्दुस्तान

'पानी की लकीर' कुल मिलाकर यह एक अच्छा सकलन है और उसमे सम्मिलित कवियों की क्षमता का परिचायक है।

—दैनिक हिन्दुस्तान

'अतस रा आखर' मे आरम्भ से अन्त तक राजस्थानी की ही छटा मिलती है।

—दैनिक हिन्दुस्तान

आज भी समाज मे अध्यापक से ही आदर्श जीवन की अपेक्षा की जाती है, अत· इन कहानियों में से अधिकाश का स्वर आदर्श और सुधारवादी रहा है तो उसे अस्वाभाविक नही माना जा सकता।

—प्रकर, दिस०, ८०

जयप्रकाश भारती ने अध्यापकों की इस अनमोल भेंट को सम्पादित कर बच्चों के सामने प्रस्तुत किया है, सम्पादक का कहना है जब-जब बच्चे इसे पढ़ेंगे मनोरंजन होने के साथ उनको कही कोई रोशनी की लकीर भी दिखाई देगी।

—दैनिक हिन्दुस्तान

सरकारी महकमो ने इतना निराश किया है कि जब हम राजस्थान के शिक्षा विभाग के प्रकाशनों पर नजर डालते हैं तो एक बारगी आश्चर्य में ही डूब जाते हैं।

—दैनिक राजस्थान पत्रिका

संकलन (पानी की लकीर) की अधिकाशतम कविताएं जैसा कि कहा—जीवन की विसगतियों, दैनिक जीवन की आपा-धापी और उधेड़बुनों को व्यक्त करती हैं। इनमे ज्यादातर प्रलाप लगती हैं, कविता कम।

—इतवारी पत्रिका



## विवेकी राय

जन्म : सन् २४, सोनवानी, गाजीपुर
शिक्षा : एम. ए., पी-एच. डी०
सेवा : प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर, उ० प्र०

**कृतियाँ**

काव्य : अर्गला, रजनीगंधा
कहानी : जीवन परिधि, नयी कोयल, गूगा जहाज
उपन्यास : बबूल, पुरुष पुराण, लोकऋण, श्वेतपत्र
ललित निबन्ध : फिर बैतलवा डाल पर, केकहल चुनरी रंगाल, जलूस रुका है, मगद : भागीरथी माटी
रेखाचित्र : गंवई गंध गुलाब
समीक्षा : त्रिधारा
निबन्ध : किसानो का देश, गाँवों की दुनिया अध्ययन-आलोक
शोध प्रबंध : स्वातन्त्र्योत्तर, हिन्दी कथा साहित्य और ग्राम जीवन
सम्पादन : भोजपुरी निबन्ध, और प्रस्तुत कृति
सर्वेक्षण : 'कल्पना' के २५ वर्ष
सम्पर्क : बड़ी बाग, गाजीपुर, उ०प्र०-२३३००१